

गौस्वामी तुलसीदास कृत

अयोध्याकाण्ड रामायण ।

सम्पादक

अध्यापक रामरत्न व पं० चन्द्रहंस शर्मा

प्रकाशक

रत्नोभ्रम-आगरा ।

मुद्रक-पं० ब्रजनाथ शर्मा

कीरोनेशन प्रेस, आगरा ।

पृथीयादिति

११००

सं० १९८१ वि०

धन्यवाद ।

गत वर्ष अयोध्याकाण्ड का यह संस्करण प्रकाशित किया गया था । अध्यापक जी ने एक विस्तृत भूमिका में अयोध्याकाण्ड सम्बंधी चरित्रों के चरित्र-विश्लेषण द्वारा रामायण-काल की सभ्यता का रहस्य भली प्रकार समझाया है । और भी जानने योग्य बातों पर प्रकाश डाला है । आवश्यकिय टिप्पणियों से यह संस्करण बहुत ही उपयोगी हो गया है । शिक्षा-विभाग युक्त प्रदेश ने अपनी उदार सम्मति द्वारा इस संस्करण को अपनाया है; इसके लिये मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ । सर्वसाधारण के जानने के लिये कमेट्री की सम्मति नीचे प्रकाशित की जाती है ।

मिति शुद्ध श्रावण =

मैनेजर

सं० १९७७ विक्रमाब्दः ।

रत्नाश्रम-आगरा ।

A COPY OF THE RESOLUTION PASSED BY THE
FIRST GENERAL MEETING OF THE TEXT-

BOOK-COMMITTEE, U. P.

Held on 19th March 1920.

Letter No. G. $\frac{1250}{19-19}$ Dated Allahabad 19-4-20

Name of Publication	Recommendation
1. Tulsī Dass Ajodhia Kānd Ramayan edited by Pt. Ram Ratan Adhyapak and Pt. Chandra Hans Sharma, Ratan Ashram, Agra.	Recommended as an approved edition of Ajodhi Kand wherever the book is now prescribed or recom- mended (Normal School Training Classes and L. C. Classes,)
Price -/12/-	

ॐ उपोद्घात ॐ

रामायण क्या है ?

नवीन भारत के लिये, आर्य भारत जो अतुलनीय और अप्रतिम मीरास (पैत्रिक-सम्पत्ति) छोड़ गया है—जिस के बल से अवनति के गहरे आवर्त में पड़ी हुई दीन-हीन-हिन्दू जाति आज भी संसार की वैभवसम्पन्न जातियों के सामने साभिमान सिर उठा सकती है—जिस के कारण अति जीर्ण-शीर्ण वृद्ध भारत मरते मरते भी अपने दिव्य तेज से नयी मायावी-सभ्यता के चकाचौंध को एक दम रूखा कर देता है—जिस के प्रभाव से आज भी संसार के पवित्र और निष्कपट हृदयकोश अनुपम-रत्नों से भरे पड़े हैं। वह आर्य जाति का रामायण नामक राष्ट्रीय कोष है। इस प्राचीन कोष को सर्वाङ्गपूर्ण सम्पत्ति, जैसे जैसे व्यय हुई, बढ़ती ही चली गई। इस कोश में इतिहास भी है और काव्यतत्व भी, निगमागम सम्मति है, और लौकिक चरित्रों की इयन्ता भी। किसी राष्ट्र की सच्ची सम्पत्ति उस देश का प्राचीन और अर्वाचीन साहित्य ही है, न कि ईंट पत्थर। साहित्य से आदर्श मिलता है, आदर्श से चरित्र-गठन होता है। चरित्र से स्वावलम्बन, धैर्य, वीरता आदि मनुष्योचित गुण उत्पन्न होते हैं।

इन्हीं गुणों से व्यक्तियों के हृदय बाँधे जाते हैं जिससे समाज-संगठन होता है। इस प्रकार के समाजों की आत्मीयता का एकीकरण,

अथवा यों कहिये 'नार क्षरि-न्यायेण' सम्मिलन, राष्ट्र-निर्माण का हेतु होता है--उत्कृष्ट-राष्ट्र-निर्माण, उत्कृष्ट आदर्श पर निर्भर है। इस प्रकार के आदर्श उत्कृष्ट साहित्य से ही मिलते हैं।

हमारा रामायण नामक महाकाव्य ऐसे ही उच्च आदर्शों का भण्डार है। रामायण के आदर्श दूसरी जातियों की सम्पत्ति को हड़प करने तथा उन पर प्रभुता जमाने के लिये किसी प्रकार का आयोजन वा संगठन नहीं कराते, बरन मनुष्योचित पवित्र प्रेम वा गृहधर्म का उपदेश देते हैं। वह पिता पुत्र में, पति पत्नी में, भाई भाई में, धर्म और प्रेम का सम्बन्ध कराते हैं। 'पिता की आज्ञा मानना, भाइयों का आत्मत्याग, आदर्श पति-पत्नीत्व, राजा प्रजा के पारस्परिक सम्बन्ध व कर्त्तव्य' यही रामायण के महाकाव्य का मुख्य विषय है।

इस परम पवित्र साहित्य-सरित का स्रोत श्री बाल्मीक जी की आजस्विनी लेखनी से प्रसूत हुआ है। अनन्त काल से लेकर आज तक, इस विशाल-धारा से छोटा मोटा प्रवाह ले, अनगणित व्यक्तियों ने अनेक नद नदीसरो की रचना की है। इसी सिलसिले में प्रातःस्मरणाय गो० तुलसीदास ने भी एक परम सुन्दर दिव्य मानसरोवर की रचना की है, इसका नाम राम-चरित-मानस है, यथा:—

'राम-चरित-मानस यहि नामा। सुनत श्रवण पाइय विश्रामा ॥
मनकरि विषय-अनल-वनजरई। होय सुखी जो यहि सर परई ॥
सुमति भूमि थल हृदय अगाधू। वेद-पुराण उदाधि, घन साधू ॥
वरसिंह राम सुयश बर बारी। मधुर मनोहर मंगल कारी ॥

लीला सगुण जो कहहिं वखानी । सोई स्वच्छता कर मल हानी ॥
 प्रेम भक्ति जो बरनि न जाई । सोई मधुरता शीतलताई ॥
 सो जल सुकृत-शालि हित होई । राम भक्त-जन जीवन सोई ॥
 मेधा महिगत सो जल पावन । सिमित श्रवण मगु चलेउ सुहावनु
 भरेउ सो मानस सुतल धिराना । सुखद शीत रुचि चारु चिराना ॥

सुठि सुन्दर संवाद वर विरचेउ बुद्धि विचार ।

तेइ इहि पावन सुभग सर घाट मनोहर चारि ॥

सप्त प्रबन्ध सुभग सोपाना । ज्ञान नयन निरखत मन माना ॥

इस प्रकार सुमति भूमि में.....आदि २ गोस्वामी जी ने मानस-सर की रचना की है । इस सर के सात सोपान (काण्ड) हैं । इस तालाब का वर्णन बाल काण्ड में तुलसीदास जी ने बड़ी उत्तम रीति से किया है । गोस्वामी जी के शास्त्रीय विचार, लौकिक व्यवहारों की अभिज्ञता, भाषा पर अटल अधिकार और अपूर्व कवित्व शक्ति के नवीन आविष्कार, इस रचना को ऐसा भाव्य बना चुके हैं कि “मिरा अनयन नयन बिनु बाणी” ही कहना पड़ता है ।

रामायण का सम्मान वा पद ।

जो हो, राम-चरित-मानस हिन्दू-जाति की अमूल्य सम्पत्ति, धार्मिक, राजनैतिक तथा सामाजिक शिक्षाओं की भाण्डार, मानसिक तथा आत्मिक आनन्द का समुद्र और काव्य-गुणों का अनुपम आगार है ।

साधारण अपराभ्यासियों से लेकर धुरंधर विद्वानों तक नित नयी श्रद्धा के साथ इसका पाठ करके आनन्द प्राप्त करते हैं। रामायण के लिये हिन्दू-समाज में जितना आदर है, उस के लिये हृदय में जितना उंचा स्थान है, अन्य किसी ग्रंथ के लिये नहीं। इस ग्रंथ के छोटे और बड़े सैकड़ों प्रकार के नित नये संस्करण निकले और निकल रहे हैं, परन्तु इन संस्करणों में

अनेक दोष

भी आगये हैं। जहाँ तहाँ लोगोंने चपक कथाएँ गढ़ कर चिपकादी हैं। चिपकाने वालों का कुछ भी अभिप्राय रहा हो, परन्तु तुलसीदास जी की कविता से यह नवीन गदंत ज़रा भी जोड़ नहीं खाती। ऐसा मालूम पड़ता है कि सोने के सितारों में किसी ने कंकड़ी मिलादी ही—

दूसरी बात खटकने वाली यह है कि कुछ अहम्मन्य पंडितों ने तुलसीदासजी की भाषा शुद्ध करने का प्रयास किया है—भाषा के जीवन-मूल प्रचलित शब्दोंको शुद्ध संस्कृत बनाया गया है। व्रजभाषा के 'स' 'व' को शुद्ध करके 'श' 'व' किया गया है। कहीं २ सुहाविरों की भी ऐसी ही छल्लि छाल्ल हुई है। रामायण की

भाषा

में अवधी और बैसबाड़ी शब्दों और सुहाविरों का ही प्रायः आहुत्य है। जैसे तो इन्होंने हर भाषा के शब्दों को मोड़ मोड़ कर

इच्छानुसार बना डाला है, परन्तु, वह इन की कविता के बेजोड़ नगीने हैं।

‘ करब ’ ‘ जानब ’ ‘ भरब, ’ ‘ लुनिय ’ ‘ होउब ’
 ‘ कहव ’ ‘ कोहाव ’ ‘ गरीब ’ ‘ निबाजू ’ ‘ साहिब ’ ‘ ठाहर,
 ‘ फुर ’ ‘ ढरके, ’ ‘ खुमारू ’ ‘ गुदारा ’ ‘ बाट परै, ’ ‘ कठौता ’
 ‘ बारह बाट ’ ‘ बियानी, ’ ‘ रजाई ’ आदि ग्रामीण प्रयोग भी
 इनकी कविता में उच्च पद को प्राप्त हुए हैं। जहाँ पर जिस—

रस

का वर्णन आया है, उसका सजीव चित्र खड़ा कर दिया है। राम-बन-गमन, सुमन्त के प्रत्यागमन और भरत के अयोध्या-प्रवेश-स्थल पर सचमुच “ करुणारस-कटकई ” अयोध्या में आकर उतरती है। ससैन्य भरत के बनागमन का समाचार पाने पर ‘निषाद राज और लक्ष्मण के व्याख्यान’ वीरता की मूर्ति हैं। वशिष्ठ जी का भरत को समझाना शान्ति का सर्वोत्तम पाठ है। भृङ्गार का सर्वोत्तम वर्णन होने पर भी वह भक्ति और प्रेम का उद्गम हो गया है, स्त्री बच्चों के सम्मुख भी किसी व्याख्याता को कभी ज़राभी संकोच करने की जरूरत नहीं पड़ती। तुलसीदास जी ने पुराण और इतिहास सम्बन्धी विचारों के अतिरिक्त वेदान्त आदि शास्त्रीय गूढ़ विचारों को जिस खूबी से दर्शाया है, उससे बढ़कर लौकिक विचारों के चित्र खींचने में सिद्ध-हस्तता दिखाई है। इनकी मनन शक्ति, स्मरणशक्ति और निरीक्षण शक्ति अत्यन्त तीव्र और बुद्धि बड़ी ही कुशाम थी। जो—

उपमाएँ

इन्होंने ने कविता में घटित की हैं, वह इस का स्पष्ट प्रमाण हैं। रूपक घटाने में वह अद्वितीय कवि थे। कहीं २ इनके रूपक शुद्ध, कहीं २ उत्प्रेक्षा, उपमा तथा अन्य अलंकारों से संकरित हैं। अन्य अलंकारों का भी स्थान २ पर प्रयोग किया है। जो साहित्य-गवेषणा करने वालों के मनन करने योग्य है। यमक और छेकानुप्रासों पर अधिक जोर नहीं दिया है। इस महाकाव्य में विविध प्रकार के छंदों का प्रयोग न करके केवल—

दोहा और चौपाई

नामक मात्रा वृत्तों से काम लिया है, कहीं २ हर गीतिका व गीतिका छन्द भी आए हैं। अस्तु काव्य-सम्बन्धी विशेष विवेचन तो इस छोटी सी भूमिका में नहीं हो सकता। ऐसी विवेचना का नमूना श्रीयुत मिश्रबंधुकृत हिन्दी के इतिहास में:—

“ जे पुर ग्राम बसहिं मग माहीं ।
तिनहिं नाग-सुर-नगर सिहाहीं । ”

आदि ४ चौपाइयों के काव्य सम्बन्धी विश्लेषण में देखिये। अब हम तुलसीदासजी के चरित्र-चित्रण की ओर चलते हैं—पर इतना बताये देते हैं कि ऊपर जिन २ बातों की ओर संकेत किया है—सम्पूर्ण रामायण से सम्बंध रखती हैं; परन्तु मुख्य लक्ष्य—

अयोध्या काण्ड

ही की ओर रहा है—यह काण्ड रामचरित मानस का मेरुदण्ड है अन्य काण्डों से इसकी रचना बहुत ही बढ़ कर है। श्रीयुत मिश्र वन्धुओं ने नवरत्न पृष्ठ ४६ में लिखा है:— “अयोध्या काण्ड की रचना केवल भाषा साहित्य की ही नहीं दरन संसार के समस्त साहित्यों की रत्न है। ऐसी मनोमोहिनी-कविता हमने किसी भाषा में नहीं देखी इस काण्ड को उलटते ही जान पड़ता है कि मानो पाठक आनन्द सागर में निमग्न हो जाता है। अलौकिकानन्द देने वाली और सुन्दर काव्य की इतनी उत्तम और प्रचुर सामग्री किसी अन्य ग्रंथ में नहीं।” यह काण्ड राम जी के राज तिलक की तैयारी से प्रारंभ होता है, मंथरा कैकेई के द्वारा रस भंग कराती है। राम बन को जाते हैं और दशरथ सुरपुरको। भरत ननिहालसे लौट कर राम को मनाने जाते हैं। राम-भरत समागम होता है। भरत पादुका लेकर लौट आते हैं। राज्यासन पर खड़ाऊं रखी जाती हैं। भरत नंदिग्राम में तप करते हैं और मंत्री राजकाज। यही इस काण्ड का कथानक है।” सब से प्रथम हम प्रधान नायक—

रामचन्द्र जी

की ओर अपने पाठको का ध्यान आकर्षित करते हैं श्री वाल्मीकि जी ने रामचन्द्र जी के असाधारण गुणों का कोई दो पृष्ठ में वर्णन किया है। तुलसीदास ने रामचरित्र का निष्कर्ष “प्रसन्नता या न गता-भिषेकतः” श्लोक द्वारा अयोध्या काण्ड के प्रारंभ ही में कह दिया है। अभिषेक के समाचार पाकर जिसके चहरे पर प्रसन्नता के चिन्ह नहीं

और उत्तेजित स्वभाव उन्हें दूसरी ओर बहा लेगया। समझे कि राज्य मद् से अंधे होकर भरत ने राम पर चढ़ाई करदी, वह स्वार्थवश पुराने प्रेम को भूल गये। वस, एक बड़ा भारी भड़काने वाला नीति और ऐतिहासिक तत्वों से भरा हुआ व्याख्यान दे डाला। व्याख्यान बड़ा ही प्रभावशाली और वीरोचित था। किसी मनुष्य का हृदय उसे सुनकर उत्तेजित हुए बिना नहीं रहता। परन्तु राम का गंभीर हृदय इनकी युक्तियों और उत्तेजनाओंसे जराभी विचलित नहीं हुआ। लक्ष्मण व्याख्यान देते हुए समझते जाते होंगे कि मेरी प्रवृत्त और निष्कपट युक्तियों का भाई समझे रहे हैं; शीघ्रही भरत से युद्ध करने की आज्ञा मिली जाती है। परन्तु सरल-हृदय राम धीरे से कहते हैं:—

“ कहीं तात तुम नीति सुहाई। सचते कठिन राज-मद् भाई॥
जो अँचवत मातहि नृप तेई। नाहिन साधु सभा जेहि सेई॥
सुनहुँ लखन भल भरत सरीखा। विधि प्रपंच महुँ सुना न दीखा॥

‘ भरतहिं होइ न राज-मद् विधि हरि हर पद पाय ॥
कवहुँ कि काँजी-सीकरनि छारि-सिन्धु विनसाय ॥”

आदि अनेक वाक्यों से पता चलता है कि भाई की कितना विश्वास था। वह भरत-स्वभाव की स्थिरता को कहाँ तक समझे हुए थे कि हर-हरि और विधि-पद से भरत को राजमद् नहीं हो सकता। इस कारण राम के चित्त में अनास्थिरता नहीं हुई, हुई तो केवल इसलिये कि, प्यारे भरत, प्रेम-वस लौटाने या साथ चलने का हठ न करें,

यहाँ तो कुछ ठिकाना नहीं, सब मामला बिगड़ जायगा । जब भरत मने आये तो राम, प्रेम में ऐसे विह्वल हो गये:—

“ उठे राम अति प्रेम अधीरा ।
कहुँ पट कहुँ निषंग धनुतीरा । ”

राम का हृदय शील, संकोच और दयालुता से कूट २ कर भरा प्रा है । जब राजा ने राज्यभार देने का आयोजन किया तो इनको ल में बड़ा ही संकोच हुआ । चारों भाई, साथ २ खेलते, कर्णबोध शोपवीत, विवाह साथ २ हुआ ‘परन्तु विमल वंश में यह ही अनु-
चित है ’ ‘अनुज विहाय बड़ेहि अभिपेकू ।’ नीति और लोक उचित ममें या अनुचित, शास्त्र विधि कहे या निषेध, पर राम जी का स्वा-
त्यागी हृदय तो, इसे बिल्कुल अनुचित समझता है वह सोचते हैं
ब्र भाई एक से, क्यों किसी की हकतलेफी हो अथवा छोटे बड़े किसी
से किसी एक को राजा बना देना चाहिये, बड़े ही को क्यों !

यही क्यों, जब राजभवन में दशरथ बेहोश पड़े हुए थे, उनकी शा बहुत ही करुणा-जनक थी, राम ने क्रोधित कैकई से पूछा ‘महा-
ज की ऐसी दशा क्यों है ? निष्ठुर कैकई से सारा प्रसंग—अपने देश-
काले और भरत को राज्य पाने का—सुना । देखिये, क्या हुआ,—

“ मन मुसिक्याय भानु कुल-भानू ।

राम सहज आनन्द-निधानू ॥

यौले—“.....

.....

भरत प्राण प्रिय पार्वहि राजू ।

विधि सब विधि मोहि सन्मुख आजू ॥”

क्या कहना है, राम के त्याग और धीर का ऊपर थोड़ा परिचय है—उनके अनगणित गुणों का यहाँ उल्लेख करना सर्वथा असंभव है । और जिन

भरत

के सम्बन्ध में तुलसीदास जी कह चुके हैं—

अगम सनेह भरत रघुबर को । जहाँ न जाय मन विधि हरिहर
जो न होतु जग जन्म भरत को । अचर सचर चर अचर करत ।

रामजी भी श्री मुख से फरमा चुके हैं—

‘भरत कहे में, साधु, सयाने ।, इस छोटी सी भूमिका में उन भरत का क्या अधिक परिचय दिया जा सकता है । ननिहाल से लौट कर भरत ने देखा ‘अयोध्या चौपट हो गई, राजा का प्राणान्त हो गया और रावण का देश निकाला । उस समय भरत की कर्णजनक अवस्था का विखींचना कवि की कल्पना से बाहर है । कैकेई सम्वाद सुना चुके मंधरा भी आ पहुँची, शत्रुघ्न ने उस में लात जमादी और घसीटा ‘भरत जी ने इसे पसन्द नहीं किया, उसे छुड़वा दिया—भरत साधुता का कैसा अच्छा परिचय है । आगे जब राजा की अन्त्येष्टि सब जोग निवृत्ति हुए । बड़ी भारी सभा हुई । भरत को राज्यास पर बैठने का प्रस्ताव हुआ । भरत जब आना कानी करने लगे

तो राज नीति-विशारद चशिष्टजी ने एक बड़ा व्याख्यान दिया । अनेक प्रमाणों से बतलाया कि पिताकी उचित और अनुचित कैसी ही आज्ञा हो, माननीय है । और मैं भी अनुरोध करता हूँ । माता कौशल्या ने भी समझाया । सार यह है कि पिताकी आज्ञा, गुरुका अनुरोध, माताका प्राग्रह और सभाका निश्चय; यह तो सब कुछ—परन्तु “प्राण प्यारे भाई हा देश निकाला और मैं राजा बनू ।”, इस भाव को उन के जीसे कोई न टालसका, बड़ी नम्रता से उनके प्रस्ताव का विरोध करते हुए युक्ति-युक्त व्याख्यान दिया कि—

“ गुरु पितु मातु स्वामि हित वानी ।

सुनिमन मुदित करिय हित जानी ॥

.....

.....

यद्यपि यह समुभक्त हों जीके ।

तदपि होतु परितोष न जीके ॥

क्यों ?

“ पितु सुर पुर, सियराम वन, करन कहहु मोहि राज । ”

.....

हित हमार सिय-पति सेवकाई । सो हरि लीन मातु कुटिलाई ।

मैं अनुमान दीख मनमाहीं । आन उपाय भोर हित नाहीं ॥

सोक-समाज राज केहि लेखे । लखन राम सिय पद बिनु देखे ॥

.....

.....

धन्य भ्रातृ-प्रेम और धन्य त्याग ! संसार के इतिहास में क्याका भी ऐसा उदाहरण मिल सकता है, त्याग और प्रेम से भरा हुआ भरत का यह व्याख्यान बार २ मनन करने योग्य है ।

अन्त में सत्य-हृदय की विजय हुई, नीति और इतिहास दुबकाकर भाग गये। भरत की बात का विरोध करने की किसीको हिम्मत नहीं हुई। निश्चय हुआ:—'सब मिलकर राम को मना लावें। सब बंधुओं को गये, रामजी से सम्मिलन हुआ:—

भरत जी ने रामचन्द्र जी से लौटने के लिये अश्रुपूर्ण नेत्रों से विनय की। राम जी ने सारा भार भरत पर रख दिया-इस स्थल पर जो थापस में वार्त्तालाप हुआ, मनन करने योग्य है।

वही ही मार्मिक घटना है। प्रेम पूर्ण दो हृदय किस प्रकार एक-दूसरे की रक्षा करते हुए अपने २ कर्तव्यों के पालन करने को दृढ़ हैं अन्त में राम की विजय हुई, किसी तरह से भरत को लौटाने के लिये राजी कर लिया। भरत राम की खड़ाऊँ सिर पर धर अयोध्या की ओर लौटे। पर राम जब तपस्वी का भेष धर वनोवासी हैं—भ्रातृ-भक्त, भातृ-कब राजलक्ष्मी का उपभोग कर सकते हैं—उन्होंने भी अयोध्या निकट नदिग्राम में बल्कल वसन धारण कर वनोवासी का भाँति रहना प्रारम्भ कर दिया।

यही दोनों राम और भरत अयोध्या काण्ड के प्रधान पात्र हैं। पर

लक्ष्मण

जोका चरित्र भी कुछ कम उल्लेखनीय नहीं है। यह रामचन्द्र

के सबसे निकटस्थ और सहज-संगी थे। बड़े भाई को पिता के तुल्य समझते थे। इन्होंने सुना कि राम बन जा रहे हैं, दौड़े हुए भाई के पास गये।

मार्ग में शंका करते हुए जाते थे:-

‘रखिहिहि भवन कि लेइहि साथी ॥’

लक्ष्मण में कहीं ताकत थी कि भाई की आज्ञा के विरुद्ध कुछ भी कर सकें। रामचन्द्र जी ने बहुतेरा समझाया कि हर तरह से तुम्हारा घर पर रहना ही उचित है-इन्होंने स्पष्ट कह दिया—

“गुरु पित मातु न जानों काहू ।

कहहुँ स्वभाव नाथ पति याहू ॥

मोरे सबै एक तुम स्वामी ।

दीनबन्धु उर अंतरयामी ॥

अपनी अप्रतिम श्रद्धा और प्रेम से-अनेक कारण अयोध्या में रहने के होने पर भी-इन्होंने राम से बन चलने की आज्ञा ले ली। स्त्री और माता को त्यागि, भाई के साथ तपस्वी बन कर रहने में जीवन की सफल समझा। यह हृदय के बड़े सरल और स्पष्ट वक्ता थे—सुमंत राम को पहुँचा कर बन से लौट रहे थे, राम ‘पिताजी से बेमकुशल कहना’ समझा रहे थे, लक्ष्मण ने उस समय बहुत कठोर वचन कहे। राम ने सुमंत को शपथ दिखाई कि महाराज से लक्ष्मण की बात न कहना। दीन वचन कहना तो लक्ष्मण जानते ही न थे—

लक्ष्मण परशुराम सम्वाद पढ़ने में यह बात स्पष्ट हो जाती है—क्रोध भी इन्हें बहुत शीघ्र आता था, और चट पट भी कर बैठते थे—कैकेई ने मंथरा को असंतुष्ट देखकर कहा—

“हँसि कह रानि गाल बड़ तोरे ।
दीन लखन सिख अस मन मोरे ॥”

भरतागमन के समय चित्रकूट पर जो इन्होंने ने भाषण दिया उसका कुछ अंश इस प्रकार है—

“कहँ लगि रहिय सहिय मन मारे ।
नाथ साथ घहु हाथ हमारे ॥
आय बना भल आज समाजू ।
प्रगट करौ रिस पाछिल आजू ॥

अस्तु । इन्होंने ने जिस प्रेम और भक्ति से भाई की सेवा की वर्णन नहीं की जा सकती ।

“सिय सुमन्त भ्राता सहित, कंदमूल फल खाय ।
सयन कीन्ह रघुवंश-मनि पाँय पलोदत भाय ॥
उटे लखन सोवत-प्रभु जानी ।
कहि सचिवहिँ सोवन मृदुवानी ॥
कलुक दूरि सजि वान सरासन ।
जागन लगे बैठि वीरासन ॥”

क्या कहना है ?—कैसी अपूर्व भ्रातृ-भक्ति है । लक्ष्मण जैसा आदर्श पुत्र होने का श्रेय आदर्श माता—

सुमित्रा

ही को है । सुमित्रा सचमुच गृहलक्ष्मी थी । आदर्श गृहस्थी ब्रिये जिन २ गुणों की आवश्यकता है, सुमित्रा में कूट २ कर भरे थे । दूरदर्शिता, धर्म-निष्ठता तथा कर्त्तव्य-परायणता का पाठ दमणजी ने इसी से सीखा होगा । जिस समय रामजी को राजी कर दमण माता के पास पिढ़ा माँगने गये-समझे थे कि माता कहीं धा न डाल दे । परन्तु आदर्श माता सुमित्रा ने स्पष्ट कह दिया—

“तात तुम्हार मातु वैदेही ।

पिता रात्र सब भांति सनेही ॥

जौपै सीय राम बन जाहीं ।

अवध तुम्हार काज कछु नाहीं ॥”

धन्य माता ! क्या संसार में ऐसा उदाहरण और कहीं मिलेगा ? सुमित्रा राजा दशरथ की दूसरी रानी थी, पहली का नाम था—

कौशिल्या ।

रामचन्द्र इन्हीं के पुत्र थे । कौशिल्या के धैर्य को देखने के लिये बड़े साहस की आँख चाहिये । जब इनको मालूम हुआ ‘राज्य के बदले मेरे बेटे को बनोवास मिला ।’ तो स्नेह और धर्म ने थोड़ी देर के लिये इनके मस्तिष्क में रण-रंग सचा दिया । धर्म और स्नेह के विचारों में टक्करें हुई—

“राखहु सुतहि करौं अनुरोधू, धर्म जाय अरु बंधु विरोधू ।

कहाँ जान बन तौ बड़ि हानी, संकट सोच विवस भई रानी” ॥

थोड़ी ही देर में धर्म की विजय होगई । दूरदर्शिता, गम्भीरता, धैर्य आदि सेनापतियों ने बड़े साहस के साथ अपना काम किया ।

खेत धर्म के हाथ रहा—सोह ने नम्र होकर क्षमा प्रार्थना करली और अपने हाथ से धर्म के मस्तक पर विजय तिलक कर दिया । संधिपत्र के अनुसार कौशिल्या ने फर्मान निकाला:—

“तात ! जाऊँ वलि कीन्हेउ नीका ।

पितु आपसु सब धर्मक टीका ॥

राज दैन कहि दीन्ह वन मोहि न दुख लवलेश ।”
केवल चिन्ता है तो इस बात की कि:—

“तुम विन भरतहिं भूपतिहि प्रजाहिं प्रचण्ड कलेश” ।

इन के हृदय में ईर्ष्या द्वेष आदि विकारों का तो नाम निशान ही नहीं था । लौतेली माता ने, पुत्र को देश निकाले का दण्ड दे दिया; परन्तु उरी सौतेली माता की ओर संकेत करके यह कहती हैं—

जौ पितु मातु कहेउ वन जाना । तौ कानन सत अवध समाना ।

धन्य कौशिल्या, तेरे विशाल हृदय को धन्य है ।

यदि आप कौशिल्या के धैर्य का इससे भी अधिक परिचय पाना है तो वहाँ चलें, जहाँ दैव-दलित दशरथ पड़े हुए हैं । सुमन्त ने आकर राम के न लौटने का समाचार सुना दिया है । दशरथ जी के आशा-तंतु बिल्कुल छिन्न भिन्न होगये हैं । ऐसे बिकट समय

रामचन्द्र वन की तयारी कर रहे हैं। सीता जी को चिन्ता हुई कि कहीं मुझे छोड़ न जाय। साथ चलने के लिये बहुत कुछ अनुनय-विनय की। रामचन्द्र जी ने वन के घोर दुःख और विकट अवस्था समझा कर इन्हें रोकना चाहा। और घर रहने में इन्हें किसी प्रकार को दुःख भी नहीं होता; माता कौशल्या इन्हें बहुत प्यार करती थीं-

“नैन पुतरि इव प्रीति बढाई ।”

“दीप वाति नाहि टारन कहऊँ ।”

परन्तु यह संसार के सारे संकटों को, प्यारे के वियोग-दुःख के लवबेश के तुल्य भी नहीं समझती थी। एक ही बात में सारे व्याख्यान का उत्तर दे दिया—

“मैं सुकुमारि ! नाथ वनजोगू !! तुमहि उचित तप ! मोकहँ भोगू !!!
 बात थोड़ी सी है, परन्तु आर्य सभ्यता का रहस्य कूट कूट के भरा है:-
 हृदयेश पर विपत्ति, मैं सुख से रहूँ। स्वामी कंद मूल फल खाकर वन
 में मारे मारे फिरें और मैं राजमहल में राज्योचित राज-भोग भोगूँ।
 जो कुछ भी हो-सुख, या दुख, जीवन या मृत्यु, पति के साथ साथ—

“तन, धन, धाम, धरणिपुर राजू ।

पति बिहीन; सब लोक समाजू ॥

नाथ साथ साथरी सुहाई ।

प्रभु संग मंजु मनोज तुराई ।

कंद मूल फल अभिय अहारू ।

अवध-सौध सत सरित्त पहारू” —

जिसके लिए है, उसका जीवन-रहस्य संसार को आश्चर्य में डालने वाला क्यों न हो ?

ऊपर के चरित्रों के विकास का कारण महाराजा दशरथ की सत्य-प्रियता है—

“प्राण पुत्र दोउ परिहरेउ बचन न दीनेउ जान ।”

अन्य चरित्रों की ऐसी विशेषताएं दिखाई गई हैं जिनका अयोध्या काण्ड से अधिक सम्बंध है—परंतु महाराज दशरथ के चरित्र की कुछ प्रारंभिक बातें ऐसी हैं, जिनके उल्लेख किए बिना काम नहीं चल सकता। यह स्वभाव के बहुत ही उदार और गऊ-ब्राह्मण के रक्षक थे। परोपकार के लिये तो इनका सर्वस्व ही अर्पित था। जब २ देवताओं पर भीड़ पड़ती थी वह दैत्यों से बहुत ही तंग आजाते थे तब उन्हें राजा दशरथ की सहायताकी जरूरत पड़ती थी। कैकेई भी प्रायः युद्ध में साथ जाती थी। एक बार ऐसे ही किसी युद्ध में कैकेई की नैमित्तिक सहायता से विजय हुई। उसी के उपलब्ध में दो अरदान दिये, जो बहुत दिन तक धरोहर रखे रहे और समय पर काम आए।

एक बार राजसों के अत्याचार से देश में खलवली मच गई। यज्ञ, हवन, वेदपाठ, आदि बंद होने लगे। पवित्र तपोवन राजसों के क्रीडा-स्थल हो गये। सब ऋषियों ने सलाह करके विश्वामित्र जी को अयोध्या भेजा। राजा ने इनका बड़ा स्वागत किया और आने का कारण पूछा। ऋषि ने तपोवन की सब व्यवस्था सुनाई और राम को मांगा, उस समय दशरथ जी बड़े चक्कर में पड़ गये, कहा—

मागंहुं भूमिधेनु धन कोपा ।
सर्वस देहुं आज सह रोषा ॥
देह प्राण ते प्रिय कुछ नाहीं ।
सोउ मुनि देहुं निमिष इक माहीं ॥

इतना तो बात की बात में दे सकता हूँ । पर राम के देने में कुछ संकोच है । मैं “ससैन्य चल सकता हूँ” । राक्षसों से लड़ कर उनके अत्याचार से अपने देश को बचा सकता हूँ । परन्तु राम मुकुमार है, वच्चे हैं, “घोर मायावी असुरों के मुकाबिले में उन्हें भेजना” समझ में नहीं आया—

“चौथे पन पायेउ सुत चारी ।
विप्र वचन नहिं कहेउ संभारी ॥”

अस्तु । थोड़ी देर के लिए सर्वस्व दे सकने पर भी पुत्र के न देने का विचार जी में रहा । वशिष्ठ जी ने, समझाया कि भारत-मा की छाती से राक्षसी अत्याचार, यदि तुम्हारे पुत्र के द्वारा दूर हो जाय तो तुमसे भाग्यवान कौन होगा ? राजा का मोह दूर हो गया । देश और धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राण से प्यारे पुत्रों को ऋषि के अर्पण कर दिया । धन्य त्याग !

इतने गुण होते हुए भी एक अघगुण था—राजा ने कई विवाह किये । इसी कारण गृह-कलह हुआ ।

वृद्ध अवस्था में भी वह संयमी न रहे । कामाग्भता से कैकेई की चालों को न समझ सके, और उससे प्रतिज्ञा कर बैठे । परन्तु

प्रतिज्ञा को किस प्रकार निबाहा, यह इतिहास के पत्रों पर स्वर्णचरों में लिखा हुआ है—

जियन मरन फल दखरथ पावा । अंड अनेक अमल जस छावा ।
जियत राम-विधु बदन निहारा । राम-विरह मरि मरण सँभारा ।

जो हो, इस राजवंश के परिचय के साथ २ अन्य कुछ व्यक्तियों का परिचय देना भी उचित है—जिनके कारण रामायण की कथा में सोने में सुगंध आ गई है । जिनमें से एक तो—

सुमन्त्र

जो, अयोध्या के राज्यवंश के सच्चे सेवक और हितैषी थे । महाराज की गुप्त-मंत्रणाएँ प्रायः इन रो ही हुआ करती थीं । यह बहुत ही उदार और सहृदय थे । रामचन्द्रजी इन्हें सदैव पूज्य दृष्टि से देखते थे ।

“तुम पुनि पितु सम अति हित मोरे ।

चिन्ती करहुँ तात कर जोरे ॥”

रामचन्द्र को पहुँचाकर जब बन से सुमन्त लौटे तो उनकी बहुत ही सोचनीय अवस्था हो गई, उसका वर्णन कल्पनातीत है; एक उदाहरण से कवि ने उस समय की अवस्था का चित्र खींचा है—

“जिमि कुलीन तिय साधु लयनी ।

पति-देवता कर्म मन वानी ॥

रहे कर्म बस परिहरि नाह ।

सचिव हृदय तिमि दारुण दाह ॥”

क्या ही दारुण वेदना है । इससे:—

“ विवरण भयो न जाइ निहारी ।
मारेसि मनहुं पिता महतारी ॥
हानि गलानि विपुल मन व्यापी ।
यमपुर पंथ सोच जनु पापी ॥”

पेसी दशा में:—

हृदय न विदरत पंक जिमि विलुप्त प्रीतम नीर ।
जानत हौं मोहि दीन दुख यम-यातना करीर ॥

आदि, पदचात्तार्प करते हुए अयोध्या आए । अंधेरे में नगर प्रवेश किया । खाली रथ देखकर लोगों की रही सही आशा भी दूढ़ गई । अयोध्या पहुँचकर स्वयं धीरज बाधा और वदे पांडित्य-पूर्ण भावण द्वारा राजा को समझाने की चेष्टा की, पर अंत में “हरीच्छा बलवान है” ही रहा ।—अस्तु ।

दूसरे निपाद पति:—

गुह

ये, जिनका चरित्र भी पवित्र प्रेम से भरा हुआ और अति उज्वल था । रामचन्द्र जी से इनका घनिष्ठ स्नेह होगया था । मन में जब, रामचन्द्र साथरी पर सो रहे थे और लक्ष्मण धनुषबाण ले पहरा दे रहे थे, निपाद भी उनके पास जा पहुँचा ।

“ सोवत प्रभुहिं निहारि निपादु ।
भयउ-प्रेम बस हृदय विपादु ॥

“तनु पुलकित जल लोचन बहही ।
वचन सप्रेम लखन लन कहही ॥”

इस समय जो दुःरा से भरी हुई वात चीत गुह ने की, जिससे उसकी सहृदयता का पता चलता है । इसके सिवाय वह बड़ा भारी वीर भी था । जब यह अनुमान हुआ कि भरत ससैन्य राम से लड़ने जाते हैं—तो अपनी सेना को लड़ने की आज्ञा दी । असहाय राम पर ससैन्य भरत चढ़ कर जाते हैं, जीते जी हम इस अन्याय को कैसे सहें—

होइ सजोइल रोकहु घाटा ।
ठाठहु सकल मरन कै ठाटा ॥
सनमुख लोह भरत सन लेहू ।
जियत न सुरसरि उत्तरन देहू ।
समर मरण, पुनि सुरसरि तीश ।
राम काज, छिन भंगु सरौरा ।
भरत भाइनूप, मैं जन नीचू ।
बड़े भाग अस पाइय मीचू ।

अस्तु । इस अपद जंगली जाति के नायक के आत्म-बलिदान की समता क्या किसी सभ्य जाति के इतिहास में कहीं मिल सकती है ?

आगरा
आवण कृष्णा २
सं० १६७६ वि०

॥ इति ॥

अध्यापक रामस्न ।



॥ श्रीः ॥

श्रीमद्गोस्वामी

तुलसीदास कृत रामायणम् ।

✽ अयोध्याकाण्ड प्रारम्भः । ✽

* यस्याङ्गे च विशाति^१ भूधर-सुता^२, देवापगा^३ मस्तके,
भाले बालविधुर्गले च गरले, यस्योरसि व्यालराट्^४ ।
सोऽयं^५ भूतिविभूषणः, सुरवरः, सर्वाधिपः, सर्वदा^६,
शर्वः^७ सर्वगतः, शिवः शशिनिभः, श्रीशंकरः पातु^८ माम्^९ ॥१॥
प्रसन्नतां या न गताभिपेकतस्तथा न मस्ते वनवासदुःखतः ॥
मुखांबुजश्रीरघुनन्दनस्य मे सदाऽस्तु सा मञ्जुलमङ्गलप्रदा ॥२॥
नीलांबुजश्यामलकोमलाङ्गम्, स्नीतासमारोपितवामभागम् ॥
पाणौ महासायक चारुचापं नमामि रामं रघुवंश नाथम् ॥३॥

अर्थः—जिनकी बाईं ओर पार्वतीजी, सिर पर गंगाजी, मस्तक पर नवीन चन्द्रमा, गले में विष, हृदय पर सर्पराज का यज्ञोपवीत, भस्म रमाए, देवताओं में श्रेष्ठ, सब के स्वामी, अविनाशी, संहार करने वाले, सर्वव्यापी, कल्याणकारी तथा चन्द्रमा के समान गौरवर्ण ऐसे श्रीगहादेवजी मेरी सदैव रक्षा करें ॥१॥

राज्याभिपेक में प्रसन्नता को और वनवास के दुःख से मलिनता को प्राप्त नहीं हुई, ऐसी श्रीरामचन्द्र के मुख-कमल की शोभा, मुझे सुन्दर कल्याण की देने-वाली हो ॥ २ ॥ नील-कमल के समान सुन्दर श्याम और कोमल अङ्ग वाले, जिनके शरम भाग में जानकीजी विराजमान हैं, हाथों में सुन्दर धनुषबाण है ऐसे रघुवंश के स्वामी श्रीरामचन्द्र को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ३ ॥

१ सुशोभित २ पार्वती ३ (देव+अप+गा) गंगाजी ४ नागराज ५ (स. अय)
६ अविनाशी ७ संहारकर्ता ८ रक्षा करें ९ मेरी । - पाठान्तर वामाङ्के

दो०—श्रीगुरु चरन-सरोज^१-रज, निज मन-मुकुर^२ सुधारि ।

वरनड^३-रघुवर-विमल जसु, जो दायकु फल^४ चारि ॥ १

जब तें राम व्याहि घर आये । नित-नव-मंगल मोद बघाये ।

* भुवन-चारिदस भूधर-भारी । सुकृत^५-मेघ दरपहि सुख-बारी ।

रिधिसिधि-संपति-नदी सुहाई । उमगि अवध-अंबुधि^६ कहँ गाँ ।

मनिगन-पुर-नर-नारि-सुजाती । सुचि-अमोल-सुन्दर सब भाँती ।

कहि न जाइ कछु नगर विभूती । जनु इतनिअ गिराँचि-करतूती ।

सब विधि सब पुर-लोग सुखारी । रास-जगद-मुख-चन्दु^७ निहारी ।

मुदित मातु सब सखी सहेली । फलित^८ विलोकि मनोरथ-बेली ।

रामरूप गुन लीलु सुभाऊ । प्रमुदित होहिँ देखि सुनि राज ।

दो०—सब के डर अभिलाषु अस, कहहिँ मनाइ महेशु ॥

आपु शङ्कत^९ जुवराजपद, रामहिँ देहिँ नरेशु ॥ २ ॥

एक समय सब सहित समाजा । राज-सभा रघुराजु विराजा ।

सकल-सुकृत-मूरति नरनाह । राम-सुजसु सुनि अतिहि उछाह^{१०} ।

नृप सब रहहिँ कृपा अभिलाखे । लोकप*^{११} रहहिँ प्रीति-रख रामे ।

त्रिभुवन तीनि काल जग माहीं । भूरि-भाग^{१२} दसरथ सब नाहीं ।

मंगल-मूल, राहु सुव जासू । जो कछु कहिअ शोर सबु तासू ।

राथ सुभाव सुकुरु कर लीन्हा । बदनु विलोकि सुकुरुसम कीन्हा ।

१ (सरः + ज) कमल २ दर्पण ३ शर्ष, धर्म, काम और मोक्ष ४ पुत्र

५ अत्रिपिण्णी समुः ६ (चन्द्रमारुपी सुह) ७ फली वृक्ष (कर्मबान्धव) ८ मौजूदा

(श+ज) ९ (वृत्ताह) १० लोकपाल * देखो मूढार्थ प्रकाश । ११ बट-भाती

१२ नरके ही पत्र में तुलसीदास जी अलंकारिक-चन्द्रकार कित्त गूची से दिसा रहे

इस पत्र में सम शब्द-रूपक है ।

ध्वन' समीप भय सित केसा । मनहुँ जरठ-पनु अस उपदेसा ॥
 नृप जुवराजु राम कहुँ देह । जीवन-जनम-लाहु किन लेह ॥
 दो०-यहि विचारु उरु आनि नृप, सु-दिन सु-श्रवसरु पाइ ।

प्रेम-पुलकि तन, मुदित मन, गुरुहिँ सुनायेउ जाइ ॥३॥

कहइ भुआलु सुनिअमुनि-नायक । भये राम सब विधि सब लायक ॥
 सेवक सचिव सकल पुर-वासी । जे हमार अरि मित्र उदासी ॥
 सवहिँ रामु प्रिय जेहिबिधि मोही । प्रभुअसीस जनु तनु धरि सोई ॥
 विप्र-सहित परिवार गोसाई । करहिँ छोहूँ सब रौरिहि नाई ॥
 जे गुरु-चरन-रेनु सिर धरहीं । ते जनु सकल विभव बस करहीं ॥
 मोहिँ समयहु अनुभयेउ न दूजें । सब पायेउँ प्रभु-पद-रज पूजें ॥
 अरु अभिलाषु एक मन मोरें । पूजिहि नाथ अनुग्रह तोरें ॥
 मुनि प्रसन्न लाखि सहज-सनेह ॥ कहेउ नरेस रजायसु देह ॥

दो०—राजन, राउर नामु-जहु, सब अभिमत दातार ।

फल अनुगामी महिप-मनि, मन-अभिलाषु तुम्हार ॥४॥

सब विधि गुरु प्रसन्न जिय जानी । बोलेउ राउ बिहँसि मृदु-वानी ॥
 नाथ, रामु करिअहि जुवराजु । कहिअ कृपाकरि कारिअ समाजु ॥
 मोहि अछत यहु होइ उछाहू । लहाहिँ लोग सब लोचन-लाहू ॥
 प्रभु-प्रसाद सित्र सबइ निबाहीं । यह लालसा एक मन माहीं ॥
 पुनि न लोच तनु रहउ कि जाऊ । जेहि न होइ पाछे पछिताऊ ॥
 सुनि मुनि दसरथ-बचन सुहाए । मंगल-मोद-मूल मनभाए ॥
 सुनु नृप जासु विमुख पछिताहीं । जासु भजन विनु जरनि न जाहीं ॥

१ (श्रवण) २ (भूपाल) ३ कृपा ४ स्वभाव से ही स्नेह है जिनमें,
 (बहुव्रीहि) ५ श्रोता ६ इच्छाओं-७ (महिषों में शिरोमणि,) सप्तमी तत्पुरुष;

* राजन्, आपके नाम का यश सब इच्छाओं को पूरी करने वाला है—हे
 महिष-मणि, फल, आपकी मनोभिलाषाओं के पीछे २ चलता है—अर्थात् को
 मनोरथ आपका दृष्टा नहीं पड़ता ।

भयेउ तुम्हार तनय सोइ स्वामी । राम पुनीति प्रेम अनुगामी ॥

दो०-वेगि विलंबु न करिअ नृप, साजिअ सवुइ समाजु ।

सु-दिन सु-मंगलु तवहिं जव, राम होहिं जुवराजु ॥५॥

सुदित महीशति मन्दिर आए । रूवक सचिव सुमंत बोलाए ॥

कहि 'जय जाय' सीस तिन्ह नाए । भूप सु-मंगल-बचन सुनाए ॥

प्रमुदिन मोहि कहेउ गुरु आजू । 'रामहिं राय देहु जुवराजू' ॥

जौ पाँचहिं मत लागइ नीका । करहु हरषि हिय रामहिं टांकाः ॥

मंत्री सुदित सुनत प्रिय-वानी । अभिमत-विरव परेउ जनु पानी ॥

विनती सचिव करहिं कर-जोरी । जिअहु जगत-पति वरस करोरी ॥

जग मंगल भल काजु विचारा । वेगिअ नाथ न लाइअ वारा ॥

नृपहिं-मोडु सुनि सचिव सु-भाखा । बढत बाँड़ जनु लही सु-साखा ॥

दो०-कहेउ भूप सुदिराज कर, जोइ जोइ आयसु होइ ।

राज-आभिषेक-हित वेग करहु सोइ सोइ ॥ ६ ॥

हरषि सुनीस कहेउ नृपु वानी । आनहु सकल सु-तीरथ पानी ॥

आपशि खूल फूल फल पाना । कहे नाम गनि मंगल नाना ॥

चामर चरम वसन बहुभांती । रोम-पाट-पट अगनित-जाती ॥

मनिगन मंगलवस्तु अंगका । जो जग जोशु भूप-अभिषेका ॥

वेद-विदित कहि सकल विधाना । कहेउ रचहु पुर विविध-विताना ॥

सफल रत्नाल पूंगफल केरा । रोपहु वीथिन्ह पुर चहुं फेरा ॥

रचहु मंजु मनि-चाँकई चारु । कहहु बनावन वेगि वजारु ॥

पूजहु गणपति गुरु कुलदेवा । राव विधि करहु भूमि-पुर-सेवा ॥

१ प्रेम के अनुगामी (पती तन्पु०) २ आर्षकाल में राजा के सम्मुख जाते

समय प्रजावर्ग सह मंगल-गन्ध-पद उच्चारण करते थे । ३ तिलक, ४ इच्छारूपी पौधे

पर, ५ मानों (उत्प्रेक्षा अलंकार वाचक पद) जय मानों, जा आदि पदों से एत

अर्थ में दूसरे अर्थ की संभावना की जाती है, तो उत्प्रेक्षा-अलंकार ज्ञेय है । ६ कली

वैली अंगुली वन्द्य न चँदोश १० आम ११ सुपारी । १२ गलिथी-

दो०—ध्वज पताक-तोरन-कलस, सजहु तुरग-रथ-नाग^१ ।

सिर धरि मुनिवर-वचन सवु, निजनिज कांजहि लाग ॥७॥

जेहि मुनीस जो आयसु दीन्हा । सो तेहि काजु प्रथम जनु कीन्हा ॥

विप्र-साधु-सुर पूजत राजा । करत राम-हिते मंगल-काजा ॥

सुनत राम-अभिषेक-सुहावा । बाज गहागह^२ अवध वधावा ॥

राम सीय-तनु सगुन जनाए । फरकहिं मंगल-अंग सुहाए^३ ॥

पुलकि स-प्रेम परसपर कहही । भरत-आगमनु-सूचक अहही^४ ॥

भए बहुत दिन श्रुति अवसेरी^५ । सगुन प्रतीति भेंट प्रिय केरी ॥

भरत-सरिस प्रिय को जगमार्ही । इहइ सगुन-फलु दूसर नाहीं ॥

रामहिं बंधु-सोच दिनराती । अंडन्हि कमठ-हृदय जेहि भाँती^६ ॥

दो०—ऐहि अवसर मंगलु परम. सुनि हरषेउ रनिवासु ।

सोभत लखिविधु वढ़त जनु, वारिधि वीचि^७ विलासु ॥८॥

प्रथम जाइ जिन्ह वचन सुनाए । भूपल वसन भूरि तिन्ह पाए ॥

प्रेम पुलकि तन-मन अनुरागी । मंगल-साज सजन सश लागी ॥

चौकई चारु लुमित्रा पूरे । मनि-मय विविध-भाँति श्रुति रूरे^८ ॥

आनंद मगन राम महतारी । दिए दान बहु विप्र हँकारी ॥

पूजा आमदेवि-सुर-नागा । कहेउ बहोरि देन वलिभागा ॥

जेहि विधि होइ राम कल्याणु । देहु दया करि सो बरदानु ॥

गावहिं मंगल कोकिल वयनी^९ । विधु-वदनी^{१०} मृग सावक-नयनी^{११} ॥

दो०—राम राज अभिषेकु सुनि, हिय हरषे नर-नारि ।

लगे सु-मंगल सजन सब, विधि अनुकूल विचारि ॥

१ हागी २ गंभीर, गहरी ध्वनि वाले, वधावा का विशेषण ३ पुरुष का दाहिना और स्त्री का बायाँ अङ्ग फटकना शुभ-सूचक माना गया है । ४ हैं । ५ चिन्ता ६ बहुत या तट पर अंडे रख कर जिस प्रकार चिन्तित रहता है । ७ लहर, मानो पूर्ण चन्द्र की देख समुद्र में लहरें बढ़ने लगीं (उत्प्रेक्षाऽलंकार) ८ श्रुति सुन्दर १०-११-१२ फोकिल से वैन हैं जिनके, आदि २ (बहुव्रीहि समास)

तव नरनाह वसिष्ठु बुलाये । राम-धाम सिख देन पठाये-
 गुरु-आगमनु सुनत रघुनाथा । द्वार आइ नायेउ पद माथा ।
 सादर अरघ^१ देइ घर आने । सोरह भांति^२ पूजि सनमाने ।
 गहे चरन सिय-सहित बहोरी । बोले रामु कमल-कर जोरी ।
 सेवक-सदन स्वामि-आगमनू । मंगल-मूल अमंगल-दमनू ॥
 तदपि उचित जनु बोले स-प्रीती । पठइअ काज नाथ 'अस नीती'^३ ॥
 प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू । भयेउ पुनीत आजु यहु गेहू ।
 आयसु होइ सो करउँ गोसाईं । सेवक लहइ स्वामि-सेवकाईं ॥

दो०—सुनि सनेह-साने-वचन, मुनि रघुवराहि प्रसंस ।

राम कस न तुम्ह कहहु अस, 'हंस-वंस-अवतंस'^४ ॥१०॥

वरनि राम-गुन सील-सुभाऊ । बोले प्रेम-पुलाकि मुनिराऊ ॥
 भूय सजेउ अभिषेक-समाजू । चाहत देन तुम्हहि जुबराजू ॥
 राम करहु सब संजम^५ आजू । जाँ विधि कुसल निवाहइ काजू ॥
 गुरु सिख देइ राउ पहिँ गएऊ । राम-हृदय अस विसमय भएऊ ॥
 जनमे एकलंग सब भाई । भोजन सयन केलि तरिकाई ॥
 करनवेध उपवीत विश्राहा । संग संग सब भए उछाहा ॥
 विमल-वंस यह अनुचित^६ एकू । अनुज विहाइ बडेहि अभिषेकू ॥
 प्रभु सप्रेम-पछितानि सुहाई । हरउ भगत-मन कै कुटिलाई ॥

दो०—तेहि अवसर आए लपन, मगन प्रेम-आनन्द ।

सनमाने प्रिय-वचन कहि, रघुकुल-कैरव-चन्द^७ ॥ १ ॥

बाजाहिँ बाजन विविध-विधाना । पुर-प्रमोदु नहिँ जाइ यखाना ॥

आगन्तुक के स्वागत के लिये पात्र से पृथ्वी पर जल छोड़ना, आपकाल की
 स्वागत विधि । २ देखो-गृहार्थ कोष ३ हंस (सूर्य) के वंश पृथी-तत्पु० हंस वंश में
 अवतंस (भूषण)^१ सप्तमी त० । ४ व्रत, नियम । ५ यद्यपि नीति उचित समझती है
 परन्तु राम का स्वार्थत्यागीहृदय इसे अनुचित समझता है । ६ रघुकुल रूपी कैरव,
 (रूप्य रूपकभाव में रूपक कर्मधारय;) रघुकुल, रूपी कैरव के चन्द्र,
 (पृथी तत्पुरुष)

प्राग्भरत-आगमजु^१ सकल मनावहिं । आघाहिं घेगि नयन-फल पावहिं ॥
 १. मारहाट वाट घर गली अथाई^२ । कहहिं परसपर लोग लोगाई ॥
 २. कालि लगन^३ भलि केतिक वारा । पूजिहि विधि अभिलाषु हमारा ॥
 ३. नक-सिंघासन सीय समेता । बैठहिं रामु होय धित-चेता ॥
 ४. कल कदाहिं कब होइहि काली । विघन मनावहिं देव कुचाली ॥
 ५. तेन्हहिं सोहाइ न अवध-वधावा । चोरहिं चँदनि राति न भावा ॥
 ६. आरद बोलि बिनय सुर करहीं । वारहिं वार पाँय लै परहीं ॥

दो०—विपति हमारि बिलोकि वडि, मातु करिअ सोइ आजु ।

रामु जाहिं वन राजु तजि, होइ सकल सुर-काजु ॥१२॥

सुनि सुर-बिनय ठाडि पछिताती । भइउँ सरोज-विपिन-हिमशती ॥
 देखि देव पुनि कहहिं निहोरी । मातु तोहि नहिं थोरिउ खोरी^४ ॥
 विसमय-हरष-रहित रघुराऊ^५ । तुम्ह जानहु सब राम प्रभाऊ ॥
 जीव करम-वस दुख-सुख-भागी । जाइअ अवध देवहित लागी ॥
 वार वार गहि चरन सकोची । चली विचारि विबुध^६ मति-पोची ॥
 ऊंच निवासु नाच करतूती । देखि न सकहिं पराइ बिभूती^७ ॥
 आगिल काजु विचारि वहोरी । करिहहिं चाह कुसल कविमोरी ॥
 हरषि हृदय दसरथपुर आई । जनु ग्रह-दसा^८ दुसह दुख-दायी ॥

दो०—नामु मंधरा मंद-मति, चेरि कैकेइ केरि ।

अजस-पेटारी ताहि करि गई गिरा^९ मति फेरि ॥१३॥

दोख मंधरा नगर-बनावा । मंगल भंजुल बाज वधावा ॥
 पूछेसि लोगन्ह काह उज्जाह । 'राम-तिलकु' सुनि भा उर दाह ॥

१ आना (भाव वा० संज्ञा) २ (आस्थाई) चौपाल बैठक । ३ मुहूर्त
 ४-स्फूर्ति, आनन्द ५ खोट, अपराध ६ (अपादानकारक में) ७ देवता ८ वैभव
 ९ जन्म राशि से १०, ११, १२ स्थान पर शनिश्चर, राहु, मंगल आदि क्रूर-ग्रह
 हों तो कुदशा होती है । १० सरस्वती ।

करइ विचारु कुबुद्धि-कुजाती । होइ अकाजु कवनि विधि राती ॥
 देखि लागि मधु कुटिल-किराती । जिमि गौ-तकइ 'लेउँ केहि भाँती ॥
 भरत-मातु पहिँ गइ विलखानी । 'का अनमनि' हासि कह हँसिरानी ॥
 ऊठरु-देइ नहिँ लेइ उसासू । नारि-चरित करि दारइ आँसू ॥
 हँसि कह रानि गालु बड़ तोरै । 'दीन्हि लपन सिख' अस मन मोरै ॥
 तवहुँ न बोल चेरि बडि पापिनि । छाँड़इ स्वास कारि जनु साँपिनि ॥

दो०-सभयरानि कह 'कहंसि किन', कुसल रामु महिपालु ।
 लपनु भरतु रिपु-दमनु' ? सुनि, भा ' कुवरी-उर सालु' ॥१४॥

कत सिख देइ हमहिँ कोउ माई । गालु करव केहि कर वलु पाई ॥
 रामहिँ छाँड़ि कुसल केहि आजू । जेहि जनेसु देइ जुवराजू ॥
 भयउ काँसिलाहि विधि अति दाहिन देखत गरब रहत उर नाहिँन ॥
 देखहु फस न जाइ सब सोभा । जो अवलोकि मोर मनु झोभा ॥
 पूतु विदेस, न सोचु तुम्हारे । जानतिहहु 'बस नाहु हमारे' ॥
 नाद बहुत प्रिय सेज तुराई' । लखहु न भूप कपट-चतुराई ॥
 सुनि प्रिय-वचन मलिन-मनु जानी । भुकी 'रानि अब रहु अरगानी' ॥
 पुनि अस कवहुँ कहासि घर-फोरी' । तव धरि' जीभ कढ़ावाँ तोरी ॥

दो०—'काने खोरे कूवरे, कुटिल कुचाली जानि ।

तिय विलेपि पुनि चेरि, कहि, भरत मातु लुखुकानि ॥१५॥

प्रिय-वादिनि' 'सिख दीन्हिउँ तोही । सपनेहु तो पर कोपु न मोही ॥
 सु-दिनु सु-मंगल-दायकु सोई । तोर कहा फुर' ' जेहि दिन होई ॥
 जेठ स्वामि, सेवक लघु भाई । पहु दिन कर कुल-राति सुहाई ॥

१ घात लगाती है । २ क्यों नहीं ३ हुआ ४ पीड़ा ५ तोपक, तकिया ६
 झिड़क कर ७ चुप द घर में फूट डालने की बात ८ पकड़ कर १० मिठ बोली
 (बहुव्रीहिसमास) ११ सत्य ।

राम-तिलकु जौ साँचेहु काली । देउँ माँगु मनभावेत आली ॥
 कौसिल्या सम सब महतारी । रामहि सहजसुभाय^१ पियारी ॥
 मो पर करहिँ सनेहु बिसेषी । मैं करि प्रीति परीछा देखी ॥
 जौ विधि जनसु देइ करि छोहू । होहु राम-सिय पूत-पतोहू^२ ॥
 प्रान तें अधिक रामु प्रिय मोरै । तिन्हके तिलक छोभु कस तोरै ॥

दो०-भरत सपथ तोहि, सत्य कहु, परिहरि कपट दुराउ ॥

हरप समय विलमय करसि, कारनमोहि सुनाउ १६ ॥

एकहिँ वार आल सब पूजी । अब कछु कहव जीभ करि दूजी ॥
 फोरइ जोगु कपारु अभागा । भलेउ कहत दुख रौउरेहि लागी ॥
 कहहिँ भूठि फुरि वात बनाई । ते प्रिय तुम्हहिँ, करइ मैं माई ॥
 हमहुँ कहव अब ठकुर-सोहाती । नाहिँ त मौन रहव दिन-राती ॥
 करि कुरूपविधि परवस कीन्हा । ववा सो लुनिअ^३ लहिअ जो दीन्हा ॥
 कोउ नृप होउ हमहिँ का हानी । चेरि छाँड़ि अब होव कि रानी ॥
 जारइ जोगु सुभाउ हमारा । अनभल देखि न जाइ तुम्हारा ॥
 ताते कछुक वात अनुसारी । छमिअ देवि बड़ि चूकहमारी ॥

दो०-गूढ़-कपट प्रिय वचन सुनि, तीय अधर-बुधि रानि ।

सुर-माया-बस पैरिनिहि, सुहृद जानि पतियानि^४ ॥१७॥

सादर पुनि पुनि पूछति ओही । सबरी-गान * सृगी जनु मोही ॥
 तसि मतिफिरी अहइ जसि भार्गी^५ । रहसो^६ चेरि घात^७ जनु फावी^८ ॥
 तुम्ह पूछहु मैं कहत डेराऊँ । धरेहु मोर घरफोरी नाऊँ ॥
 सजि प्रतीति, बहुविधि गढ़ि-छोली ! अबध लाढ़-सानी^९ तव बोली ॥

१ स्वभाव से ही २ बहु वेदा ३ काटो ४ विश्वास किया । * मीलनी के गाने से ५ होनहार ६ प्रसन्न हुई ७ दाव न (फवती) लगी । ८ अनिश्चर एक राशि पर २ १/२ वर्ष रहता है, जन्म का, बारहवां और दूसरा जन्म राशि से बुरा समझा जाता है, (बहुश्रीहि समाप्त) साढ़े सात वर्ष वाली दश।

'प्रिय सियरामु' कहा तुम रानी । 'रामहिं तुम प्रिय' सो फुरि बानी
रहा प्रथम अच ते दिन वीते । 'समउ फिरे रिपु मोहिं पिरीते ।
भानु', कमल-कुल-पोपनिहारा । विनु जर जारि करै सोइ छारा ?
जरि तुम्हारि चह सवति उखारी । रूथहु करि उषाउ वर-वारी ।

दो०- तुम्हहिं न सोचु, सुहाग^१ बल, निज वस जानहु राउ ।
मन-मलीन मुँहु-मीठ नृप राउर सरल-सुभाउ ॥ १८ ॥

चतुर गँभीर^२ राम-महतारी । चीन्हु^३ पाइ निज बात सँवारी ।
पठप भरतु भूप ननिश्रौरै । राम मातु-मत जानव रौरै^४ ॥
सेवहिं सकल सवति मोहि नीकै । गरवित भरत मातु बल पी कैं ॥
सालु तुम्हार कौसलहि माई । कपट-चतुर नाहि होइ जनाई ।
राजहिं तुम पर प्रेम विसेखी । सवति^५ 'सुभाउ सकइ नाहि^६ ॥
रचि प्रपंचु^७ भूपहि अपनाई । राम-तिलक हित लगन धराई ॥
यहु कुल उचित राम कहँ टीका । सवहि सुहाइ मोहि सुठि नीका ॥
आगीलि बात समुझि डर मोही । देउ दैव फिरि सो फलु ओही ॥

दो०-रचिपचि कोटिक कुटिलपन, कीन्होसि कपट प्रबोधु ।
कहेसि कथा सत सवति कै, जेहि विधि वाढ़ विरांधु ॥ १९ ॥

भावी वस प्रतीति उर आई । पूँछि रानि निज सपथ दिवाई ॥
का पूछहु तुम्ह अबहु न जाना । निज हित-अनहित पसु पहिचाना ॥
भयेउ पाख^१ दिनु सजत समाजू । तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू ॥
खाइअ पहिरिअ राज तुम्हारै । सत्य कहँ नाहि दोषु हमारै ॥
जाँ असत्य कछु कहव बनाई । तौ विधि देइहि हमहिं सजाई^२ ॥

१ सूर्य २ खाक ३ उपायरूपी सुन्दर जल से ४ (सौभाग्य) ५ गहरी, मन
के भावों को गूढ़ रखने वाली ६ अक्सर ७ आव न (सपत्नी) ८ पड़ुयंत्र, जादू
१० (पच) ११ सजा ।

महि तिलकु कालि जौ भयेऊ । तुम्ह कहँ बिपति-बीजु बिधि बयेऊ ॥
 व खँचाइ कहउँ बलुभाखी । भामिनि भइहु दूध कइ माखी ॥
 सुत सहित करहु सेवकाई । तौ घर रहहु न आन उपाई ॥

दो०—#कद्र विनतहि दीन्ह दुखु, तुम्हहिँ कौसिला देव ।

भरत वंदि-गृह सेइहहिँ, लषनु राम के नेव ॥२०॥

कय-सुता सुनत कटु-वानो । कहिन सकै कछु सहमि^२ सुखानी ॥
 नुपसेउ^१ कदली जिमि काँपी । कुवरी दसन जीभ तब चाँपी^४ ॥
 हि कहि कोटिक-कपट-कहानी । धीरज धरहु प्रबोधिसि रानी ॥
 निहिसे कठिन पढ़ाइ कुपाठू^५ । जिमि न नवै फिर उकठि^६ कु-काठू ॥
 करा करमु प्रिय लागि कुचाली । वकिहि^७ सराहइ मानि मराली^८ ॥
 नुनु मंथरा वात फुरि तोरी । दहिनि आँखि नित फरकहि मोरी ॥
 देन प्रति देखौं राति कु-सपने । कहौं न तोहि मोह बस अपने ॥
 हाह करउं सखि सूत्र सुभाऊ । दाहिन वाम न जानउँ काऊ ॥

दो०—अपने चलत न आजु लागि, अनभल काहु क कीन्ह ।

केहि अघ एकहि वार मोहि, दैव दुसह-दुख दीन्ह ॥२१॥

पीहर^९ जनमु भरव^{१०} बरु जाई । जियत न करवि खवति सेवकाई ॥

कद्र और विनता नामक कश्यप मुनि की दो छियाँ थीं। सपोंकी माता का नाम कद्र और पत्नियों की माता का नाम विनता था। एक दिन कद्र ने विनता से सूर्य के घोड़े की पूछ का रंग पूछा कि, कैसा है? उसने कहा गौरा है। कद्र ने कहा काला है। इस झगड़े में निश्चय हुआ कि चलकर देखो और जिसकी बात भूठी हो वह दासी बनकर रहे। कद्र को जिताने के लिये घोड़ों की पूछ में सर्प जा लिपटे, तब कद्र ने विनता को जाकर पूछ का काला रंग दिखा दिया कि जिससे विनता लजित हो उसकी दासी होकर रहने लगी।

१ (नायक) सहायक २ सकुचकर ३ पत्नीना-श्यामा ४ दाबी ५ बुरे पाठ ६ उकठा हुआ, सूखा ७ बगुली ८ हँसनी ९ पीहर १० विताऊगी ।

'प्रिय सियरामु' कहा तुम रानी । 'रामहिं तुम प्रिय' सो फुरि बानी
रहा प्रथम अब ते दिन बीते । 'समउ फिरे रिपु मोहिं पिरीते ।
भानु' । कमल-कुल-पोषनिहारा । बिनु जर जारि करै सोइ छारा ।
जरि तुम्हारि चह सवति उखारी । रूंधहु करि उषाउ वर-वारी ॥

दो०- तुम्हहिं न सोचु, सुहाग^१ बल, निज बस जानहु राउ ।

मन-मलीन मुँहु-मीठ नृप राउर सरल-सुभाउ ॥ १८ ॥

चतुर गँभीर^२ राम-महतारी । बीचु^३ पाइ निज बात सँवारी ।
पठए भरतु भूप ननिश्रौरै । राम मातु-मत जानव रौरै^४
सेवाहिं सकल सवति मोहि नीकै । गरवित भरत मातु बल पी कैं ॥
सालु तुम्हार कौसलहि माई । कपट-चतुर नाहिं होइ जनाई ॥
राजहिं तुम पर प्रेम विसेखा । सवति^५ सुभाउ सकइ नाहिं देखी
रचि प्रपंचु^६ भूपहि अपनाई । राम-तिलक हित लगन धराई
यहु कुल उचित राम कहँ टीका । सवहि सुहाइ मोहि सुठि नीका ॥
आगिलि बात समुझि डर मोही । देउ दैव फिरि सो फलु ओही ॥

दो०- रचिपचि कोटिक कुटिलपन, कीन्होसि कपट प्रबोधु ।

कहेसि कथा सत सवति कै, जेहि विधि वाढ़ विरोधु ॥ १९ ॥

भावी बस प्रतीति उर आई । पूँछि रानि निज सपथ दिवाई ॥
का पूछहु तुम्ह अबहु न जाना । निज हित-अनहित पसु पहिचाना
भयेउ पाख^१ दिनु सजत समाजू । तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू
खाइअ पहिरिअ राज तुम्हारै । सत्य कहँ नाहिं दोषु हमारै ॥
जाँ असत्य कलु कहव बनाई । तौ विधि देइहि हमहिं सजाई ॥ १ ॥

१ सूर्य २ खाक ३ उपायरूपी सुन्दर जल से ४ (सौभाग्य) ५ गहरी, मन

के भावों को गूढ़ रखने वाली ६ अक्सर ७ आप ८ (सपत्नी) ९ पड़्यंत्र, जाल

।महि तिलकु कालि जाँ भयेऊ । तुम्ह कहँ विपति-बीजु विधि बयेऊ ॥
ख खँचाइ कहउँ बलुभाखी । भामिनि भइहु दूध कइ माखी ॥
। सुत सहित करहु सेवकाई । तौ घर रहहु न आन उपाई ॥

दो०—#कद्र विनतहि दीन्ह दुखु, तुम्हहिँ कौसिला देव ।

भरत वंदि-गृह सेइहहिँ, लषनु राम के नेव^१ ॥२०॥^१

।कय-सुता सुनत कद्रु-बानी । कहिन सकै कछु सहमि^२ सुखानी ॥
।नुपसेउ^३ कदली जिमि काँपी । कुवरी दसन जीभ तब चाँपी^४ ॥
।हि कहि कोटिक-कपट-फहानी । धीरज धरहु प्रबोधिसि रानी ॥
।गिन्हासे कठिन पढ़ाइ कुपाठू^५ । जिमि न नवै फिर उकठि^६ कु-काठू ॥
।फरा करमु प्रिय लागि कुचाली । दाकिहि^७ सराहइ मानि मराली^८ ॥
।नुनु मंथरा बात फुरि तोरी । दहिनि आँखि नित फरकहि मोरी ॥
।दिन प्रति देखौं राति कु-सपने । कहौं न तोहि मोह बस अपने ॥
।हाह करउं सखि सूध सुभाऊ । दाहिन वाम न जानउँ काऊ ॥

दो०—अपने चलत न आजु लागि, अनभल काहु क कीन्ह ।

केहि अघ एकहि बार मोहि, दैव दुसह-दुख दीन्ह ॥२१॥

।पीहर^९ जनमु भरव^{१०} वरु जाई । जियत न करवि खचति सेवकाई ॥

कद्रू और विनता नामक कश्यप मुनि की दो बियाँ थीं सर्पों की माता का नाम कद्रू और पत्नियों की माता का नाम विनता था । एक दिन कद्रू ने विनता से सूर्य के लोड़े की पूँछ का रंग पूँछा कि, कैसा है ? उसने कहा गीरा है । कद्रू ने कहा काला है । इस झगड़े में निश्चय हुआ कि चलकर देखो और जिसकी बात भूठी हो वह दासी बनकर रहे । कद्रू को जिताने के लिये घोड़ों की पूँछ में सर्प जा लिपटे, तब कद्रू ने विनता को जाकर पूँछ का काला रंग दिखा दिया कि जिससे विनता लज्जित हो उसकी दासी होकर रहने लगी ।

१ (नायब) सहायक २ सकुचकर ३ पसीना आया ४ दाबी ५ बुरे पाठ ६ उकठा हुआ, सूखा ७ बगुली ८ हँसनी ९ पीहर । १० विताऊंगी ।

शरिवस दैउ जिआवत जाहीं । मरनु नाक तेहि जीव न चाह
 दीन-वचन कह बहु-विधि रानी । सुनि कुवरी तिय-माया ठा
 अस कस कहहु मानि मन ऊना । सुखु सोहागु तुम्ह कहँ दिन
 जेहि राउर अति अनभल ताका । सो पाइहि एहु फलु परिपाका
 जवतँ कुमत सुना मैं स्वामिनि । भूख न वासर नाद न लामिनि
 पूछेउँ गुनिन्ह^१ रेख तिन्ह खाँची । भरत भुआल होहि एहु साँ
 भागिनि करहु त कहँ उपाऊ । हैं तुम्हरी सेवा-वस राज

दो०—परों रूप तुअ वचन पर, सकौं पूत^२ पति त्यागि ।
 कहसि मोर दुखु देखि बड़, कस न करव हित लागि ॥

कुवरी करि कबुली कैकेई । कपट-छुरी उर-पाहन टेई
 लगइ न रानि निकट दुखु कैस । चरइ हरित-तून बलि-पसु जैसे
 सुनत वात सृष्टु अन्त कठोरी । देति मनहुँ मधु माहुर, गुं
 कहइ चेरि सुधि अहइ कि नाहीं । स्वामिनि कहिहु कथा मोहि प
 दुइ वरदान भूप सन धाती^३ । नाँगहु आजु जुड़ावहु ध्याती
 सुतहिं राजु रामहिं जनवासू । देहु, लेहु सब सवति हुलासू ।

इंद्र की सहायता के लिये राजा दशम्य एक बार कैकेई को साथ ले
 से युद्ध करने गये । युद्ध में रथ की बुरी टूट गई । कैकेई ने अपने हाथ के महान
 रथ को ज्यों का त्यों सजा रखा । जब राजा विजय पाकर रथ से उतरे
 यह हाल देता तब प्रसन्न हो, रानी से कहा कि तेरी मदद से जीत हुई है, तू
 चर मांग । कैकेई ने कहा मेरे ये दो वर श्राप पर धार रहे, जब चाहूँगी तब मांग लूँ

१ शिगम होकर २ परिपाक, भोग ३ (यामिन) रात्रि ४ ज्योतिष
 ५ पुत्र । * में रूपक कर्म धाम्य गमान, रूपक अलंकार ६ बलि देने वाले पशु
 हरी हरी घास आदि पदार्थ दिये जाते हैं; वह मुस होकर खाता है, मगर *
 के इ-यों का उसे जरा भी ज्ञान नहीं ७ धरोहर ८ परचन अलंकार-जहां
 वस्तु को देकर हमरी ली जाय ।

पतिः राम-सपथ जब करई । तव मांगेहु जेहि बचनुन टरई ॥
इ अकाजु आजु निस्सि बतिते । बचनु मोर प्रिय मानहु जीते ॥

दो०-बड़ कुघातु करि पातिकिनि, कहेसि कोप-गृह जाहु ।

काजु सवारेहु सजगः सबु, सहसा^२ जनि पतिआहु ॥२३॥

बनिहि रानि प्रान-प्रिय जानी । बार बार बड़ि बुद्धि बखानी ॥
हि सम हितु न मोर संसारा । ब्रहे जात कह भइसि अधारा^३ ॥
विधि पुरब मनोरथ काली । करौ तोहि चख-पूतरि^४ आली ॥
हु विधि चेरिहि आदरु देई । कोप भवन गवनी कैकेई ॥
विपति वीजु बरषाञ्जु चैरी । भुई भइ कुमति* कैकेई केरी ॥
इ कपट-जलु अंकुर जामा^५ । वर^६ दोउ दल^७ दुख फल परिनामा ॥
कोप-समाजु साजि सबु सोई । राजु करत निज कुमति विगोई^८ ॥
उर नगर कोलाहलु होई । यह कुचालि कछु जान न कोई ॥

दो०-प्रमुदित पुर-नर-नारि सब, सजहिं सु-मंगलचार ।

एक प्रविसहिं एक निरगसहिं^९, भीर भूप-दरवार ॥ २४ ॥

बाल-सखा सुन हिय^१ हरषाहीं । मिलि दस पाँच राम पहिं जाहीं ॥
प्रभु आदरहिं प्रेम पहिंचानी । पूँछहिं कुसल-पेम जूटु-वानी ॥
फिरहिं भवन प्रिय आर्यसु पाई । करत परसपर राम बड़ाई ॥
को रघुवीर-सरिस^{१०} संसारा । सीलु-सनेहु निवाहनि-हारा ॥
जेहि जेहि जोनि करम वस भ्रमहीं । तहँ तहँ ईसु देउ^{११} यह हमहीं ॥
सेवक हम स्वामी सियनाहू । होइ ज्ञात एहु और निवाहू ॥
अस अभिलाषु नगर सब फाहू । कैकय-लुता हृदय अतिदाहू ॥

१ चैतन्य २ शीघ्र ३ सहारा ४ आँख की पुतली, * सम श्रमेद-रूपक-अलङ्कार

५ 'मति ही कुत्सित' कर्मधारय, बहुव्रीहि में 'कुत्सित है मति जिसकी' ऐसा विग्रह होगा ६ जमा निकला ७ वरदान ८ पत्ते ९ जाते हैं । १० (सद्यः) † नष्ट की

को न कु-संगति पाइ नसाई । रहै न नीच मते चतुराई

दो० साँझ समय सानंद नृप, गण्ड कँकेयी-गेह ।

गवन निठुरता निकट किय, जनु धरि देह सनेह* ॥२५॥

कोप भवन सुनि सकुचेउ राज । भयवस अगहुड^१ परइ न पाऊ
सुर-पति वसइ घाँह बल जाके । नर-पति सकल रहहिँ रुख ताके
सो सुनि तिय-रिउ गयेउ सुखाई । देखहु काम प्रताप षडाई
सूल कुलिस आसि अँगवनिहारे^२ । ते राति-नाथ^३ सुमन-सर^४
सभय^५ नरेसु प्रिया पहिँ गयेऊ । देखि दसा दुख दारुन भयेऊ
भूमि-सयन पट्ट मोट पुराना । दिए डारि तन भूपन नाना
कुमतिहिँ फसि कुवेषता फावी । अन-अहिवातु सूच जनु भाव
जाइ निकट नृपु कह मृदुबानी । प्रान-प्रिया केहि हेतु रिसानी

छं० केहि हेतु रानि रिसानि-परसत पानि पतिहिँ निवारई^६,

मानहुँ सरोष-भुअंग-भामिनि^७ विषय भाँति निहारई ।

दोउ वासना^८ रसना^९ दसन बर^{१०} मरम ठाहर^{११} देखै,

तुलसी नृपति भवितव्यतायस काम-कौतुक लेखई ॥

सो० बार बार कह राउ, सुमुखि सुलोचनि पिक-वचनि ।

कारन मोहि लुनाउ, गज-गामिनि निज कोप कर ॥२६॥

अनहित^{१२} तोर प्रिया केइ कीन्हा । केहि दुइ-सिर केहि जम चहली
कहु केहि रंकाहि करउँ नरेसु । कहु केहि नृपहिँ निकारउँ
सकउँ तोर अरि अमरउ मारी । काह कीट बगुरे नर-नापी
जानसि मोर सुभाउ बरोरू^{१३} । मन तव आनन-चंद-चको

* उत्प्रेक्षा अलङ्कार १ आगे २ सहने वाले ३ कामदेव ४ फूलों के
५ डरते हुए ६ मानों भावी रणायु की सूचना है । ७ हाथ छूने से रोकती है । ७
८ इच्छा ९ जीभ, १० वरदान ११ मर्मस्थान १२ बुरा १३ सुन्दर जंघा वाली

प्रिया, प्रान सुत सरबसु मोरें । परिजन' प्रजा सकल बस तोरें ॥
 जौं कछु कहउँ कपट फरि तोहीं । भामिनि राम-सपथ-सत मोहीं ॥
 बिहँसि माँगु मन-भावति घाता । भूषन सजहि मनोहर गाता ॥
 प्ररी कुघरी समुक्ति जिय देखू । बेगि प्रिया परिहरहि कुवेषू ॥

दो०—यह सुनि मन गुनि सपथ बढ़ि, बिहँसि उठी मति-मंद ।
 भूषन सजति बिलोकि मृगु, मनहुँ किरातिनि फंद ॥२७॥

पुनि कह राउ सुहृद जिअ जानी । प्रेम पुलकि मृदु मंजुल बानी ॥
 भामिनि भयेउ तोर मवभावा । घरघर नगर अनंद-बधावा ॥
 रामहिं देउँ कालि जुवराजू । सजहि सु-लोचनि मंगल-साजू ॥
 इलकि^२ उठेउ सुनि हृदय कठोरू । जनु छुइ गयेउ पाक बरतोरू^३ ॥
 ऐसिउ पीर बिहँसि तेइ गोई^४ । चोर नारि जिमि प्रगटिं न रोई ॥
 लखी न भूप कपट-चतुराई । कोटि कुटिल मनि गुरू पढ़ाई ॥
 जद्यपि नीति-निपुन^५ नरनाहू । नारि-चरित जलनिधि-श्रवगाहू^६ ॥
 कपट-सनेहु बढ़ाइ बहोरी ! बोली बिहँसि नयन मुँहुँ मोरी ॥

दो०—माँगु माँगु पै कहहुँ पिय, कबहुँ न देहु न लेहु ॥
 देन कहेंहु वरदान दुइ, तेउ पावत संदेहु ॥२८॥

जानेउं मरसु राउ हँसि कहई । तुम्हहिं कोहाव^७ परमप्रिय अहई ॥
 दधाती राखि न माँगेंहु काऊ । बिसरि गयेउ मोहि भोर सुभाऊ ॥
 किछुडेहु हमहिं दोषु जनि देहू । दुइ कै चारि मांगि मकु लेहू ॥
 प्रियकुल-रीति सदा चालि आई । प्रान जाँहु बरु, बचनु न जाई ॥
 नहिं असत्य-सम पातक^८ पुंजा । गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा ॥

१ कुटुम्ब २ चौकपड़ी ३ चारतोड़ ४ छिपाली ५ नीति में निपुण
 (सप्तमी तत्पु०) ६ अथाह समुद्र ७ रुठना ८ पाप ।

आगे दीखि जरति रिस भारी । मनहु रोप - तरवारि उघारी^१
 मूठि कुबुद्धि धार निठुराई । धरी कूवरी सान बनाई
 लखी महीप कराल कठोरा । सत्य कि जीवनु लेइहि मोरा
 बोले राउ कठिन करि छाती । बानी सविनय तासु सोहाती ।
 प्रिया बचन कस कहसि दुःभाँती । भीरु प्रतीति प्रीति करि हाँती
 मोरें भरतु रामु दुइ आँखी । सत्य कहाँ करि संकर साखी
 श्रवासि दूत में पठउप प्राता । ऐहहि बेगि सुनत दोउ भ्राता
 सुदिन सोधि सबु साजु सजाई । देउँ भरत कहँ राजु वजाई

दो०—लोभु न रामहि राजु कर, बहुत भरत पर प्रीति ।

मैं दड़ छोट विचारि जिय, करत रहेउँ नृपनीति ॥३२॥

राम-सपथ-सत कहाँ सुभाऊ । राममातु कछु कहेऊ न काऊ
 मैं सयु कान्हि तोहि बिनु पूँछें । तेहि तें परेउ मनोरथ छूँछें^१
 रिस परिहरु अब मंगल साजू । कछु दिन गप भरत जुबराजू
 एकहि बात मोहि दुखु लागी । यर दूसर असमंजस^२ माँगा
 अजहँ हृदउ जरत तेहि आँचा । रिस परिहास कि साँचेहु साँचा
 कहु तजि रोपु राम-अपराधू । सयु कोउ कहै रामु सुठि^३ साधू
 तुहँ सराहसि करलि सनेहू । अब सुनि मोहि भयेउ संदेह
 जासु सुभाउ अरिहि-अनुकूला । सो किमि करिहि मातुप्रतिकूला

दो० प्रिया हास रिस परिहरहि, माँगु विचारि विवेकु ।

जेहि देखौँ अब नयन भरि, भरत-राज-अभिषेकु ॥ ३३

जिअइ मीन बरु वारि विहीना । मनि विनु फनिकु जिअइ दुख दीनि

^१ नंगी—सावयव सम-श्रमेद-रूपक और वत्पेक्षा मिश्रित १ चाली २ वि
 भरा हुआ ३ (सौंठ) श्रंठ ।

कहाँ सुभाउ न छलु मन माहीं । जीवन मोर राम बिनु नाहीं ॥
समुझि देखु जिय प्रिया प्रबाना । जीवनु राम-दरस-आधीना ॥
सुनि मृदुवचन कुमति असि जरई । मनहुँ अनल आहुति घृत परई ॥
कहै करहु किन कोटि उपाया । इहाँ न लागिहिँ राउरि-माया ॥
देहु किं लेहु अजसु करि नाहीं । मोहि न बहुत प्रपंच सोहाहीं ॥
रामु साधु तुम्ह साधु सयाने । राममातु भलि सब पहिचाने ॥
जस कौसिला मोर भल ताका । तस फलु उन्हहिँ देउँ करि साका ॥

दो० होत प्रातु मुनिबेष धरि, जौं न रामु बन जाहिँ ।

मोर मरनु राउर अजसु, नृप समुझिअ मन माहिँ ॥३४॥

असि कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी । मानहु रोष-तरंगिनि^१ बाढ़ी ॥
पाप-प्रहार प्रगट भै सोई । भरी क्रोध जल जाइ न जोई^२ ।
दोउ बर कुल^३ कठिन हठ धारा । भँवर कूबरी - वचन - प्रचारा ।
ढाहत^४ भूपरूप तरुमूला । चली विपति-वारिधि अनुकूला ।
लखी नरेस बात सब साँची । तियमिसु मीचु^५ सीस पर नाची ॥
गहि पद विनय कीन्हि बैठारी । जनि दिन-कर कुल होसि कुठारी^६ ॥
माँगु माथ अबहाँ देउँ तोही । रामबिरह जनि मारसि मोही ॥
राखु राम कहँ जेहि तेहि भाँती । नाहिँ त जरिहि जनम भरि छाती ॥

दो०—देखी व्याधि असाधि^७ नृपु परेउ धरनि धुनि माथ ।

कहत परम आरतवचन राम राम रघुनाथ ॥ ३५ ॥

न्याकुल राउ सिधिल सब गाता । करिनि^८ कल्प-तरु मनहुँ निपाता ।
कंडु सूख मुख आव न बानी । जनि पाठीनु^९ दीनु बिनु पानी ।

* व्याजस्तुति श्लंकारः—(जहाँ निदा में स्तुति और स्तुति में निदा हो
१ क्रोध की नदी २ देखने से भय होता है ३ किनारा ४ गिराती है ५ मृत
६ कुठारी ७ (असाध्य) ८ हथिनी ९ मछली ।

पुनि कह कहु कठोर कैकेई । मनहु घाय महुँ माहुर' देखे ।
 जौं अंतहु अस करतयु रहेऊ । यँगु यँगु तुम्ह केहि बल कहेऊ ॥
 दुई कि होहि एक लमय भुआला । हँसय ठठाइ फुलाउव गाला ॥
 दानि कहाउव अरु कृपनाई । होइ कि क्षेम कुसल राँताई ॥
 छाँड़हु वचन कि धीरजु धरहु । जनि अवला जिमि कहना करहु ॥
 तनु तिय तनय धासु धनु धरनी । सत्य-संध' कहँ तृनसम वरनी ॥

दो०—मरमवचन' सुनि राउ कह कहु कहुँ दोष न तोर ।
 लागेउ तोहि पिसाच जिमि कालु कहावत मोर ॥२६॥

चहत न भरत भूपतहिँ भोरें । विधिबल कुमति' बसी जिय तोरें ॥
 सो लयु मोर पापपरिनाशू । अयेउ फुटाहर' जेहि विधि वामू ॥
 सुवल बसिहि फारि अयध सुहाई । लय गुनधाम राम-प्रभुताई ॥
 कारहिहिँ भाइ सकल सेयनाई । होइहि तिहुँ पुर रामवड़ाई ॥
 तोर कलंकु मोर पछिताऊ । सुयेहु न मिटिहि न जाइहि फाऊ ॥
 अय तोहि नीक लाग करु सोई । लोचन-आद वैठु सुहुँ गोई ॥
 जव लागि जिअँउ कहाँ कर जोरी । तय लागि जनु कहु कहसि वहोरी ॥
 फिर पछितैहसि अंत अभागी । प्रारसि गाइ नहाऊ' लागी ॥

दो०—परेउ राउ कहि कोटि विधि, फाहे करलि निदानु' ।

कपटसयानि न कहति कहु, जायत मनहुँ मसानि' ॥२७॥

राम राम रट विकल भुआलू । जनु विनु पंख चिहंग वेहालू ॥
 हृदय मनाव श्रीरु जनु होई । रामहिँ जाइ कहै जनि-कोई ॥
 उदय करहु जनि रवि रघुकुलगुर । अयध दिलोकि लूल होइहि उर ॥

१ विष २ शूरता ३ सत्य प्रतिज्ञा वाले ४ हृदय को वेधने वाले । ५ बुरी मति (कर्मधारय) ६ कु-उमय ७ नाहर वा तांत प्र अंत सर्वनाश ८ तांत्रिक प्रयोग है—

जगति समय मौन धारण किया जाता है ।

भूप्रीति कैकई काठिनार्ई । उभय अवध विधिरची बनाई ॥
बिलपत नृपहि भयेउ भिनुसारा^१ । वाना-वेनु संख-धुनि द्वारा ॥
पढ़हि भाट गुन गावहि गायक । सुनत नृपहि जनु लागहि सायक ।
मंगल सकल सुहाहि न कैसैं । सहगामिनिहि^२ विभूपन जैसे ॥
तेहि निसि नौद परी नहि काह । राम-दरस-लालसा उछाह ॥

दो०-द्वार भीर सेवक सचिव, कहाहि उदित रवि देखि ।

जागे अजहुँ न अवधप्रति, कारनु कवनु विसेखि ॥ ३० ॥

पल्लिले पहर भूपु नित जागा । आजु हमहि वड़ अचरजु लाग़ा ॥
जाहु सुमंत्र जगावहु जाई । कीजिअ काज रजायसु^३ पाई ॥
गए सुमंत्रु तव राउर माहीं । देखि भयावन जात डेराहीं ॥
ध्राइ खाइ जनु जाइ न हेरा । मानहुँ विपति विषाद — बसेरा ॥
पूँछु कोउ न ऊनरु देई । गए जेहि भवन भूप कैकई ॥
कहि जयजीव बँठ सिर नाई । देखि भूपगति गयेउ सुखाई ।
सोच विकल विवरन^४ दहि परेऊ । मानहुँ कमलमूलु परिहरेऊ^५ ।
सचिव सभित सकै नहि पूँछी । बोली असुभमरी सुभछूँछी ।

दो—परी न राजहि नौद निसि हेतु जान जगदीसु ॥

रामु रामु रटि भोरु किय कहै न मरमु^६ महीसु ॥ ३१ ॥

आनहु रामाहि बेनि बोलाई । समाचार तव पूँछहु^७ आई
चलेउ सुमंत्रु रायरुल जानी । लखी कुचालि कीन्हि कजु रानी
सोच विकल मग परै न पाऊ । रामाहि बोलि कहाहि का राऊ
उर धरि धीरजु गयेउ दुआरें । पूँछहि सकल देखि मनुमारें

१ सवेरा २ सती (सती जी को पति के साथ जलने से पहिले वखाभूप-
पहिनने पड़ते थे) ३ आज्ञा ४ शरीर काला पड़ा हुआ है । ५ नद, उखड़ गई ही । ६ भे

समाधान करि सो सबही का । गयेउ जहाँ दिन कर-कुल-टीका ॥
 राम सुमंत्रहि आवत देखा । आदरु कीन्ह पितासम लेखा ॥
 निरखि वदनु कहि भूपरजाई । रघु-कुल-दीपहि चलेउ लेवाई ॥
 राम कुभाँति सचिव संग जाहीं । देखि लोग जहँ तहँ बिलखाहीं ॥

दो० जाइ देखि रघु-वंस-मनि, नरपति निपट कुसाजु ।

सहमि परेउ लखि सिधिनिहि मनहु वृद्ध गजराजु ॥४०॥

सूखाहि अधर जरै सबु अंगू । मनहुँ दानि मनिहीन भुअंगू ॥
 सरुख समीप देख कैकेई । मानहुँ मीचु घरी गनि लेई ॥
 करुनामय मृदु राम-सुभाऊ । प्रथम दीख दुखु सुना न काऊ ॥
 तदपि धीर धरि समउ विचारी । पूँछी मधुरबचन महतारी ॥
 मोहि कहु मातु ताव-दुख-कारन । करिअ जतन जेहि होइ निवारन ॥
 तुनहु राम सब कारन एहू । राजहि तुम्ह पर बहुत सनेहू ॥
 हेन कहोन्हि मोहि दुइ वरदाना । माँगेउ जो कछु मोहि सुहाना ॥
 सो सुनि भयेउ भूप उर सोचू । छाँडि न सकाहि तुम्हार संकोचू ॥

दो०—सुत-सनेहु इत वचनु उत, संकट परेउ नरेसु ।

सकहु त आयसु धरहु सिर, मेटहु कठिन कलेसु ॥४१॥

नेधरक बैठि कहै कहु वानी । सुनत कठिनता अति अकुलानी ॥
 तीभ कमान, वचन सर माना । मनहुँ महिप मृदु-लच्छ-समाना ॥
 तनु कटोरपनु धरै सरीरू । सिखै धनुषविद्या वर वीरू ॥
 तबु प्रसंगु रघुपतिहि सुनाई । बैठि मनहुँ तनु धरि निठुराई ॥
 इन मुसकाइ भानु-कुल-भानू । रामु सहज-आनंद-निधानू ॥

१ रघुकुल के दीपक २ बुगी तरह ३ क्रोधित ४ रोक ५ कीमल निशाना
 ६ श्रेष्ठवली ७ भानुकुल के भानु, अथवा भानुकुल में भानु ।

वाले बचन विगत सब दूषण' । मृदु मंजुल जनु बागबिभूषण ॥
सुनु जननी सोइ सुतु वड़ भागी । जो पितु-मातु-बचन-अनुरागी ॥
तनय मातु-पितु-तोषनि-हारा । दुर्लभ जननि सकल संसारा ॥

दो०—मुनिगन मिलनु विसेषि वन, सबहि भाँति हित मोर ।
तेहि मँह पितुआयसु बहुरि, संमत^२ जननी तोर ॥४२॥

भरतु प्रानप्रिय पावाहिं राजू । बिधि सब बिधि मोहिं सनमुख आजू ॥
जाँ न जाउँ वन ऐसेहु काजा । प्रथम गनिअ मोहि मूढ़समाजा ॥
सेवहिं अरँडु कलपतरु त्यागी । परिहरि अमृतु लेहिं बिषु माँगी ॥
तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं । देखु बिचारि मातु मन माहीं ॥
अब एकु दुखु मोहिं विसेषी । निपट बिकल नरनायकु देखी ॥
थोरिहि वात पितहि दुख भारी । होति प्रतीति न मोहिं महतारी ॥
राउ धीरु गुन - उदाधि - अगाधू । भा मोहि तँ कछु बड़ अपराधू ॥
जाते मोहि न कहत कछु राऊ । मोरि सपथ तोहि कह सतिभाऊ ॥

दो०—सहज सरल रघुवर-बचन, कुमति कुटिल करि जान ।

चलइ जाँक जल बक्रगति, जद्यपि सलिल समान ॥ ४३ ॥

रहसी^१ रानि रामरुख पाई । बोली कपटसनेह जनाई ॥
सपथ तुम्हार, भरत के आना । हेतु न दूसर मैं कछु जाना ॥
तुम्ह अपराधु जोग्यु नहिं ताता । जननी-जनक-बंधु-सुख-दाता ॥
राम सत्य सबु जो कुछ कहहू । तुम्ह पितु-मातु-बचन-रत अहहू ॥
पितहिं बुझाई कहहु, बलि, सोई । चौधेपन जेहिं अजसु न होई ॥
तुम्ह सम सुअन सुकृत^३ जेहिं दीन्हे । उचित न तासु निरादर कीन्हे ॥

१ 'सब दूषण-विगत मृदु-मंजुल' यह सब बचन विशेष्य के विशेषण है ।

२ समर्थन की हुई ३ प्रसन्न हुई । ४ पुण्य (कर्त्ता कारक में) जिहि सुकृत से

...वसका निरादर आदि २ ।

लागहिं कुमुख वचन सुभ्र कैले । मगह^१ गवादिक तीरथ जैसे ॥
रामहिं मातुवचन सब साध । जिमि सुरसारिगत सलिल सुहाय ॥

दो०--गइ मुखड़ा, रामहिं सुमिरि, नृप फिरि करवट लीन्ह ॥
सचिव रामआगमन कहि, विनय समयसम कीन्ह ॥ ४४ ॥

श्रवनिप^२ श्रकनि^३ रामु पगु धारे । धरि धीरजु तव नयन उधारे ॥
सचिव लैभारि राउ^४ वैठारे । चरनु परत नृप रामु निहारे ॥
लिये सनेहपिकल उर^५ लाई । मै मनि मनहुँ फनिक^६ फिरि पाई ।
रामहिं चितै रहैउ नरनाहू । चला विलोचन वारिप्रबाहू ।
सोकविवसै कछु कहै न पारा^७ । हृदय लगावत चारहिं वारा ।
विधिहिं मनाव राउ मन माहीं । जोहिं रघुनाथ न फानन जाहीं ।
सुमिरि महेसहि कहै निहारी । विनती सुनहु सदा सिव मोरी ।
आस्तुतोप^८ लुह्र अवढर^९ दानी । आरति हरहु दीन जनु जानी ।

दो०--तुम्ह प्रेरक^{१०} सब के हृदय, सो मति रामहिं देहु ।

धचनु मोर लजि रहाहिं घर, परिहरि सीलु सनेहु ॥ ४५ ॥

अजतु होउ जग सुजसु नसाऊँ । नरक परौं बरु सुरपुर जाऊँ
सब दुख दुसइ सहावउ मोहीं । लोचनओइ रामु जनि होहीं
अक्ष मन गुनै राउ नहिं वोला । पीपर-पात-सरिस मनु डोला
रघुपति पितहि प्रेम-वस जानी । पुनि कछु कहिहि मातु अनुमानी
देस काल अवसर अनुसारी । वोले वचन विनीत विचारी
नात कहाँ कछु करौं ठिठाई । अनुचित कृमव जानि लरिकारै
अति-लघु वाते लागि दुख पावा । काहु न मोहिं कहि प्रथम जनावा

१ मगपदेश २ (श्रवनि-प,) राजा ३ सुना ४ सांप ५ सकना क्रिया
अर्थ में ६ शीघ्र संतुष्ट होने वाले, ७ अट्ट न प्रेरणा करने वाले ।

। गोसाँइहि पूछेउँ माता । सुनि प्रसंगु' भए सीतल गाता ॥

०—मंगलसमय सनेहबस, सोच परिहरिअ तात ।

श्रायसु देइअ हरषि हिय, कहि पुलके प्रभुगात ॥ ४६ ॥

र जनमु जगतीतल^२ तासू । पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू ।
रे पदारथ करतल ताके । प्रिय पितुमातु प्रानसम जाके ॥
यसु पालि जनमफलु पाई । ऐहौ बेगिहि होउ रजाई^३ ॥
इ मातु सन आवा माँगी । चलिहौ बनहि धहुरि पग लागी ।
उ कहि रामु गवनु तब कीन्हा । भूप सोकबस उतरु न दीन्हा ॥
ए व्यापि गइ बात सुतीछी^४ । छुअत चढ़ी जनु सब तेन बीछी ॥
ते भए विकल सकल नर नारी । वेति धिटप जिमि देखि दवारी^५ ॥
जहँ सुनइ धुनइ सिर सोई । बड़ विपादु^६ नहि धीरजु होई ॥

१०—मुख सुखाहि लोचन सखाहि^७, सोकु न हृदय समाइ ।

मनहुँ* करन रस-कटकई, उनरी अवध बजाइ ॥ ४७ ॥

लिहि माँझ विधि बात विगारी । जहँ तहँ देहि कैकइहि गारी ॥
हि पापिनिहि वृष्णि का परेऊ । छाइ भवन पर पावकु धरेऊ ॥
ज कर नयन काडि चह दीखा । डारि सुधा विषु चाहति चीखा ॥
दिल कठोर कुबुद्धि अभागी । भइ रघु-बंस-बेनु-बन आगी ॥
लिव पैठि पेहु एहि काटा । सुख महुँ सोक ठाटु धरि ठाटा ॥
दा रामु एहि प्रानसमाना । कारन कवन कुदिलपनु ठाना ॥
तिय कहाहि कधि नारिसुभाऊ । सब विधि अगहु अगाध दुराऊ ॥
राज प्रतिविदु वरुकं गहि जाई । जानि न जाइ नारिगति भाई ॥

१ हाल २ पृष्ठी पर ३ आज्ञा ४ (तीक्ष्ण) ५ आगि ६ दुःख ७ चुचाते हैं
देखी परिशिष्ट स 'व' ।

दो०—काह न पावकु जारि सक, का न समुद्र समाइ ।

का न करै अयला प्रचल, केहि जग कालु न खाइ ॥ ४८ ॥

का सुनाइ विधि काह सुनावा । का देखाइ चह काह देखावा ।
एक कहहि भल भूप न कान्हा । वरु विचारि नहि कुमतिहि^१ दीना
जो हठि भयेउ सकल दुख-भाजनु । अयला विवस ग्यानु गुनु गा जनु
एक धरम-परमिति^२ पहिचाने । नृपहि दोसु नहि देहि सयाने
सिवि-दधीचि-हरिचंद-कहानी । एक एक सन कहहि बखानी
एक भरत कर संमत^३ कहहीं । एक उदास-भाय सुनि रहहीं
कान मूँदि कर रद^४ गहि जीहा । एक कहहि यह बात अलीहा^५
सुकुत जाहि अस कहत तुम्हारि । राम भरत कहैं प्राना^६ पियारि

दो०—चंद्रु चवइ वरु अनलकन^१, सुधा होइ विप तूल^२ ।

सपनेहुँ कवहुँ न कराहि किछु, भरतु रामप्रतिकूल ॥ ४९ ॥

१ (बहुत्राहि में अर्थ) २ धरम की मर्यादा । ३ सलाह से ४ दांत ५ अली

६ अग्नि-कण ७ विष तुल्य

ऋष्यवश में राजा हरिश्चन्द्र बड़ा धर्मात्मा था । एक बार वशिष्ठजी
विश्वामित्र से इसके दान और सत्य को सराहा तो उन्होंने परीक्षा करने को
राज्य मांगा, और जब उसने दान दिया तब दक्षिणा मांगी परन्तु उसके
कहां थी जी देता । यह कहा कि मैं नौकरी करके दूंगा । उन्होंने कहा हम यहाँ
भी न करने देंगे । तब राजा काशी में विकने गये । जब विश्वामित्र दी
लेने पहुंचे तब राजा ने पुत्र स्त्री को बेच कर कुछ धन दिया और फिर शेष
लिये आपने चांडाल की नौकरी की और स्मशान पर 'कर उगाहना स्वीकार
ऋषि की दक्षिणा चुकाई । कुछ काल में जब इसका पुत्र मरगया और उसकी
लहके को स्मशान पर लेगई तो राजा ने इसमें भी कर मांगा और आधीनता
पर भी न माना । जब स्त्री ने दुखी हो आधा वस्त्र फाडने को हाथ किया
समय भगवान् ने आकर हाथ रोका और प्रसन्न हो पुत्रको जिला कर फिर शेष
के राज-सिंहासन पर बैठाया और अन्त में सब को मुक्ति दी ॥

बिधातहि दूषनु देहीं । सुधा देखाइ दीन्ह बिषु जेहीं ॥
 व 'नगर सोचु सब काह । दुसह दाहु उर मिटा उछाह ॥
 धू कुलमान्य जठेरी^२ । जे प्रिय परम कैकई केरी ॥
 देन सिख सीलु^३ सराही । बचन बानसम लागहि ताही ॥
 न मोहि प्रिय रामसमाना । सदा कहहु यहु सबु जगु जाना ॥
 राम पर सहजसनेह^४ । केहि अपराध आजु बनु देह ॥
 न कियेहु सवति आरेसू^५ । प्रीति प्रतीति जान सबु देसू ॥
 त्या अब काह बिगारा । तुम्ह जेहि लागि बज्र पुर पारा ॥

—सीय कि पिय सँगु परिहरिहि लषनु कि रहिहहि धाम ।
 राजु कि भूजब^६ भरत पुर नृपु कि जिइहि विनु राम ॥५०॥

बिचारि उर छाड़हु कोह । सोक कलंककोठि^१ जनि होह ॥
 हिं श्रवसि देहु जुबराजू । कानन काह राम कर काजू ॥
 एन रामु राज के भूके । धरमधुरीन विषयरस रूखे ॥
 एह यसहु रामु तजि गेह । नृप सन अस बर दूसर लेह ॥
 नहिं लगिहहु कहँ हमारें । नहिं लागिहि कछु हाथ तुम्हारें ॥
 परिहास^२ कीन्हि कछु होई । तौ कहि प्रगट जनावहु सोई ॥
 सारस सुत कानन जोगू । काह कहहि सुनि तुम्ह कहँ लोगू ॥
 वेगि सोइ करहु उपाई । जेहि विधि सोकु कलंकु नसाई ॥

१ खलबली २ बड़ी वृद्धी ३ मुखवत ४ परेखा ५ भोगेंगे ६ खाई, सीमा ।
 ती ।

छंद—छेहि भाँति सोकु कलंकु जाइ उपाय करि कुल पाह
 हटि फेरु रामहिं जात बन जनि वात दूसरि चा
 जिमि भानु विनु दिनु, प्राण विनु तनु, चंडु विनु जिमि जा
 तिमि अवध तुलसीदासप्रभु विनु समुभि धौं जिय भाँ

सो०—सखिन्ह सिखावनु दोन्ह, सुनत मधुर परिनाम हित ।
 तेई कछु कान न कीन्ह, कुटिल प्रबोधी कूवरी ॥

उतरु न देखे दुसह रिस रुखी मृगिन्ह चितव जनु वाधनि
 व्याधि असात्रि जानि तिन्ह त्यागी । चलीं कहत मतिमंद अ
 राजु करत येह देव विगोई १ । कीन्हेसि अस लस करै न
 पहि विशि दितपहि-पुर-नर-नारी । देहिं कुचालेहि कोटिक ग
 जरहिं विषमजर, लेहिं उलासा । कवनि राम विनु जीवन आ
 विपुल वियोग प्रजा अकुलानी । जनु जल-चर-गन सूखत पा
 अतिविपाद सब लोग लोगई । गय मातु पहि रामु गोम
 सुखु प्रसन्न चित चौगुन चाऊ । मिय सोचु जनि राखद
 प्र

दो०— नवगर्बदु २ रघुवीरमनु, राजु अलान ३ समान ।

छूट जानि बनगवनु सुनि, उर अनंदु अधिकां ॥५२॥

रघुकुल तिलक जोरि दोउ हाथा । बुद्धि मातु-पद नायेउ म
 दीन्हि असील लाइ उर लीन्डे । भूपनवसन निजावनि की
 वार दार मुख खुवनि मगता । नयन-नेहजलु पुलकित गा
 सोइ राखि पुनि हृदय लभाए । स्वयत प्रेमरस पयद नृह
 प्रेमप्रमोदु न कछु काहे जाई । रंक १ धनदपदवी २ जनु ग

१ गत्रि २ कूवरी ३ (भंडविगोया) जनि, लगव क्रिया ४ नया

५ हाथी वंशने की मूँकर ६ गरीब ७ कनेर

सुंदर बदन निहारी । बोली मधुर वचन महतारी ॥
तात जननी बलिहारी । कबहिन लगन सुद-मंगल-कारी ॥
सील सुख सीब लुहाई । जनमलाध कै अवधि अघाई ॥

जोहि चाहत नरनारि सब, अति आरत^२ एहि भाँति ।

जिमि चातक चातकि तृषित, वृष्टि सरद रितु स्वाति ॥५३॥

जाउँ बलि बेगि नहाहू । जो मन भाव मधुर कछु खाहू ॥

समाप तब जायेहु भैया । भै बड़ि वार^३ जाइ बलि^४ मैया ।

चन सुनि अति अबुकूला । जनु स्नेह-सुर-तर^५ के फूला ॥

करंद^६ भरे स्त्रियमूला^७ । निरखि राम-मनु-भँवरु न भूला ॥

गुरीन^८ धरमगति जानी । कहेउ मातु लन अति सृदु-वानी ॥

दीन्ह मोहि कानन राजू । जहँ लब भाँति मोर, बड़ काजू ॥

तु देहि मुदित मन माता । जोहि सुदमंगल कानन जाता ॥

सनेहवस डरपसि भोरें । आनँदु अंब अनुग्रह तोरें ॥

—वरष चारि दस विपिन बलि, करि पितु-वचन-प्रमान ।

आह पाय पुनि देखिहौं, मन जानि करसि मलान ॥५४॥

विनीत मधुर रघुवर के । सर^९सम लगे मातुउर करके^{१०} ॥

म सुखि सुनि सीतल वानी । जिमि जवाल परे पादल पानी ॥

न जाह कछु हृदय-विषादू । मनहुँ सृगी सुनि केहरि-नादू^{११} ॥

सजल तन थरथर काँपी । माँजहि^{१२}, खाइ मीन जनु माँपी ॥

धीरजु सुतबदनु निहारी । गदगद-वचन कहति महतारी ॥

पितहि तुम्ह प्रानपियारे । देखि मुदित नित चरित तुम्हारे ॥

१ पूर्ण २ दुषी ३ देर ४ बलिहारी ५ स्नेह रूपी कल्प वृक्ष । ६ रस ७

वृक्ष की मूल ८ विशेषीक्ति अलंकार—प्रबल हेतु होने पर भी कार्य न हो । ९ धरम-

धर्म को आगे से खींचने वाले । १० वाण १० करकना क्रिया का सामान्य

ता रूप ११ सिद्ध-ध्वनि १२ पहले चरसाती प्रवाह में उत्पन्न हुए भाग ।

राजु देन कहँ सुभ दिन साधा' । कहेउ जान बन केहि
तात सुजाबहु मोहि निदानू' । को दिन-कर-कुल भयेउ

दो०- निरखि रामरुख सचिवसुत, कारनु कहेउ बुझाइ ।

सुनि प्रसंगु रहि मूक' जिमि दसा बरानि नहि

राखि न सकै न कहि सक जाहू । दुहँ भाँति उर दाखन
लिखत सुधाकर' गा लिखि राहू । बिधिगति बाम' सदा
धरम सनेह उभय मति बेरी । मै गति सांप छुबुंदरि
राखौ सुतहि करौ अनुरोधू । धरम जाइ अरु
कहाँ जान बन तौ वडि हानी । संकट-सोच-बिबस, मै
बहुरि समुक्ति तियधरमु सयानी । रामुभरतु दोउ सुत सम
सरल सुभाउ रामसहतारी । घोली बचन धीर धरि
तात जाउँ बलि कीन्हेहु नीका । पितुआयसु सब धरम क

दो०—राजु देन कहि दाँन्ह वनु, मोहि न सो दुख

तुम्ह बिनु भरतहि भूपतिहि, प्रजहि प्रचंड कलेसु

जौं केवल पितु-आयसु ताता । तौ जनि जाहु जानि बडि
जौं पितुमातु कहेउ बन जाना । तौ कानन सत-अवध-स
पितु बनदेव मातु बनदेवी । खग मृग चरनसरौरुह
अंतहु उचित नृपहि बनबाजू । वय' बिलोकि हिय होइ
वडभागी वनु, अवध अभागी । जो रघु-वंस-तिकल तुम्ह
जौं सुत कहाँ संग मोहि लेहू । तुम्हरे हृदय होइ
पूत परमप्रिय तुम्ह सबही के । प्रान प्रान के जीवन जी
ते तुम्ह कहइ मातु बन जाऊँ । मै सुनि वचन बैठि पि

१ निश्चय किया, २ हेतु ३ अग्नि ४ गूंगे की भाँति ५ चन्द्रमा ६
छछूंदर को चूहा समझ पकड़ ले, यदि खाय तो मरे और उगले तो अ
७ तिलक ८ आयु-आयु के अन्तिम भाग में राजा वाणप्रस्थ लेकर बन

०—यह विचारि नहिं करौ हठ, भूठ सनेह बढ़ाइ ।

मानि मातु कर नात बलि^१, सुरति विसरि जनि जाइ ॥५७॥
 पितर सब तुम्हहिं गोसाईं । राखहु पलक नयन की नाई ॥
 धि श्रुं^२ प्रियपरिजन मीना । तुम्ह करुनाकर धरमधुरीना ॥
 विचारि सोइ करहु उपाई । सबहिं जिअत जेहि भेंटहु आई ॥
 सुखेन^३ बनाहिं बलि जाऊँ । करि अनाथ जन-परिजन-गाऊँ ॥
 कर आजु सुकृतफल खाता । भयेउ करालुकालु पिपरीता ॥
 विधि विलपि चरन लपटानी । परमअभागिनि आपुहि जानी ॥
 रुन-दुसह-दाहु डर व्यापा । बरनि न जाइ विलापकलापा ॥
 म उठाइ मातु उर लाई । कहि मृदुबचन बहुरि समुभाई ॥
 दो०—समाचार तेहि समय सुनि, सीय उठी अकुलाइ ।

जाइ सासु-पद-कमल-जुग, बंदि बैठि सिरु नाइ ॥५८॥

निहि असीस सासु मृदुबानी । अतिसुकुमारि देखि अकुलानी ॥
 ठि नमित मुख^४ सोचति सीता । रूपराशि पति-प्रेम-पुनीता^५ ॥
 लन चहत बन जीवननाथू । केहि सुकृती सब हीइहि साथू ॥
 ती तनु प्रान कि केवल प्राना । विधि करतब फछु जाइ न जाना ॥
 वारु चरननख लेखति धरनी । नूपुर मुखर^६ मधुर कवि बरनी ॥
 मनहुँ प्रेमवस विनती करहीं । हमहिं सीयपद जनि परिहरहीं ॥
 मंजुबिलोचन मोचति वारी । बोली देखि राममहतारी ॥
 तात सुनहु सिय अतिसुकुमारी । सासु-ससुर परिजनहिं पियारी ॥

दो०—पिता जनक भूपालमनि, ससुर भालु-कुल-भानु^७ ।

पति रवि कुल-कैरव^८-विपिन-विधु, गुन-रूप-निधानु ॥५९॥

१ बलिहारी जाऊ, २-१४ वषे की सीमा तो जल है ३ सुख पूर्वक ४ नीचा मुँह
 करके ५ पति-प्रेम द्वारा पवित्र ६ बिछुओं की ध्वनि ७ कुमोदिनी म्भानुकुलके मानु, ८ १।
 रवि का कुल, रविकुल-८ठी तत्पु० कैरवों का विपिन, कैरव-विपिन; ९० त०
 रविकुलरूपी कैरवों का विपिन, रविकुल-कैरव विपिन रूपक कर्मधारय;
 रवि-कुल-कैरव विपिन विधु-रविकुलरूपी कैरवों के विपिन के विधु-९० त०

मैं पुनि पुत्रदधू प्रिय पाई । लंपरासि गुन सालु सुहा
 नयनपुतरि करि^१ प्रीति बढाई । राखँउँ प्रान जानकिहिं ता
 कलपवेलि जिमि बहु बिधि लाली^२ । सींचि सनेहसलिल^३ प्रि
 फूलत फलत भयउ विधि वामा । जानि न जाइ काइ ।
 पलंगपीठ तजि गोद हिंडोरा^४ । सिय न दीन्ह पगु अवनि^५
 जिअनमूरि^६ जिमि जोगवत^७ रहऊँ । दीपवाति नहिं टारन काइ
 सोइ सिय चलन चहति ब्रज साथी । आयसु काह होइ रघुनाथ
 चंद्र-किरण-रस-रसिक चकोरी^८ । रविखल नयन सकै किमि जोरी ।

दो०—करि, केहरि, निसिचर चरहिं, दुष्ट जंतु ब्रज भूरि ।

विषवाटिका कि सोइ सुत, सुभग सजीवन मूरि ॥६०॥

वनहित कोल किरात किसोरी । रची विरंचि विषय-सुख-भोरी^९
 पाहन कुमि^{१०} जिमि फठिन सुभाऊ । तिन्हहिं कलेसु न कानन का
 कै तापसतिय काननजोगू । जिन्ह तपहेतु तजा सब भोगू
 सिय वन बलिहि तात केहि भाँती । चित्रलिखित कपि^{११} देखि डरात
 सुर-सर-सुभग वनज-वन-चारी । डावर-जोग कि हंसदुमारी
 अस विचारि जस आयसु होई । मैं सिख देउँ जानकिहि सोई
 जाँ सिय भवन रहै कह अंबा । मोहि कहँ होइ पहुत अनलंबा
 सुनि रघुवीर मातु-प्रिय-बानी । लील सनेह सुधा जनु सानी

१ भाँति २ लाइ किया ३ पानी ४ पलंग-पीठ गोद और हिंडोरा तजि ५ अर
 ६ संजीवनी घृती ७ देखती । ८ चंद्र-किरण-रस-रसिक—(चकोरी का विशेषण) ९
 तत्पु०*विषय-सुख से रहित-पंचमी तत्पु०-मपहाड़ी कौड़ा ११ चित्र में लिखित-श

दो०—कहि प्रियवचन विवेक-मय, कीन्ह मातु-परितोष^१ ।

लगे प्रबोधन जानकिहि, प्रगटि विपिन गुन-दोष^२ ॥६१॥

मातु-समीप कहत सकुचार्हीं । बोले समउ समुक्ति मन माहीं ॥

राजकुमारि सिखावन सुनहू । आन भाँति जिय जनि कछु गुनहू ॥

प्रापन मोर नीक जो चहहू । बचनु हमार मानि गृह रहहू ॥

प्रायसु मोरि सासुसेवकाई । सब बिधि भामिनि भवन भलाई ॥

रहि तें अधिक धरमु नहिं दूजा । सादर सासु-ससुर-पद-पूजा ॥

तब जब मातु करिहि सुधि मोरी । होइहि प्रेमबिकल मतिभोरी ॥

तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी । सुंदरि समुभायेहु मृदु बानी ॥

कहाँ सुभाय सपथ सत मोही । सुमुखि^३ मातुहित राखौं तोही ॥

दो०—गुरु-श्रुति-संमत^४ धरमफलु, पाइअ विनहिं कलेस ।

हठबस सब संकट सहे, गालव^५ नहुष नरेसः ॥ ६२ ॥

पुनि करि प्रवान^६ पितुबानी । बेगि फिरव सुनु सुमुखि सयानी ॥

देवस जात नहिं लागिहि वारा । सुंदर सिखवनु सुनहू हमारा ॥

*गालव मुनि विश्वामित्र से जब विद्या पद चुके तब गुरुजी से दक्षिणा (गने के लिये इठ किया। उन्होंने क्रोधकर २०० श्यामकर्ण घोड़े मांगे। बड़े कष्ट से ६०० मिले २०१ की कमी रही।

‡ एक समय राजा नहुष की इंद्रासन का पद मिला गया था। तब इंद्राणी ने उसने विवाह करने की इच्छा प्रकट की। तब राजा की उसने कहला भेजा के पालकी में बैठ, ऋषियों से सठवाकर आओ। राजा ने ऋषियों से पालकी उठवाई और सर्प सर्प कहा, तब अगस्त्यजीने पालकी छोड़ शाप दिया कि तू सर्प होजा, सो राजा नहुष सर्प होगया।

१ संतुष्ट २ गुन और दोष, गुन-दोष, (द्वन्द्व) विपत्ति-गुन दोष, विपत्ति के गुन और दोष (पक्षोत्तत्पु०) ३ भोरी है मति जिस की (बहुव्रीहि) ४ सुमुखि, सुंदर है मुख जिसका (बहुव्रीहि) ५ गुरु और श्रुति से (द्वारा) सम्मत (करण कारक) ६ पूर्ण ।

जौँ हठ करहु प्रेमवस वामा^१ । तौँ तुम्ह दुखु पाउय परिनामा ॥
 काननु कठिन भयंकर भारी । घोर घामु, हिम, बारि, बयारी ॥
 कुस कंटक मग काँकर नागा । चलत पयादेहिँ विनु पदत्राना^२ ॥
 चरनकमल मृदु मंजु तुम्हारे । मारग अगम भूमिधर भारे ॥
 कंदर खोह नदी नद नारे । अगम अगाध^३ न जाहिँ निहारे^४ ॥
 भालु बाघ वृक^५ केहरि नागा । करहिँ नाद सुनि धीरजु भागा ॥

दो०—भूमिसयन बलकलबसन,^६ अरुनु^७ कंद-पाल-मूल ।

ते कि सदा सब दिन मिलहिँ, सबह समय अनुकूल ॥ ६३ ॥

नरअहार रजनीचर चरहीं । कपटवेष विधि कोटिक करहीं ॥
 लागै अति पहार कर पानी । विपिन-विपति नहिँ जाइ बखानी ॥
 व्याल कराल विहंग बन घोरा । निखिचर-निकर^८ नारि-नर-चोरा ॥
 डरपहिँ धीर गहन सुधि^९ आएँ । मृगलोचनि तुम्ह भीरु^{१०} सुभाएँ ॥
 हंसगवनि तुम्ह नहिँ बनजोगू । सुनि अपजसु मोहिँ देखहि लोगू ॥
 मानस-सलिल-सुधा प्रतिपाती । जिअरु कि लयनपयोधि बराली ॥
 नव-रसाल-बन विहरनलीला । सोह कि कोकिल विपिन करीला ॥
 रहहु भवन अरु हृदय चिचारी । चंदवदनि दुखु कानन भारी ॥

दो०—सहज लुहद-गुरु रवामि-सिख, जौँ न करै सिर मानि ।

सो पड़िताइ अघाइ उर, अवसि होइ हिनहानि ॥ ६४ ॥

सुनि मृदुवचन मनोहर पिअके । लोचन ललितारभरे जल सिय के ॥
 सीतल सिख द्राइक सै कैलै^{११} । चकइहिँ सरदचंद निखि जैसे ॥
 उतरु न आव विकल वैदेही । तजन जहत सुचि रवामि सनेही ॥

१ पाठान्तर 'नखिन' १ टी, (उश्लीनता की दशा का सम्बोधन) २ जूत

३ गहरे ४ देतने से भय मादूम होता है । ५ भेटिया ६ वज्र ७ भोजन ८ राक्षसों
 का समूह ९ घन १० डेरप्रोक ।

* विरोधाभास श्लकार

धरवल रोकि बिलोचनवारी । धरि धीरजु उर अवनिकुमारी ॥
लागि सासुपग कह कर जोरी । छुमवि देवि बड़ि अयिनय^२ मोरी ॥
दीन्हि प्रानपति मोहि सिख सोई । जेहि विधि मोर परमहित होई ॥
मैं पुनि लखुकि दीख मन माहीं । पिय-वियोग-सम दुखु जग नाहीं ॥

दो०—प्राननाथ करुनायतन सुंदर सुखद सुजान ।

तुम्ह बिनु रघुकुल-कुमुद-विधु सुरपुर नरकसमान ॥६५॥

मातु पिता भगिनी प्रिय भाई । प्रिय परिवार सुहृद-सखुदाई ॥
सासु ससुर गुरु सजन सहार्ई । सुत सुंदर सुखील सुखदाई ॥
जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते । पिय विनु तियहि तरनि^३ हुँते ताते ॥
तनु धनु धानु धरनि सुरराजू । पतिविहीन सबु लोकसमाजू ॥
भोग रोगसत, भूषन भाऊ । जम-जातना^४-सरिस संसारू ॥
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं । मो फहँ सुखद कतहुं कछु नाहीं ॥
जिअर बिनु देह नदी बिनु वारी । तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी ॥
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे । सरद-विमल-विधु-वदनु^५ निहारे ॥

दो०—जग मृग परिजन नगर बनु पलकल विमल पुकूल^६ ॥

नाथ साथ सुर-सदन सम परनलाल^७ सुखमूल ॥६६॥

वनदेवी वनदेव उदारा । करिहहिं सासु-ससुर-सम सारा^८ ॥
कुल-किसलय-साथरी, सुहाई । प्रभु संग मंजु मलोजतुराई ॥
कंद मूल फल अमिअ^९ अहार । अवध-सौध-सत सरिस पहारू^{१०} ॥
बिनु छिनु प्रभु-पद-कमलबिलोकी । रहिहौं सुदितदिवसजिभि कोकी ॥
वनदुख नाथ कहे बहुतेरे । अय विषाद परिताप घनेरे ॥

१ सीताजी, २ ठीठता ३ दूर्य ४ यम दण्ड के सदृश ५ (विधुवदन, विमल-
विधु-वदन, सरद-विमल-विधु-वदन) इस प्रकार विग्रह है ६ रेशमी वस्त्र ७ झोंपड़ी ।
८ सार समहार ९ (अमृत) *पहार अवध-सौध- (महल) सत-सरिस ?

प्रभु-वियोग-लव-लेस-समाना । सब-मिलि होहि न कृपानिधाना ॥
अस जिय जानि सुजान-सिरोमनि । लेइअ संग मोहि छाँडिअ जनि ॥
बिनती बहुत करौ का स्वामी । करुनामय उर-अंतर-जामी ॥

दो०—राखिअ अवध जो अवधि लागि रहत जातिअहि प्रान ।

दीनबंधु सुंदर सुखद, सोल-सनैह-निधान ॥ ६७ ॥

मोहि मग चलत न होइहि हारी । छिनु छिनु चरनसरोज निहारी ॥
सवाहि भाँति पिय-सेवा करिहौं । मारगजनित सकल स्रम हरिहौं ॥
पाय पखारि बैठ तरुछाहीं । करिहौं बाउ मुदित मन माहीं ॥
स्रम-कन-सहित^१ स्याम तनु देखें । कहँ दुख समउ प्रानपति पेखें ॥
सम महि तृन-तरु-पल्लव डासी^२ । पाय पलोटिहि सब निसि दासी ॥
वार वार मृदुमूरति जोही^३ । लागिहि ताति वयारि न मोही ॥
को प्रभुसंग मोहि चितवनिहारा । सिधवधुहि जिमि ससक^४ सिआरा ॥
मैं सुकुमारि नाथ वनजोगू । तुम्हहि उचित तप मो कहँ भोगू ॥

दो०—ऐसेउ वचन कठोर सुनि, जौं न हृदय विलगान ।

तौ प्रभु-विपम-वियोग-दुखु, सहिहहि पाँवर^५ प्रान ॥६८॥

अस कहि सीय विकल भै भारी । वचनवियोग न सकी सँभारी ॥
देखि दसा रघुपति-जिय जाना । हठि राखे नहिं राखिहि प्राना ॥
कहेउ कृपाल भानु-कुल-नाथा । परिहरि सोनु चलहु वन साथा ॥
नहिं विपाद कर अल्लसरु आजू । बेगि करहु वन-गवन-समाजू ॥
कहि प्रियवचन प्रिया समुभाई । लगे मातुपद आसिष पाई ॥
बेगि प्रजादुख भेटव आई । जननी निठुर^६ विसरि जनि जाई ॥

१ पत्नी के चूंदों सहित २ बिछाकर ३ देखकर ४ सरहा ५ नीच ६ (निठुर)

काकु वक्रोक्ति अलंकार, जहाँ ध्वनि से उन्मत्त अर्थ निकले, जैसे—मैं सुकुमारि और आप वन के योग्य ! अर्थात् नहीं ।

फिरिहि दैसां बिधि बहुरि कि मोरी । देखिहौं नयन मनोहर जोरी ॥
सुदिन सुघरी तात कब होइहि । जननी जिअत बदनविधु जोइहि ॥

दो०—बहुरि बच्छु^१ कहि लालु कहि, रघुपति रघुवर तात ।

कबहिं बोलाइ लगाइ हिय हरषि निरषिहौं गात ॥ ६६ ॥

लाखि सनेह कातरि^२ महतारी । बचनु न आव विकल भै भारी ॥
राम प्रबोध कीन्ह विधि नानां । समउ सनेहु न जाइ बखाना ॥
तब जानकी सांसुपग लागी । सुनिये माय मै परम अभागी ॥
सेवा समय दैव बन दीन्हा । मोर मनोरथ सुफल न कीन्हा ॥
तजब छोभु^३ जनि छाँड़िअ छोहू^४ । करमुं कठिन कछु दोसु न मोहू ॥
सुनि सियबचन सासु अकुलानी । दसा कवनि विधि कही बखानी ॥
बारहिं बार लाइ डर लीन्ही । धरि धीरजु सिख आसिष दीन्ही ॥
अचल होउं अहिवातु^५ तुम्हारा । जब लागि गंग-जमुन जल-धारा ॥

दो०—सीतहि सासु असीस सिख, दीन्हि अनेक प्रकार ॥

चली नाइ पदपटुम सिख, अति हित बारहिं बार ॥ ७० ॥

समाचार जब लछिमन पाप । व्याकुल बिलष बदन उठि धाप ॥
कंप पुलक तन नयन सनारा । गहे चरन अतिप्रेम अधीरा ॥
कहि न सकत कछु चितवत् ठाढ़े । मीनु दीनु जनु जल तै काढ़े ॥
सोचु हृदय बिधि का होनिहारा । सब सुखु सुकृतु सिरान^६ हमारा ॥
मो कहँ काह कहव रघुनाथा । रखिहहिं भवन कि लेहहिं साथ्या ॥
राम बिलोकै धंधु करजोरें । देह गेह^७ सब सन तृन तोरें ॥
धीले बचनु राम नयनागर^८ । सील-सनेह-सरल-सुख-सागर ॥

१ (वत्स) २ सनेह से कातर वा सनेह में कातर, इस प्रकार तृतीया वा सप्तमी तत्पु० दोनों हो सकते हैं ३ दुःख ४ कृपा ५ सौभाग्य ६ समाप्त हुआ ७ (गृह) ८ नीति में चतुर ।

तात प्रेमवसं जानि कदराहूँ । समुक्ति हृदय परिनाम उद्धाहूँ ॥

दो०—मातु-पितां-गुरु-स्वामि-सिख, सिर धरि कराहिँ सुभाय ।
लहेउ लाभ तिन्हें जनम कर, न तरु जनमुँ जग जाय ॥७१॥

अस जियें जानि सुनहु सिख भाई । करहु मातु-पितु-पद-सेवकाई ॥
भवन भरत रिपुसूदनु नाहीं । राउ वृद्ध, मम दुख अन माहीं ॥
मैं बन जाउँ तुम्हहिँ लेइ साथा । होइ सवहि विधि अबंध अनाथा ॥
गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू । सब कहँ परै दुसह-दुख-मारू ॥
रहहु करहु सब कर परितोषू । नतर तात होइहि चटु दोषू ॥
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी । सो नृप अवसि नरक अधिकारी ॥
रहहु तात अस नीति विचारी । सुनत लपनु भये व्याकुल भारी ॥
सिअरे वचन सूखि गय कैसे । परसत तुहिन तामरस जैसे ॥

दो०—उतरु न आवत प्रेमवस, गहे चरन अकुलाइ ।

नाथ दासु मैं स्वामिँ तुम्ह, तजहु त काह वसाइ ॥ ७२ ॥

दीन्हि मोहि सिख नीक गोसाई । लागि अगम^१ अपनी कदराई^२ ॥
नरवर धीर धरम धुर - धारी । निगम नीति कहँ ते अधिकारी ॥
मैं निरु प्रभु - सनेह-प्रतिपाला । मंदरु मेरु कि लेहि मराला ॥
गुरु पितु मातु न जानौं काहू । कहाँ सुभाउ नाथ पतिआहूँ ॥
जहँ लागि जगत सनेह सगाई^३ । प्रीतिप्रतीति निगम निरु^४ गाई ॥
मोर सय^५ एक तुम्ह स्वामी । दीनबंधु उर - अंतरजामी ॥
धरम नीति उपदेशिअ ताही । कौरति-भूति सुगति प्रिय जाही ॥
मन-क्रम-वचन चरनरत होई । कृपानिधु परिहरिअ कि लोई ॥

१ घोर दुःख का बोझ २ पाला ३ कमल ४ दुस्तर ५ कातरता ६ विश्राम
करो ७ सम्बन्ध ८ स्वयं

दो०—करुनासिंधु सुबंधु के, सुनि मृदुबचन बिनीत ।
समुभाए उर लाइ प्रभु, जानि सनेह समीत ॥

माँगहु बिदा मातु सन जाई । आवहु बेगि चलहु वन भाई ॥
मुदित भये सुनि रघुवर वानी । भयउ लाभ बड़, गइ बड़ि हानी ॥
हरषित हृदय मातु पहिँ आए । मनहुँ अंध फिरि लोचन पाए ॥
जाइ जननि - पग नायेउ माथा । मनु रघुनंदन - जानकि साथा ॥
पूँजै मातु मलिन मन देखी । लपन कहीं सब कथा बिसेखी ॥
गई सहमि^१ सुनि बचन कठोरा । मृगी देखि दव^२ जनु चहुँ ओरा ॥
तपन लखेउ भा-अनरथ आजू । एहि सनेह बस करव अकाजू ॥
माँगत बिदा समय सकुचाहीं । जाइ संग, बिधि, कहहि कि नार्हीं ॥

दो०—समुझि सुमित्रा राम-सिय-रूपु-सुसीलु सुभाउ ।
नृपसनेह लखि धुनेउ सिर, पापिनि दान्ह कुदाउ^३ ॥७४॥

धीरजु धरेउ कुअवसर जानी । सहज सुहृद बोली मृदु वानी ॥
तात तुम्हारि मातु बैदेही । पिता रामु सब भांति सनेही ॥
अवथ तहाँ जहँ राम - निवासू । तहई दिवसु जहँ भानुप्रकासू ॥
जाँ पै सीथ - राशु बन जाहीं । अवथ तुम्हार कालु कलु नार्हीं ॥
गुरु पितु मातु बंधु सुर साई । सेइअहि सकल प्राण की नाई ॥
राम प्राणप्रिय जीवन जी के । स्वारथरहित सखा सबही के ॥
पूजनीय प्रिय परम जहाँ तैं । सब मानिअहि राम के नातैं ॥
अस जिय जानि संग बन जाहू । लेहु तात जग जीवनुलाहू^४ ॥

दो०—भूरि भागभाजलु^५ भयेहु सोहि समेत बलि जाउँ ।
जाँ तुम्हरे मन छुँडि छलु कीन्ह राम-पद ठाउँ ॥ ७५ ॥

१ सनाटे में आगई, दंग रह गई २ अग्नि ३ कुघात ४ जीवन का लाभ ।

५ बड़े भाग्य-शाली

पुत्रवती जुवती जग सोई । रघु-पति-भगतु जासु सुत होई ।
 नतर^१ बाँझ भलि, बादि^२ विआनी । रामविमुख सुत तें हितहानी ।
 तुम्हरेहि भाग रामु बन जाहीं । दूसर हेतु तांत कछु नाही ॥
 सकल सुकृत कर बड़ फल पढ़ । राम-सीय-पद सहज सनेह ॥
 रागु रोषु इरिषा^३ मदुमोह । जनि सपनेहुँ इन्हके बस होह ॥
 सकल प्रकार विकार विहाई । मन क्रम बचन करहु सेवकाई ॥
 तुम्ह कहूँ वन सब भँति सुपासू । संग पितु मातु रामु-सिय जासू ॥
 जेहि न रामु बन लहाहि कलेसू । सुत सोई करहु इहे उपदेसू ॥

छंद—उपदेसु पढ़ जेहि जात तुम्हरे, रामसिय सुख पावहीं ।
 पितु-मातु-प्रिय-परिवार-पुर-सुख-सुरति वन विसरावहीं ॥
 तुलसी-प्रभुहि सिख देख आयसु दीन्ह पुनि आसिप दई ॥
 रति^४ होउ अविरल^५ अमल^६ सिय-रघु-वीर-पद नित नित नई ॥

सो०—मातुचरनु सिरु नाइ चले तुरत संकित हृदय ॥

बागुर^७ विपम^८ तोराइ मनहुँ भाग मृगु भागवस^९ ॥७६॥

गए लपनु जहँ जानकिनार्थ । भे मन मुदित पाइ प्रिय सार्थ ॥
 धंदि राम-सिय-चरन सुहाए । चले संग नृपमंदिर आप ॥
 कहहि परसपर पुर नर-नारी । भलि वनाइ विधि वात बिगारी ॥
 तन कस^{१०} मन दुखु, वदन मलाने । विकल मनहुँ माखी मधु छीने ॥
 कर मीजाहि, सिरु धुनि पछिताहीं । जनु बिनु पंख बिहंग अकुलाहीं ॥

१ नहीं तो २ व्यर्थ ३ ईर्ष्या ४ प्रीति ५ अनुपम ६ पवित्र ७ फदा ८ कठिन
 ९ भाग्य से १० दुर्बल ।

मै बड़ि भीर भूप-दरबारा । बरनि न जाइ बिखाहुं अपारा ॥
सचिव उठाइ राउ बैठारे । कहि प्रिय बचन रामु पगु धारे ॥
सियसमेत दोउ तनय निहारी । व्याकुल भयेउ भूमिपति भारी ॥

दो०—सीयसहितें सुत सुभग^१ दोउ, देखि देखि अकुलाइ ।

धारहि बार सनेहबस, राउ लेइ उर लाइ ॥ ७७ ॥

कै न बोलि विकल नरनाहू । सोकजनित उर दारुन दाहू ॥
इ सीसु पद अति अनुरागा । उठि रघुवीर विदा तब माँगा ॥
भेतु असीसु आयसु मोहि दीजै । हरषसमय बिसमउ कत कीजै ॥
ति किए प्रिय प्रेमप्रमादू^२ । जसु जग जाइ, होइ अपबादू^३ ॥
मुनि सनेहबस उठि नरनाहाँ । बैठारे रघुपति गहि ब्राहाँ ॥
मुनहु तात तुम्ह कहँ मुनि कहहीं । राम चराचरनायक अहहीं^४ ॥
मुभ अरु असुभ करम-अनुहारी । ईसु देख फलु हृदय बिचारी ॥
करै जो करम पाव फलु सोई । निगम-नीति असि कह सबु कोई ॥

दो०—औरुं करै अपराध कौउ, और पाव फल भोगु ।

अति बिचित्र भगवंतगति कौ जग जानै जोगु ॥ ७८ ॥

राय रामराखन हित लागी । बहुत उपाय किए छुल त्यागी ॥
लखी रामरुख, रहत न जाने । धरम-धुरंधर धीर सयाने ।
तब नृप सीय लाइ उर लीन्ही । अतिहित बहुत भाँति सिख दीन्ही ॥
कहि बन के दुख दुसह सुनाए । सासु ससुर पितु सुख समुभाए ॥
सियमन रामचरन-अनुरागा । धरुन सुगमु, बनु बिषमु न लागी ॥
औरउ सबहि सीय समुभाई । कहि कहि विपिन-विपति-अधिकारै ॥
सचिवनारि गुरुनारि सयानी । सहित सनेह कहहिं मृदु वानी ॥
उ २ कहँ तौ न दीन्ह बनवासू । करहु जो कहहिं ससुर-गुर-सासू ॥

१ सुन्दर २ प्रेम से मूल ३ अपयश ४ चर और अचर सृष्टि के स्वामी हैं ।

दो०—सिख सीतलि हित मधुर मृदु, सुनि सीतहि न सोहनि*
 सरद-चंद चंदनि लगत, जनु चकई शकुलानि ॥ ७६ ॥
 सीय सकुच वस उतरु न देखै । सो सुनि तमकि* उठी कैकई*
 मुनि-पट-भूपन-भाजन आनी । आगे धरि बोली मृदु बानी*
 नृपहिं प्रानप्रिय तुम्ह रघुवीरा । सील सनेद न छाँड़िहि भीरा ॥
 सुकृत सुजसु परलोक नसाऊ । तुम्हहिं जान वन कहिहि न काऊ*
 असे विचारि सोइ करहु जो भावा । राम जननिसिख सुनि सुखु पावा*
 भूपहि वचन वानसम लागे । फरहिं न प्रान पयान* अभाग*
 लोग विकल, मुखछित नरनाह । काह करिअ, कछु सूझ न काह*
 रामु तुरत मुनिवेषु वनाई । चले जनक जननी सिख नारी* ॥
 दो०—सजि वन-साजु-समाजु सब, वनिता* -बंधु-समेत ।
 वंदि विप्र-गुर-चरन प्रभु, चलेकरि सबहि अचेत ॥८०॥
 निकसि बसिष्ठ द्वार भए ठाढ़े । देखे लोग विरहदव* दाढ़े*
 कहि प्रिय वचन सकल समुझाप । विप्रवृंद रघुवीर बोलाप*
 गुर सन कहि बरपासन* दीन्है । आदर दान दिनयवल कीन्है*
 जाचक दान मान संतोषे । सीत पुनीत प्रेम परितोषे*
 दासी दास बोलाइ बहोरी । गुरहिं साँपि बोले कर जोरी*
 सब के सार संभार गोसाईं । फरवि जनक जननी की नाई*
 वारहिं वार जोरि जुगपानी* । कहत रामु सब सन मृदु बानी*
 सोइ सब भाँति मोर हितकारी । जेहि तँ रहै भुआल सुखारी* ॥
 दो०—मातु सकल मोरे विरह जेहिं न होई दुख-दीन ॥

साँइ उपाउ तुम्ह करेहु सब पुरजन* परमप्रदीन ॥ ८१ ॥

द्वितीय विषय अलंकार—जहाँ कारण के मुख से कार्य का मुख या कार्य
 की क्रिया से कार्य की क्रिया निरह हो ।

१ कोपित हो २ (प्रकाश) गवन ३ गो ४ विरोग की आग ५ जले ६
 ६ (वरुण-दहन) एक वर्ष का भोजन ७ भाँति ८ (गुग पाणि) ९ नगर-बासी :

विधि राम सर्वाहिं संसुभावा । गुण-पद-पद्म^१ हरषिं सिरुं नावा ॥
 ति गौरि गिरीसु मनाई । चले अलीस पाइ रघुराई ॥
 चलत अति भयेउ विषादू । सुनि न जाइ पुर आरतनादू ॥
 पुन लंक, अवध अति सोकू । हरष विषाद^२-बिबस सुरलोकू ॥
 मुरुछा तब भूपति जागे । बालि सुमंत्र कहन अस लागे ॥
 चले वन प्रान न जाहीं^३ । केहि सुख लागि रहत तनमाहीं ॥
 ते कवन व्यथा बलवाना । जो दुखु पाइ ताजिहिं तनु प्राना ॥
 धरि धीर कहै नरनाहू । लै रथ संग सखा तुम्ह जाहू ॥

०—सुठि^४ सुकुमार कुमार दोउ, जनकसुता सुकुमारि ॥

रथ चढ़ाइ देखराइ वनु फिरेहु गए दिन चारि ॥ ८२ ॥

नाहि फिरहिं धीर दोउ भाई । सत्यसंध^५ दृढव्रत रघुराई ॥
 तुम्ह विनय करेहु कर जोरी । फेरिअ प्रभु मिथिलेस - किसोरी ॥
 सिय कानन देखि डेराई । कहेहु मोर सिख अबसरु पाई ॥
 उ ससुर अस कहेउ संदेसू । पुत्रि फिरिअ वन बहुत कलेसू ॥
 गृह कबहुँ, कबहुँ लसुरारी । रहेहु जहाँ रुचि होइ तुम्हारी ॥
 विधि करेहु उपायकदंवा^६ । फिरइ त होइ प्रानअवलंबा ॥
 हे त मोर मरनु परिनामा । कछु न बलाइ भए विधि वामा ॥
 उ कहि मुरुछि परा महि राऊ । राम लपनु लिअ आनि देखाऊ ॥

०—पोइ रजायसु नाइ सिरु रथु, अति वेग वनाइ ।

गयेउ जहाँ बाहेर नगर, सीयसहित दोउ भाइ ॥ ८३ ॥

१ सुमंत नृपवचन सुनाए । करि विनती रथ राखु चढ़ाए ॥
 दि रथ सीयसहित दोउ भाई । चले हृदय अवधहिं सिरु नाई ॥

१ (पद-पद्म, गुरु-पद-पद्म) २ विषाद अयोध्या की दशा देख कर और हर्ष
 ने शत्रु राजसों के नष्ट होने की आशा से । ३ प्रानत (कारण होने पर भी कार्य
 हो) विशेषोक्ति प्रलंकार) ४ सुठु ५ सत्य प्रतिज्ञा वाले ६ समूह, शनेक ।

दो०—सिख सीतलि हित मधुर मृदु, सुनि सीतहि न सोहानि*

सरद-चंद चंदनि लगत, जनु चकई अकुलानि ॥ ७६ ॥

सीय सकुच वस उतरु न देखै । सो सुनि तमकि उठी कैकई
मुनि-पट-भूषन-भाजन आनी । आगे धरि बोली मृदु बानी
नृपहिँ प्रानप्रिय तुम्ह रघुवीरा । सील सनेह न छुँडिहि भीरा
सुकृत सुजसु परलोक नसाऊ । तुम्हहिँ जान वन कहिहिँ न काऊ
अस विचारि सोइ करहु जो भावा । राम जननिसिख सुनि सुखु पाव
भूपहि वचन बानसम लागे । फरहिँ न प्रान पयान अभाग
लोग विकल, मुखद्वित नरनाह । काह करिअ, कछु सूझ न काह
रामु तुरत सुनिवेषु वनाई । चले जनक जननी सिरु नाई

दो०—सजि वन-साजु-समाजु सब, वनिता^१ -बंधु-समेत ।

बंदि विप्र-गुर-चरन प्रभु, चलेकरि सबहि अचेत ॥ ७७ ॥

निकसि पसिष्ठ द्वार भए ठाढ़े । देखे लोग विरहदव^२ दाढ़े^३
कहि प्रिय वचन सकल समुक्षाए । विप्रवृंद रघुवीर बोलाए
गुर सन कहि वरपासन^४ दीन्है । आदर दान दिनयवस कीन्है
जाचक दान मान संतोषे । मीत पुनीत प्रेम परितोषे
दासी दास बालाइ बहारी । गुरहिँ साँपि बोले कर जोरी
सब कै सार सँभार गोसाई । फरवि जनक जननी की नाई^५
धारहिँ वार जोरि जुगपानी^६ । कहत रामु सब सन मृदु बानी
सोइ सब भाँति मोर हितकारी । जहिँ तँ रहै भुआल सुखारी

दो—मातु सकल मोरे विरह जेहिँ न होई दुख-दीन ॥

सोइ उपाउ तुम्ह करेहु सब पुज्जन^७ परमप्रवीन ॥ ७८ ॥

*शुनीय विषम श्लकार-जहां कारण के गुण से कार्य का गुण या कार्य
की क्रिया से कार्य की क्रिया विरह हो ।

१ क्रोधित हो २ (प्रयाण) गवन ३ ली ४ वियोग की आग ५ चले
६ (वरप+असन) एक वर्ष का नोजन ७ भाँति ८ (युग पाणि) ९ नगर-वास

सोहि विधि राम सवाहि ससुभावा । गुर-पद-पदुम^१ हरषि सिंह नावा ॥
 ॥ ४१ ॥ पति गौरि गिरीसु मनाई । चले असीस पाइ रघुराई ॥

चलत अति भयेउ विपादू । सुनि न जाइ पुर आरतनादू ॥
 वसगुन लंक, अवध अति लोक्कू । हरष विपाद^२-विवस सुरलोकू ॥
 भा मुखड़ा तव भूपति जागे । बोलि सुमंत्र कहन अस लागे ॥
 तनु चले वन प्रान न जाहीं^३ । केहि सुख लागि रहत तनमाहीं ॥

सुहि ते कवन व्यथा बलवाना । जो दुखु पाइ ताजिहि तनु प्राना ॥
 अने धरि धीर कहै नरनाहू । लै रथ संग सखा तुम्ह जाहू ॥

नदी०—सुठि^४ सुकुमार कुमार दोउ, जनकसुता सुकुमारि ॥

रथ चढ़ाइ देखराइ वनु फिरेहु गण दिन चारि ॥ ८२ ॥

नहि फिरहि धीर दोउ भाई । सत्यसंध^५ दृढव्रत रघुराई ॥

तुम्ह बिनय करेहु कर जोरी । फेरिअ प्रभु मिथिलेस-किसोरी ॥

सिय कानन देखि डेराई । कहेहु मोर सिख अबसरु पाई ॥

सुसुर अस कहेउ सँदेसू । पुत्रि फिरिअ वन बहुत कलेसू ॥

तुम्ह कवहुँ, कवहुँ लसुरारी । रहेहु जहाँ खचि होइ तुम्हारी ॥

हि विधि करेहु उपायकदंवा^६ । फिरइ त होइ प्रानअवलंवा ॥

हि त मोर मरनु परिनामा । कछु न वसाइ भए विधि वामा ॥

स कहि मुखछि परा महि राऊ । राम लपनु लिअ आनि देखाऊ ॥

श्री०—पोइ रजायसु नाइ लिख रथु, अति वेग वनाइ ।

गयेउ जहाँ बाहेर नगर, सीयसहित दोउ भाइ ॥ ८३ ॥

सुमंत नृपवचन सुनाए । करि बिनती रथ रामु चढ़ाए ॥

हि रथ सीयसहित दोउ भाई । चले हृदय अवधहि लिख नाई ॥

१ (पद-पदुम, गुरु-पद-पदुम) २ विपाद अयोध्या की दशा देख कर और हर्ष

पाने शत्रु राजसों के नष्ट होने की आशा से । ३ प्रबल कारण होने पर भी कार्य

हो (विशेषोक्ति अलंकार) ४ सुदृष्ट, ५ सत्य प्रतिज्ञा वाले ६ समूह, अनेक ।

पाना ५ हर्ष
 ६ नगर-का

दो०—सिख सीतलि हित मधुर मृदु, मुनि सीतहि न सोहनि*
 सरद-चंद चंदनि लगत, जनु चकई अकुलानि ॥ ७६ ॥
 सीथ सकुच वस उतर न देखे । सो मुनि तमकि उठी कैकेई ।
 मुनि-पट-भूपन-भाजन आनी । आगे धरि बोली मृदु बानी ।
 नृपहिं प्रानप्रिय तुम्ह रघुवीरा । सील सनेह न छाँड़िहि भीरा ।
 सुकृत सुजसु परलोक नसाऊ । तुम्हहिं जान वन कहिहि न काऊ ।
 अस विचारि सोइ करहु जो भावा । राम जननिसिख मुनि सुखु पावा ।
 भूपहि वचन वानसम लागे । करहिं न प्रान पयान अभाग ।
 लोग विकल, मुखित नरनाह । काह करिअ, कछु सूझ न काह ।
 रामु तुरत मुनिवेषु बनाई । चले जनक जननी सिख नाई ।

दो०—सजि वन-साजु-समाजु सब, यनिता* -बंधु-समेत ।

वंदि विप्र-गुर-चरन प्रभु, चलेकरि सबहि अचेत ॥ ८० ॥

निकसि वसिष्ठ द्वार भए ठाढ़े । देखे लोग विरहदव* दाढ़े ।
 कहि प्रिय वचन सकल समुझाप । विप्रवृंद रघुवीर बोलाप ।
 गुर सन कहि वरपासन* दीन्हे । आदर दान दिनयवस कीन्हे ।
 लाचक दान मान संतोषे । सीत पुनीत प्रेम परितोषे ।
 दासी दास बोलाइ बहारी । गुरहिं सौंपि पाले कर जोरी ।
 सब कै सार सँभार गोसाईं । करवि जनक जननी की नाई* ।
 धारहिं वार जोरि जुगपानी* । कहत रामु सब सन मृदु बानी ।
 सोइ सब भाँति मोर हितकारी । जेहि तें रहै भुआल सुखारी ।
 दो—मातु सकल मोरे विरह जेहिं न होई दुख-दीन ॥

सोइ उपाउ तुम्ह करेहु सब पुरजन* परमप्रसीन ॥ ८१ ॥

*तृतीय विप्र अलंकार—जहां कारण के गुण से कार्य का गुण वा कार्य की क्रिया से कार्य की क्रिया विरह हो ।

१ क्रोधित हो २ (प्रयाण) गवन ३ ली ४ विगोग ली आम ५ जले हु
 ६ (वरग+असन) एक वर्ष का भोजन ७ याँति ८ (शुग पाणि) ९ नगर-बासी

विधि राम सवाहिं संसुभावा । गुरं-पद-पदुम^१ हरषिं सिरं नावा ॥
 गति गौरि गिरीसु मनाई । चले अलीस पाइ रघुराई ॥
 चलेतं अति भयेउ विषादू । सुनि न जाइ पुर आरतनादू ॥
 गुन लंक, अवध अति सोकू । हरष विषाद^२-विवस सुरलोकू ॥
 मुख्या तव भूपति जागे । बोलि सुमंत्र कहन अस लागे ॥
 मु चले वन प्रान न जाहीं^३ । केहि सुख लागि रहत तन माहीं ॥
 इतें कवनं व्यथा बलवाना । जो दुखु पाइ ताजिहि तनु प्राना ॥
 न धरि धीर कहै नरनाहू । लै रथ संग सखा तुम्ह जाहू ॥

१०—सुठि^४ सुकुमार कुमार दोउ, जनकसुता सुकुमारि ॥

रथ चढ़ाइ देखराइ वनु फिरेहु गण दिन चारि ॥ ८२ ॥

नहिं फिरहिं धीर दोउ भाई । सत्यसंध^५ दृढ़मत रघुराई ॥
 तुम्ह विनय करेहु कर जोरी । फेरिअ प्रथु मिथिलेस - किसोरी ॥
 शिष्य कानन देखि डेरारै । कहेहु मोर सिख अबसरु पाई ॥
 सु सखुर अस कहेउ संदेसू । पुत्रि फिरिअ वन बहुत कलेसू ॥
 तुगह कबहुं, कबहुं सखुरारी । रहेहु जहाँ खचि होइ तुम्हारी ॥
 हि विधि करेहु उपायकदंवा^६ । फिरइ त होइ प्रानअवलंवा ॥
 हिं त मोर मरनु परिनामा । कछु न बलाइ भए विधि वामा ॥
 स कहि मुखलि परा महि राऊ । राम लषनु लिअ आनि देखाऊ ॥

१०—पाइ रजायसु नाइ लिख रथु, अति वेग वनाइ ।

गयेउ जहाँ बाहेर नगर, सीयसहित दोउ भाइ ॥ ८३ ॥

ब सुमंत नृपवचन सुनाए । करि विनती रथ रासु चढ़ाए ॥
 दि रथ सीयसहित दोउ भाई । चले हृदय अवधहि लिख नाई ॥

१ (पद-पदुम, गुरु-पद-पदुम) २ विषाद अयोध्या की दशा देख कर और हर्ष
 करने शत्रु राज्यों के नष्ट होने की आशा से । ३ प्रबल कारण होने पर भी कार्य
 हो (विशेषोक्ति प्रलंकार) ४ सुट्ट ५ सत्य प्रतिज्ञा वादे ६ समूह, घनेक ।

चलत रामे लैखि अवध अनाथा । विकल लोग सब लागे सा
 कृपासिंधु बहु विधि समुभावाहिं । फिरहिं प्रेमवस पुनि फिरि
 लागति अवध भयावनि भारी । मानहुँ कालराति' अंधियारी
 घोर^२ जंतुसम पुर - नर - नारी । डरपाहिं एकहिं एक नि
 घर मसान^३ परिजन जनु भूता । सुत हित मात मनहुँ जम
 बागन्ह बिटप^४ बलि कुम्हिलाहीं । सरित सरोबर देखि न ज
 दो०—हय^५ गय^६ कोटिन्ह केलिसृग^७, पुरपसु चातक मोर ।

पिक^८ रथांग^९ सुक सारिका, सारस हंस चकोर ॥ २४
 राम बियोग विकल सब ठाढ़े । जहँ तहँ मनहुँ चित्र लिखि काढ़े
 नगर सकल बनु गहवर^{१०} भारी । खग मृग विपुल सकल नरनार
 विधि कैकेइ किरातिनि कीन्हीं । जेहिं दव दुसह दसहुँ दिसि
 सहि न सकै रघु-धर-विरहागी । चले लोग सब व्याकुल भागी
 सबहि विचारु कीन्ह मन माहीं । राम लषन सिय बिनु सुख
 जहाँ रामु तहँ सबुइ^{११} समाजू । विनु रघुवीर अवध नहिं काबू
 चले साथ अस मंत्र दढ़ाई । सुरदुर्लभ^{१२} सुखसदन विहार
 राम-चरन-पंकज प्रिय जिन्हहीं । विषय भोग वंस कराहिं कि तिन्ह
 दो०—बालक वृद्ध बिहाइ गृह, लगे लोग सब साथे ।

तमसा-तीर निवासु किय, प्रथम दिवसु रघुनाथ ॥ २५ ॥
 रघुपति प्रजा प्रेमवस देखी । संदय हृदय दुखु भयेउ बिसेखी
 करुनामय रघुनाथ गोसाई । बेगि पाइअहि पीर पराई
 कहि सप्रेम मृदुबचन सुहाए । बहु थिधि राम लोग समुभाए
 किए धरम = उपदेस घनेरे । लोग प्रेम वस फिरहिं न फेरे

१ मंहा प्रलय की रात्रि २ भयानक ३ (स्पशान) मरघट ४ टट्ट ५ घोष
 ६ हाथी ७ पालतू-दिरण ८ कोयल ९ चक्रवाक १० घना ११ (सर्व) १२ देव
 भी कष्ट से जिसको पावें ।

। सनेह छाँड़ि नहिं जाई । असमंजस^१ बस भै रघुराई ॥
। सोग-श्रम-वस^२ गए सोई । कछुक देव माया मति मोई ॥
हिं जामजुग जामिनि बीती । रामु सचिव सन कहेउ सप्रीती ॥
न मारि रथ हाँकहु ताता । आन उपाय बनिहि नहिं बाता ॥
१०—रामु लपन सिय जानु^३ चढ़ि, संभुचरन सिरु नाइ ।

सचिव चलायउ तुरत रथु. इत उत खोज^४ दुराइ ॥६॥
। सकल लोग भए भोरु । गे रघुनाथ भयेउ अति सोरु ॥
कर खोज कतहुं नहिं पावहिं । 'रामराम' कहि चहुं दिसि धावहिं ॥
हुं बारिनिधि वूड़ जहाजू । भयेउ विकल बड़ घनिकसमाजू ॥
वहिं एक देहिं उपदेसू । तजे राम हम जानि कलेसू ॥
वहिं आपु, सराहहिं 'मीना । धिग^५ जीवनु रघु-बीर-बिहीना ॥
। पै प्रियबियोगु विधि कीन्हा । तौ कस मरनु न माँगे दान्हा ॥
हि विधि करत प्रलापकलापा । आए अवध भरे परितापा^६ ॥
। प्रमवियोगु न जाइ बखाना । अवधिआस सब राखाहिं प्राना ॥

१०—राम-दरस-हित नेम ब्रत, लगे करन नरनारि ।
मनहुं कोक कोकी कमल, दीन बिहीन तमारि^७ ॥७॥
। तसचिव-सहित दोउ भाई । खंगवेरपुर पहुँचे जाई ॥
। तरे राम देवसरि देखी । कीन्ह दंडवत हरखु बिसेखी ॥
। सन सचिव सिय किए प्रनामा । सवहिं सहित सुखु पायेउ रामा ॥
। सकल-मुद-भंगल-मूला । सब सुखकरनि, हरनि सब सूला ॥
। हे कहि कोटिक कथाप्रसंगा । रामु विलोकहिं गंगतरंगा ॥
। चिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई । विबुध-नदी-महिमा अधिकाई ॥
। अनु कीन्ह पंथस्रम गयेऊ । सुवि जलु पिअत मुदित मन भयेऊ ॥
। मिरत जाहि मिटै स्रमभारू । तेहि स्रम, यह लौकिक व्यवहारू ॥

१ द्विविधा में २ दुःख और घकावट से ३ विमान ४ चिह्न ५ (धिक्) ७ दुःख

दो०—सुद्ध सच्चिदानंदमय, कंद आनु-कुल-केतु ।

चरित करत नर अनुहरत, संसृति-सागर-सेतु ॥ ८६ ॥

यह सुधि गुह^३ निपाद जय पाई । मुदित लिए प्रिय वंधु बो
लिए फल मूल भेंट भरि भारा । मिलन चलेउ हिय हरषु अ
करि दंडवत भेंट धरि आगें । प्रभुहि विलोकत अति अनुरा
सहज-सनेह-धियस रघुराई । पूँछी कुसल निकट बैठा
नाथ कुसल पदपंकज देखें । भयेउं भागभालन जन लेखें
देव धरनि-धनु-धाम तुम्हारा । मैं जनु नाचु सहित परि
कृपा करिअ पुर धारिअ पाऊ । थापिअ जनु सनु लोगु सि
कहेहु सत्य सब सखा सुजाना । मोहि दीन्ह पितु आयसु आ

दो०—वरष चारिदल वासु दन, मुनि-व्रत-वेषु अहार ।

ग्रामवास नहिं उचित सुनि गुहहि भयेउ दुखभार ॥

राम-कपन-स्त्रिय-रूप निहारी । कहहिं सप्रेम ग्राम-नर-नारी
ते पितु मातु कहहु सखि कैसे । जिन्ह पठए वन दालक ऐसे
एक कहहिं भल भूपाते कीन्हा । लोयनलाहु^४ हमहिं विधि दीन
तव निपादपति उर अनुमाना । तरु सिंधुभा^५ मनोहर जाना
लै रघुनाथहि छाँउं देखाषा । कहेउ राम सब भाँति सुहाव
पुरजन करि जोहारु घर आए । रघुवर संध्या करन सिधाप
गुह सर्वाँरि साथरी डलाई^६ । कुल-किसलय-मय मृदुल सुहाई
सुचि फल मूल मधुर मृदु जाती । दोना भरि भरि राखेसि आ

दो०—सिच सुमंत्र आता सहित, कंद मूल फल खाइ ।

सयन कीन्ह-रघु-वंस-भनि, पाय पलोटत भाइ ॥ ८७ ॥

१ (तंत्र+चित्त+आनन्द) सत्य+चैतन्य+आनन्द २ संसार सागर
गुल ३ मीलों के रागा का नाम ४ अर्थात् मत्तजनों में हुआ ५ नेत्रों का ल
६ शीशम ७ विछाया ।

उठे लपन प्रभु सोवत जानी । कहि सत्रिवहि सोवन मृदुबानी ॥
 कलुक दूरि सजि वानसरसन । जागन लगे वैठि वीरासन ॥
 गुह बोलाइ पाहरू प्रतीती । ठाँवँ ठाँवँ राखे अति प्रीती ॥
 आपु लपन पहिं बेटेउं जाई । कटि^२ भाथी^१ सरचाप चढ़ाई ॥
 सोवत प्रभुहि निहारि निषादू । भयेउ प्रेमवस हृदय विषादू ॥
 तनु पुलकित जलु लोचन बहई । वचन सप्रेम लपन सन कहई ॥
 भू-पति-भवन सुभाय सुहावा । सुर-पति-सदनु न पटतर^४ पावा ॥
 मनि-मय-रचित चारु चौबारे । जनु रतिपति^५ निज हाथ सँवारे ॥

दो०—सुचि सुविचित्र सु-भोग-मय; सुमन सुगंध सुवास ।

पलंग मंजु मनिदीप जहँ सब विधि सकल सुपास ॥ ६१ ॥

विविध बसन उपधान^१ तुराई^२ । छोरफेन मृदु विसद^३ सुहाई ॥
 तहँ सियरामु सयन निसि करहीं । निज छवि-रति-मनोज-मृदु हरहीं ॥
 ते सिय रामु साथरी सोए । ललित बसन बिनु जाहिं न जोए ॥
 मातु पिता परिजन पुरवाली । सखा सुसील दास अरु दासी ॥
 जोगवाहिं जिन्हहिं प्रान की नाई । महि सोवत तेइ राम गोसाई ॥
 पिता जनक जग विदित प्रभाऊ । लसुर-सुरेससखा रघुराऊ ॥
 रामचंद्रु पति सो बैदेही । सोवति महि, विधि बाम न केही ॥
 सिय रघुवीर कि कानन जोगू । करम प्रधान सत्य कह लोगू ॥

दो०—कैकयनंदिनि मंदमति, कठिन कुटिलपनु कीन्ह ।

जोहि रघुनंदन जानकिहिं, सुखअवसर दुख दीन्ह ॥ ६२ ॥

भर दिन-कर-कुल विटप कुठारी^६ । कुमति कीन्ह सब दिस्व-दुखारी ॥
 भयेउ विषाद निषादहि भारी । रामसाय-महि-सयन निहारी ॥

१ विश्वासपात्र-पहरुआ २ फमर ३ तरकस ४ समता ५ कामदेव ६ तकिया
 ७ तोषक (विशद)

*दिनकर कुल-विटप, रूपक कर्म०; दिनकर-कुल-विटप-कुठारी, सम्प्रदान ।

बोले लपन मधुर मृदु-बानी । ग्यान विराग-भगति-रस सानो ।
 काहु न कोउ सुख दुख कर दाता । निज कृत करम भोग सबु घाता ।
 जोग^१ वियोग^२ भोग भल मंदा^३ । हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा ।
 जनमु मरनु जहँ लागि जगजालू । संपति बिपति करम अरु कातू ।
 धरनि धामु धनु पुर परिवारू । सरगु^४ नरकु जहँ लागि व्यवहारू ।
 देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं । मोह-मूल^५ परमारथ^६ नाहीं ।

दो०—सपने होइ भिखारि नृपु, रंकु नाकपति^७ होइ ।

जागे लाभु न हानि कलु, तिमि प्रपंच^८ जिय जोइ ॥६३॥

अस विचारि नहिं कीजिअ रोषू । काहुहि वादि न देख्य दोषू ॥
 मोहनिसा^९ सबु सीवनिहारा । देखिअ सपन अनेक प्रकारा ॥
 एहि जग-जामिनि जागहिं जोगी । परमारथी प्रपंचवियोगी^{१०} ॥
 जानिअ तबीहि जीव जग जागा । जब सब बिषय विलास विरागा^{११} ॥
 होइ विवेकु मोहभ्रम भागा । तव रघु-नाथ-चरन अनुरागा ॥
 सखा परम परमारथु एहू । मन-क्रम वचन रामपदनेहू ॥
 राम ब्रह्म परमारथरूपा । अविगत,^{१२} अलख,^{१३} अनादि, अनूपा^{१४} ।
 सकल-विकार-रहित^{१५} गत-भेदा^{१६} । कहि नित नेति^{१७} निरुपाहिं बेदा

(१) मिथ्या (२) जुदाई (३) बुरा ४ (स्वर्ग) ५ (मोह मूलक) मोह है मूल
 में जिनकी, बहुश्रीहि । ६ परम तत्व, माया के बस्त्रों से परे, शास्त्रीय ज्ञान वा
 सत्याज्ञान ७ इन्द्र (नाक+स्वर्ग) ८ माया ९ अज्ञान रात्रि १० माया से रहित
 ११ भोग विलासों से छूट जाय । १२ जो जाना न जाय १३ (अलक्ष्य) जो
 देखा न जाय । १४ उपमा रहित १५ विकार हैं—(१) जन्म (२) वृद्धि (३) विवर्ण
 (४) क्षीय (५) क्षय (६) मरण । १६ समदर्शी १७ (न+इति)

दो० भगत भूमि भूसुर^१ सुरभि^२, सुर हित लागि कृपाल ।

करत चरित धरि मनुज तन, सुनत मिटाहि जगजाल^३ ॥६४॥

सखा समुक्ति अस परिहरि मोह । सिय-रघुवीर-चरन रत होह ॥
कहत रामगुन भा भिनुसारा^४ । जागे जग मंगल-दातारा^५ ॥
संकल सौच करि राम नहावा । सुचि सुजान बटछीर भंगावा ॥
अनुजसहित सिर जटा बनाष । देखि सुमंत्र नयनजल छाए ॥
हृदय दाहु अति बदन मलाना । कह कर जोरि बचन अति दीना^६ ॥
नाथ कहेउ अस कोसलनाथा । लै रथ जाहु राम के साथी ॥
बन देखाइ सुरसरि अन्हवाई । आनेहु फेरि बेगि दोउ भाई ॥
खखनु रामु सिब आनेहु फेरी । संसय सकल संकोच निबेरी^७ ॥

दो०—रूप अस कहेउ गोसाँई जस, कहैं करौ बलि सोइ ।

करि विनती पायन्ह परेउ, दीन्ह बाल जिमि रोइ ॥६५॥

जात कृपा करि कीजिअ सोई । जातें अवध अनाथ न होई ॥
संबिहि राम उठाइ प्रबोधा^१ । तात धरममनु तुम्ह सब सोधा^२ ॥
सिबि दधीच हरिचंद नरेसा ॥ सहै धरमहित कोटि कलेसा ॥
*रतिदेव बलि भूप सुजाता । धरसु धरेउ सहि संकट नाना ॥

१ आश्रय २ शाय ३ संसार के फदे ४ प्रतःकाल ५ संसार को आनन्द देने वाले ६ नम्र ७ दूर करके ८ समझाया ९ मनन किया है ।

*एक चार राजा रत्तिदेव सकटुम्ब वन में निवास करते थे । एक समय उन्हें ४८ दिन तक अन्न न मिलने के कारण निराहार रहना पड़ा । जब ४९ वें दिन कुछ अन्न प्राप्त हुआ तो भोजन के अवसर पर एक भूखा चाँडाल वहा आगया और भोजन मांगा राजा ने सम्पूर्ण भोजन देकर उसकी लुभा निवृत्त की और स्वयं भूखा रह गया ।

धरमु न दूसरं सत्यसमाना । आगम निगम पुरान^१ बखानी ॥
 मैं सोइ धरमु सुलभ करि पावा । तजैं तिहँपुर अपजसु छावा ॥
 संभावित^२ कहँ अपजसलाहू । मरन-कोटि सम दारुन दाहू ॥
 तुम्ह सन तात बहुत का कहऊँ । दिँएँ उतरु फिरि पातकु लहऊँ ॥

दो०—पितुपद गहि कहि कोटि नति, विनय करव करि जोरि ।

चिंता कवनिहुँ बात कै तात करिय जनि मोरि ॥६६॥

तुम्ह पुनि पितु सम अति हित मोरें । विनती करौं नात कर जांरें ॥
 सब विधि सोइ करतव्य तुम्हारे । दुख न पाव पितु सोच हमारे ॥
 सुनि रघु-नाथ-सचिव-संवादू । भयेउ सपरिजन^४ विकल^५ निपादू ॥
 पुनि कहु लपन कहीं कटु वानी । प्रभु बरजे बड़ अनुचित जानी ॥
 सकुचि राम निज सपथ देवाई । लपनसँदेसु कहिअ जनि जाई ॥
 कह सुमंत्रु पुनि भूपसँदेसू^६ । सहिन सकिहि सिय विपिन^७ कलेशू ॥
 जेहि विधि अवध आव फिरि लीया । सोइ रघुवरहिं तुम्हहिं करनीया ॥
 न तरु निपट अवलंब विहीना^८ । मैं न जिअव जिमि जल विनु सीना ॥

दो०-महकें^९ ससुरें सकल सुख, जयहिं जहाँ मनु मान ।

तहँ तव रदहिं सुखेनसिय, जव लागि विपति-विहान^{१०} ॥६७॥

विनती भूप कीन्ह जेहि भौंती । आरति प्रीति न सो कहि जाती ॥
 पितुसँदेसु सुनि कृपानिधानासियहि दान्हि सिख कोटि विधाना^{११} ॥
 सासु ससुर गुर प्रिय परिवारू । फिरहु त सब कर मिटै खभारू^{१२} ॥
 सुनि पति वचन कहत वैदेही । सुनहु प्रानपति परम सनेही ॥
 प्रभु करनामय परम विवेकी । तनु तजि रहत छाँह किमि छुंकी^{१३} ॥
 प्रभा^{१४} जाइ कहँ भानु विहाई । कहँ चंद्रिका^{१५} चंदु तजि जाई ॥

१ वेद शास्त्र २ प्रतिविन पुरुष ३ कठिन दृढदाई ४ कुटुम्ब सहित ५ दुखी
 ६ समाचार ७ जङ्गल ८ बिना सहारे ९ पिता के घर १० दूर होय ११ करीबों
 तार की १२ दुःख १३ छोड़ कर १४ भूप १५ चांदनी ।

गतिहि प्रेममय विनय सुनाई । कहति सचिव सन गिरा' सुहाई ॥
तुम्ह पितु-ससुर-सरिस-हितकारी । उतरु देउ फिरि अनुचित भारी ॥

दो०—आरतिवस^२ सनमुख भइउँ, बिलगु^३ न मानव तात ।

आरज^४ सुत-पद-कमल विनु, वादि जहाँ लागि नात ॥६८॥

पितु-वैभव बिलासु* मैं डीठा^१ । नृप मनि-मुकुट^२ मिलित पदपीठा^३ ॥
सुखनिधान अस पितुगृह मोरें । पियविहीन^४ मन भाव न भोरें ॥
ससुर चक्कवह^५ कोसलराऊ । भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ ॥
आगे होइ जेहि सुरपति लेई । अरधसिंघासन आसनु-देई ॥
ससुर पताहस^६ अवधनिवासू । प्रिय परिवारु मातुसम सासू ॥
बिनु रघुपति-पद-पट्टम-परागा । मोहि कोउ सपनेहु सुखद न लागा ॥
अगम पंथ बन भूमि पहारा । करि केहरि सर सरित अपारा ॥
कोल किरात कुरंग^७ बिहंगा^८ । मोहि सब सुखद प्रानपति संग्गा ॥

दो०—सासु ससुर सन मोरि हूँति^१, विनय करबि परि पायँ ।

मोरि सोखु जनि करिअ कछु, मैं बन सुखी सुभाय ॥६९॥

प्राननाथ प्रिय देवर साथी । वीर-धुरीण^१ धरं धनु भाथा ॥
नहिं मग-स्रमु, स्रमु दुख मन मोरें। मोहि लागि सोच करिअ जनि भोरें^२ ॥
सुनिसुमंत्रु सिथ-सीतालि बानी। भयेउ विकलजनु फनि^३ मनिहानी^४ ॥
नयन सूझ नहिं सुनै न काना । कहि न सकै कछु अति अकुलाना ॥

१ वाणी २ दुखी होकर ३ बुरा ४ (आर्य्य) श्वसुर ५ आनंद ६ देखा है
मणियों से बने हुए राजाओं के मुकुट ८ पैरों पर ९ रहित १० (चक्रवर्ती)
११ ऐसे १२ हरिण १३ पत्ता १४ मेरी ओर से १५ मुखिया १६ भूल कर भ
१७ सर्प १८ मणि रहित ।

रामु प्रबोधु कीन्हि बहु भाँती । तदपि होति नहिं सीतल छाती ॥
 जतन^१ अनेक साथहित^२ कीन्है । उचित उतर रघुनन्दन दीन्है ॥
 मेदि जाइ नहिं रामरजाई^३ । कठिन करमगति कछु न बसाई ॥
 राम-लपन-सिय पद सिरु नाई । फिरेउ बनिकु जिमि मूर^४ गँवाई ॥
 दो०—रथ हाँकेउ, हय रामतन, हेरि हेरि हिंहिनाहि ।

देखि निपाद विषादबस, धुनहिं सीस पछिताहि ॥१००॥

जासु वियोग बिकल पसु ऐसे । प्रजा मातु पितु जीहहिं कैसे ॥
 बरबस राम सुमंत्रु पठाए । सुरसरितीर आप तब आप ॥
 माँगी नाव, न केवट आना^५ । कहै तुम्हार मरमु में जाना ॥
 चरन-कमल-रज कहँ सबु कहई । मानुषकरनि मूरि^६ कछु अहई ॥
 छुअत सिला^७ भइ नारि सुहाई । पाहन तँ न काठ कठिनाई ॥
 तरनिउँ मुनिघरनी होइ जाई । षाट^८ परै मोरि नाव उड़ाई ॥
 यहि प्रतिपाला सबु परिवारु । नहिं जानौ कछु और कबारु ॥
 जाँ प्रभु पार अवसि गा चहइ । मोहि पदपदुम पपारन^९ कहइ ॥

छंद—पदकमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहाँ ।

मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साँची-कहाँ ॥

बरु तीर मारहु लपन पै जब लगि न पायँ पखारिहाँ^{१०} ।

तब लगि न तुलसीदास-नाथ कृपालु पारु उतारिहाँ ॥

सो०—सुनि केवट के बयन प्रेम लपेटे अटपटे ।

बिहँसे करुना-अयन चितै जानकी लपन-तन ॥१०१॥

कृपासिंधु बोले मुसुकाई । सोइ करु जेहि तव नाव न जाई ॥
 बेगि आनु जल पाय पखारु । होत बिलंब, उतारहि पारु ॥
 जासु नाम सुमिरत एक बारा । उतराहि नर भवसिंधु अपारा ॥

१ यत्न २ संग के लिये (३) रायाजा- (४) मूल-धन पूंजी (५) लाय
 ६ औषध ७ पत्थर ८ जीविका की राह ९ कारोबार १० कमलरूपी चरण
 ११ प्रदायक धोना ।

सोई कृपालु केवटहि निहोरा^१ । जेहि जगु किए तिहुँ पगहुँ^२ तें थोरा ॥
 पदनख^३ निराखि^४ देवसरि हरषी । सुनि प्रभुबचन मोहि मत करषी^५ ।
 केवट रामरजायसु पावा । पानि कठवता^६ भरि लेइ आघा ॥
 अति आनंद उमगि अनुरागा । चरनसरोज पखारन लागा ॥
 बरषि सुमन सुर सकल सिहाही । एहि सम पुन्यपुंज^७ कोउ नार्ही ॥

श्लो०—पद पखारि जलु पान करि, आपु सहित परिवार ।

पितर^८ पारु करि प्रभुहि पुनि, मुदित गयेउ लेइ पार ॥ १०२ ॥

उतरि ठाढ़ भए सुरसरिरेता । सीय रामु गुह लषन समेता ॥
 केवट उतरि दंडवत कीन्हा । प्रभुहिसकुच एहि नहि कछु दीन्हा ॥
 पियहिय की सिय जाननिहारी । मनिमुँदरी मन-मुदित उतारी ॥
 कहेउ कृपालु लेहि उतराई । केवट चरन गहे अकुलाई ॥
 नाथ आजु मैं काह न पावा । मिटे दोष-दुख-दारिद-दावा ॥
 बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी । आजुदीन्हि विधि बनि भलि भूरी ॥
 अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें । दीनदयाल अनुग्रह तोरें ॥
 फिरती बार-मोहि जोइ देवा । सो प्रसादु मैं सिर धरि लेवा ॥

श्लो०—बहुत कीन्ह प्रभु लषन सिय नहि कछु केवट लेइ ।

बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु बेइ ॥ १०३ ॥

तव मञ्जनु करि रघुकुलनाथा । पूजि पारथिव^{१०} नायेउ माथा ॥
 सिय सुरसरिहि कहेउ कर जोरी । मातु मनोरथ पुरउबि मोरी ॥
 पति-देवर-संग कुसल बहोरी । आइ करौ जेहि पूजा तोरी ॥
 सुनि भियबिनय प्रेम-रस-सानी । भइ तब बिमल बारि बरबानी^{११} ॥
 सुनु रघु-वीर-प्रिया वैदेही^{१२} । तव प्रभाव जग बिदित न केही ॥

१ प्रार्थना २ तीन पैर ३ चरणों के नाखून ४ देखकर ५ हरिलिया (६) पात्र विशेष ७ पुन्य का समूह ८ पूर्वज ९ पूरे तौर से १० महादेव ११ पवित्र जल की ओठ वाणी निकली १२ सीता ।

लोकप होहि बिलोकत तोरें । तोहि सेवाहिं सब सिधि कर जोरें ॥
तुम्ह जो हमहिं बड़ि विनय सुनाई । कृपा कीन्हि, मोहि दीन्हि बड़ाई ॥
तदपि, देवि मैं देवि असीसा । सफल होन हित निज बागीसा ॥

दो—प्राननाथ देवरसहित कुसल कोसला आइ ।

पूजिहि सब मनकामना सुजसु रहिहि जग छाइ ॥१०४॥

गंगवचन सुनि मंगलमूला । मुदित सीय सुरसरि अनुकूला ॥
तब प्रभु-गुहाहिं कहेउ घर जाहू । सुनत सुख मुखु भा उर दाहू ॥
दीन वचन गुह कह कर जोरी । विनय सुनहु रघु-कुल मनि^१ मोरी ॥
नाथ साथ रहि पंथु देखाई । करि दिन चारि चरनसेवकाई ॥
जोहि वन जाइ रहब रघुराई । परनकुटी^२ मैं करबि सुहाई ॥
तब मोहि कहँ जसि देव रजाई । सोइ करिहौं रघु-बीर-दोहाई ॥
सहजं सनेह^३ राम लखि तासू । संग लीन्ह गुह हृदय हुलासू ॥
पुनि गुह ग्याति बोलि सब लीन्है । करि परितोषु विदा तब कीन्है ॥

दो०—तब गनपति । सब सुमिरि प्रभु नाइ सुरसरिहि माथ ।

सखा-अनुज-सिय-सहित वन गवनु^४ कीन्ह रघुनाथ ॥१०५॥

तोहि दिन भयेउ विपट तर बासू । लपन सखा सब कीन्ह सुपासू ॥
प्रात प्रातकृत^५ करि रघुराई । तीरथराजु दिखि प्रभु जाई
सचिव^६ सत्य श्रद्धा^७ प्रिय नारी । माधव^८ सरिस मीतु^९ हितकारी^{१०} ॥
चारि पदारथ भरा भंडारु^{११} । पुन्य प्रदेश देस अति चारु ॥
छत्रु अगम गढु^{१२} गाढ़^{१३} सुहावा । सपनेहुं नहिं प्रतिपच्छिन्ह^{१४} पाषा
सेन सकल तीरथ वर वीरा । कलुष-अनीक-दलन^{१५} रनधीरा ॥
संगसु-सिंहासन सुठि सोहा । छत्रु अषयवट^{१६} मुनिमनु मोहा ॥

१ सूर्य कुल में मणि सदृश बृति वाले हैं जो २ पत्तों की झोंपड़ी ३ असाधारण
प्रेम ४ कूच ५ प्रातःकाल की शौच संघ्यावंदन इत्यादि ६ मन्त्री ७ ईश्वर पर दृढ़
विश्वास ८ बेनी माधव ९ मित्र १० हित ११ कोष १२ किला १३ मजबूत १४ वैरी
१५ पाप की सेना के नष्ट करने वाले १६ अशयट्टक ।

चवँर^१ जमुन अरु गंग तरंगा । देखि होहिँ दुख दारिद भंगा ॥
दो०—सेवाहिँ सुकृतो साधु सुचि पावहिँ सब मन-काम ।

बंदी वेद-पुरान-गन कहाहिँ विमल गुनग्राम^२ ॥१०६॥

को कहि सकै प्रयागप्रमाऊ । कलुष - पुंज - कुंजर-मृग - राऊ ॥

अस तीरथपति देखि सुहावा । सुखसागर रघुवर सुखु पावा ॥

कहि सिय लषनहि सखहि सुनाई । श्रीमुख^३ तीरथ - राज - बडाई ॥

करि प्रमानु देखत बन वागा । कहत महातम^४ अति अनुरागा ॥

एहि विधि आइ विलोकी बेनी^५ । सुभिरत सकल-सुमंगल-देनी ॥

मुदित नहाइ कीन्हि सिवसेवा । पूजि जथाविधि तीरथदेवा^६ ॥

तब प्रभु भरद्वाज पहिँ आए । करत दंडवत मुनि उर लाए ॥

मुनि-मन-मोद न कळु कहि जाई । ब्रह्मानंदरासि^७ जनु पाई ॥

दो०—दीन्हि असीस, मुनीस उर, अति अनंदु अस जानि

लोचनगोचर^८ सुकृतफल^९, मनहुँ किए विधि आनि ॥१०७॥

कुसल प्रश्न करि आसन दीन्हे । पूजि प्रेम परिपूरन कीन्हे ॥

कंद मूल फल अंकुर नीके । दिए आनि मुनि मनहुँ अभीके^{१०} ॥

सीय-लपन-जन-सहित सुहाए । अति रुचि राम मूल फल खाए ॥

भए विगतस्म^{११} राम सुखारे । भरद्वाज मृदु वचन उचारे ॥

आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू । आजु सुफल जपु जोग धिरागू ॥

सफल सकल-सुभ-साधन-साजू^{१२} । राम तुम्हहिँ अवलोकत आजू ॥

लाभ-अवधि सुभ-अवधि^{१३} न दूजी । तुम्हरेँ दरस आस सब पूजी ॥

अव करि कृपा देहु बर पहू । निज-पद-सरसिज सहज सनेहू ॥

दो०—करम वचन मन छाँड़ि छल, जब लागि जनु न तुम्हार ।

तब लागि सुखु सपनेहुँ नहीं, किए कोटि उपचार^{१४} ॥१०८॥

१ चौर २ गुणों का समूह ३ अपने मुँह से ४ (महात्म) फल ५ त्रिवेणी
६ तीर्थराज के देवना ७ ब्रह्मानंद का समूह ८ आँखों के सामने ९ पुण्य का
फल १० अमृत ११ स्वस्थ १२ सम्पूर्ण शुभ साधनों का सामान १३ सीमा
१४ तदवीर ।

सुनु मुनिवचन रामु सकुचाने । भाव भगति आनंद अघाने ॥
 तव रघुवर मुनि सुजस सुहावा । कोटि भाँति कहि सबहि सुनावा ॥
 सो बड़ सो सब-गुन-गन-गेहू । जेहि मुनीस तुम्ह आदर देहू ॥
 मुनि रघुवीर परसपर नवहीं । वचन-अगोचर सुख अमुभवहीं ॥
 यह सुधि पाइ प्रयागनिवासी । बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी ॥
 भरद्वाजआश्रम सब आप । देखन दसरथसुअन सुहाय ॥
 राम प्रनाम कीन्ह सब काहू । मुदित भए लहि लोचनलाहू ॥
 देहि असीस परम सुखु पाई । फिरे सराहत सुंदरताई ॥

दो०—राम कीन्ह विश्राम निसि, प्रात प्रयाग नहाइ ।

चले सहित सिय लपन जनु, मुदित मुनिहिं सिरुनाइ ॥१०६॥

राम सप्रेम कहेउ, मुनि पाहीं । नाथ कहिअ हम केहि मग जाहीं ॥
 मुनि मन बिहाँसि राम सन कहहीं । सुगम सकल मग तुम्ह कहँ अहहीं ॥
 साथ लागि मुनि सिष्य बोलाए । मुनि मन मुदित पचासक आप ॥
 सवन्हि राम पर प्रेम अपारा । सकल कहाहिं "मगु" दीख हमारा ॥
 मुनि बटु चारि संग तब दीन्हें । जिन्ह बहु जनम सुकृत सब कीन्हें ॥
 करि प्रनामु रिपि आयसु पाई । प्रमुदित हृदय चले रघुराई ॥
 ग्राम निकट जब निकसाहिं जाई । देखहिं दरसु नारिनर धाई ॥
 होहिं सनाथ जनमफलु पाई । फिराहिं दुखित मनु संग पठाई ॥

दो०—विदा किए बटु विनय करि, फिरे पाइ मनकाम ।

उतरि नहाए जमुनजल, जो सरीरसम स्याम ॥ ११० ॥

सुनत तीरवासी नरनारी । धाप निज निज काज बिसारी ॥
 लपन-राम-सिय-सुंदरताई । देखि कराहिं निज भाग्य बड़ाई ॥
 अति लालसा वसहि मन माहीं । नाउँ गाउँ बूझत सकुचाहीं ॥

(१) भक्ति-भाव और आनन्द में परिपूरित, (२) अकथनीय सुख ३ आसान

४ रास्ता ५ प्रसन्न ६ इच्छा अभिलाषा ७ इच्छा

तेन्ह महुँ बयविरिध सयाने । तिन्ह करि जुगुति^१ रामु पहिचाने ॥
 लकथा तिन्ह सबहिं सुनाई । बनहि चले पितुआयसु पाई ॥
 । सविषाद^२ सकल पछिताहीं । रानी राय कीन्ह भल नाहीं ॥
 । अवसर एकु तापस आवा । तेजपुंज लघुबयस मुहावा ॥
 । अलक्षित^३ गति बेष बिरागी । मन-क्रम-बचन रामअपुरागी^४ ॥
 । १०—सजल नयन तन पुलकि, निज इष्टदेव पहिचानि ।

परेउ दंड जिमि धरनितल^५, दसा न जाइ बंखानि ॥१११॥
 । सप्रेम पुलकि उर लावा । परम रंक जनु परिस पावा ॥
 । हुँ प्रेम परमारथ दोऊ । मिलत धरें तन कह सब कोऊ ॥
 । रि लषन पायन्ह सोइ लागा । लीन्ह उठाइ उमगि अनुरागा ॥
 । नेसिय-चरन-धूरि धरि सीसा । जननि जानि सिसुदीन्हि असीसा ॥
 । रह निषाद दंडवत तेही । मिलेउ मुदित लखि रामसनेही ॥
 । अत नयनपुट^६ रूपु-पियूखा^७ । मुदित सुअलनु^८ पाइ जिमि भूखा ॥
 । पितु मातु कहहु सखि कैसे । जिन्ह पठप बन बालक ऐसे ॥
 । म-लषन-सिय-रूप निहारी । होहि सनेह विकल नरनारी ॥
 । १०—तब रघुबीर अनेक बिधि, सखहि^९ सिखावन दीन्ह ।

रामरजायसु ससि धरि, भवन गवनु तेइ कीन्ह ॥११२॥
 । नि सिय राम लषन कर जोरी । जमुनाहिं कीन्ह प्रनामु बहोरी ॥
 । ले ससीय मुदित दोउ भाई । रवितनुजा^{१०} कै करत बड़ाई ॥
 । थिक अनेक मिलहिं मगु जाता । कहहिं सप्रेम देखि दोउ भ्राता ॥
 । राजलषन सब अंग तुम्होर । देखि सोचु अति हृदय हमारे ॥
 । मारग चलेहु पयादेहिं पाएँ । ज्योतिषु भूठ हमारेहि भाएँ ॥
 । प्रगमु पंथ गिरि कानन भारी । तेहि महुँ साथ नारि सुकुमारी ॥
 । धरि केहरि बन जाइ न जोई । हम संग चलहिं जो आयसु होई ॥

१ युक्ति २ दुखी ३ जो दिखाई न दे ४ प्रेमी ५ पृथ्वी पर ६ नेत्र-रूप दीनाभर
 के ७ अमृत ८ सुन्दर भोजन ९ मित्र की १० जमुना ।

जाव जहाँ लगी तहँ पहुँचाई । फिरव वहोरि तुम्हहिँ सिरु नाई
दा०—एहि विधि पूँछहिँ प्रेम बस, पुलकगात जलु नैन ।

कृपासिंधु फेरहिँ तिन्हहिँ, कहि विनीत मृदु बैन ॥११३॥

जे पुर गाँव बसाहिँ मग माहीं । तिन्हहिँ नाग-सुर-नगर सिहाहीं
केहि सुकृती केहि धरी बसाए । धन्य पुन्यमय परम सुहाए
जहँ जहँ रामचरन चलि जाहीं । तिन्ह समान अमरावति नाहीं
पुन्यपुंज मग-निकट-निवासी । तिन्हहिँ सराहहिँ सुर पुर बासी
जे भरि नयन विलोकाहिँ रामहि । सीता-लपन-सहित घनस्यामाहिँ
जे सर सारित राम अवगाहहिँ^१ । तिन्हहिँ देव-सर-सरित सराहहिँ
जेहि तरुतर प्रभु बैठहिँ जाई । कराह कलपतरु^२ तासु बडाई
परसि राम-पद-पद्म-परागा । मानति भूमि भूरि निज नागा

दा०—छाँह करहिँ घन विबुधगन, वरपहिँ सुमन सिहाहिँ ।

देखत गिरि वन विहँग मृग, रानु चले मग जाहिँ ॥११४॥

सीता-लपन-सहित रघुराई । गाँव निकट जब निकसहिँ जाई
सुनि सब बाल वृद्ध नर नारी । चलहिँ तुरत गृह-काज विसारी
राम-लपन-सिय-रूप निहारी । पाइ नयनफलु होहिँ सुखारी
सजल विलोचन^३ पुलक सरीरा । सब भए मगन देखि दोउ बीरा
बरनि न जाइ दसा तिन्ह केरी । लहि जनु रंकन्हि सुर-मनि देख
एकन्हि एक बोलि सिख देहीं । लोचन-लाहु लेहु छुन एही
रामहिँ देखि एक अनुरागे^४ । चितवत चले जाहिँ संग सागे
एक नयनमग छवि उर आनी । होहिँ सिथिल तन मन बरधान

दा०—एक देखि बटछाँह भलि, डासि मृदुल तन पात ।

कहहिँ गवाँइअ^५ छिनुक अम, गवनव अवहि कि प्राता॥१॥

१ स्नान करते हैं २ कल्पवृक्ष ३ नेत्र ४ कौमुभ-मणि ५ प्रेम किया है
स्त्रीजिये ।

कलस भरि आनहि पानी । अचइअ नाथ कहहि मृदुबानी ॥
 न प्रिय वचन प्राति अति देखी । राम कृपालु सुसाल विलेखी ॥
 ती श्रामित सीय मन माहीं । धरिक बिलंबु कान्ह बटछाहीं ॥
 नारिनर देखहि सोभा ॥ रूपअनूप नयन मनु लोभा ॥

चहुँ आरा । रामचंद्र-मुख - चंद-चकोरा ॥
 न-तमाल-वरन तनु सोहा । देखत कोटि-मदन-मनु मोहा ॥
 मनि-वरन लषनु सुठि नीके । नखसिख सुभग भावते जी के ॥
 पट कटिन्ह कसे तनोरा । सोहहि कर कमलति धनु तीरा ॥

१-जया मुकुट सीसनि सुभग, उर भुज जयन विसाल ।
 सरद-परव-विधु-वदन वर, लसत स्वेद कन-जाल ॥११६॥

मनोहर जोरी । सोभा बहुत, थोरि मति मोरी ॥
 लषन-सिय-सुंदरताई । सब चितवहि चित मन मति लाई ॥

नारि नर प्रेम-पिआसे । मनहुँ मृगी मृग देखि दिआसे ॥
 समीप आमतिय जाहीं । पूछत अतिसनेह सकुचाहीं ॥

वार सब लागहि पाएँ । कहहि वचन मृदु सरल सुभाएँ ॥
 कुमारि विनय हम करहीं । तिय सुभाय कछु पूछत डरहीं ॥

मिनि अविनय छुमवि हमारी । विलगु न मानव जानि गवारी ॥
 कृअर दोउ सहज सलानि । इन्ह तें लहि दुति मरकत सोने ॥

१०-स्यामल गौर किसोर वर, सुंदर सुखमा अयन ।
 सरद-सर्वरा-नाथ-मुख, सरदसरोरुह नयन ॥११७॥

१-मनोज-लजावनिहारे । सुमुखि कहहुँ को आहि तुम्हारे ॥
 सनेहमय मंजुल बानी । सकुची सिय, मन महुँ मुसुकानी ॥

हि विलाकि विलाकति धरनी । दुहुँ सकोच सकुचति बरबरनी ॥

१ आचमन कीजिये २ विजली के से रूप वाला ३ तरकस ४ शरद ऋतु
 के चंद्र सदृश रज्ज्वल वदन ५ दीठता ६ सुन्दरता का घर ७ शरद ऋतु
 कमल के सदृश नेत्र करोड़ों कामदेवी को लज्जित करने वाले ८ सुन्दर
 ली (५६०)

सकुचि-सप्रेम बाल-मृग-नयनी । बोली-मधुरबचन पिकवयनी ।
सहज सुभाय सुभग तन गोरे । नामु लपनु लघुदेवर
वहुरि वदनुविधु अंचल^२ ढाँकी । पियतन चितै भौंह करि बाँका
खंजन^३ मंजु तिरौछे नैननि । निज पति कहेउ तिन्हहिं सिय सैननि
भई सुदित सब प्रामवधूर्ती । रंकन्ह रागरासि जनु लूरी

दो०—अतिसप्रेम सिय पायँ परि, बहु विधि देहिं असीस
सदा सोहागिनि होइ तुन्ह; जब लगि महि अहिसीस ॥१॥

पारवतीसम पतिप्रिय होइ । देबि न हम पर-छाँइब छोइ ।
पुनि पुनि विनय करिअ कर जोरी । जौँ एहि मारग फिरिअ बहोरी ।
दरसनु देव जानि निज दासी । लखी सीय सब प्रमपिआसी ।
मधुरबचन कहि कहि परिबोर्षी । जनु कुमुदिनी कौमुदो पोर्षी
तबहिं लपन रघुवररुख जानी । पूँछेउ मगु लोगन्हि मृदुबानी
सुनत नारिनर भए दुखारी । पुलकित गात, बिलोचन बारी
मिटा मोद, मन भए मलाने । विधि निधि^४ दीन्हि लेत जनु छीने
समुझि करम-गति धीरजु कीन्ह। सोधि^५ सुगम मगु तिन्ह कहि दीने

दो०—लपन-जानकी-सहित तब, गवनु कीन्ह रघुनाथ ।

करे सब प्रिय बचन कहि, लिए लाइ मन साथ ॥१॥

फिरत नारिनर अति पछिताहीं । दैअहि दोषु देहिं मन
सहित बिपाद परसपर कहहीं । बिधिकरतब उलटे सब
निपट^६ निरंकुल^७ निष्ठुर^८ निसंकू^९ जेहिंससिकीन्हसरुज^{१०} ।
रुख कलपतरु, सागरु खारा । तेहि पठए बन राजकुमारा
जौँ पै इन्हहिं दीन्ह बनबासू । कीन्ह बादि विधि
ए विचरहिं मग बिनु पदभ्राना । रचे बादि विधि बाहन नाना

१ कोयल की सी भाषा बोलने वाली २ वन ३ खजन पक्षी की तरह सुन्दर ४

५ कृपा, प्रेम ६ फिर ७ प्रेम चाहने वाली ८ जल ९ कोयल १० दूँह

१० बिएकुल ११ दीठ १२ (निष्ठुर) कठोर निदर १४ रोगी १५ जूता ।

हे पराहिं सासि कुसपाता- सुभग सेज^१ कत सृजत विधाता ॥
 रा-बास इन्हहिं विधि दीन्हा । धवलधाम रचि रचि श्रमु कीन्हा ॥
 दो०--जौं ए मुनि-पट-धर^२ जटिल^३, सुंदर सुठि सुकुमार ।

बिबिध भाँति भूषन बसन, बादि किए करतार ॥२२०॥

ए कंद मूल फल खाहीं । बादि सुधादि असन^४ जग माहीं ॥
 कहाँ ए सहज सुहाए । आप प्रगट भय विधि न बनाए ॥
 लंगि बेद कही विधिकरनी । भवन नयन मन गोचर^५ बरनी ॥
 हु खोजि भुषन दसचारी । कहँ अस पुरुष, कहाँ असि नारी ॥
 हिं देखि विधि मनु अनुरागा । पटतर^६ जोग बनावै लागा ॥
 ह बहुत भ्रम एक न आए । तेहि हरिषा^७ बन आनि दुराए ॥
 कहाँ हम बहुत न जानहिं । आपुहिं परम धन्य करि मानहिं ॥
 पुनि पुन्यपुंज हम लेखे । जे देखहिं, देखिहहिं^८ जिन्ह देखे ॥
 ०--एहि विधि कहि कहि बचन प्रिय, लेहिं नयन भरि नीर ।

किमि चलिहहिं मारग अगम, सुठि सुकुमार सरीर ॥२२१॥

रे सनेह विकल यस होहीं । चकई साँभ समय जनु सोहीं ॥
 पद-कमल कठिन मगु जानी । गहवरि हृदय^९ कहै बर जानी ॥
 सत सृदुल चरन अरुनारे^{१०} । सकुचति महि जिमि हृदय हमारे ॥
 जगदीस इन्हहिं बनु दीन्हा । कस न सुमनमय मारगु कीन्हा ॥
 माँगा पाइअ विधि पाहीं । ए रखिअहि सखि आँखिन्ह माहीं ॥
 नरनारि न अवसर आए । तिन्ह-सिय रामु न देखन पाए ॥
 ने सुरूप बूझाई अकुलाई । अब लंगि गए कहाँ लंगि, भाई ॥
 परथ धाइ बिलोकहिं जाई । प्रमुदित फिरहिं जनमफलु-पाई ॥
 दो०--अबला बालक बृद्धजन, कर मीजाहिं पछिताहिं ।

होहिं प्रेमबस लोग इमि, रामु जहाँ जहँ जाहिं ॥ १२२ ॥

१ सुन्दर सैया २ मुनियों के से जी पहिने हों वज्र ३ जो जटा रखाये हों
 भोजन ४ मत्स्य ५ बराबर का ७ जलन ८ देखेंगे ९ गद्गद हृदय १० जाल ।

गाँव गाँव अक्ष होइ अनंदू । देखि भानु-कुल-कैरव-चंद्र
 जे कछु समाचार सुनि पावहि । ते नृपरानिहि दोषु लगावहि
 कहहि एक अति भल नरनाहू । दीन्ह हमहि जेइ लोचनला
 कहहि परसपर लोग लोगई । बातें सरल सनेह सुहाई
 ते पितु मातु धन्य जिन्ह जाण । धन्य सो नगर जहां तें आ
 धन्य सो देसु सैलु^२ वन-गाऊँ । जहँ जहँ जाहि धन्य सोइ ठाऊँ
 सुख पायेउ बिरांचि रचि तेही । ए जेहि के सब भांति सनेही
 राम-लपन-पथि^३ कथा सुहाई । रही सकल मग-कानन छाई

दो०—एहि विधि रघु-कुल-कमल रवि, मग लोगन्ह सुख देत
 जाहि चले देखत विपिन, सिय-सौमित्रि-समेत ॥१२३॥

आगें रामु लपन वन पाछें । तापसबेप विराजत काँ
 उभय^४ बीच सिय सोहति कैसैं । ब्रह्म-जीव-बिच माया जैसे
 बहुरि कहाँ छवि जसि मन वसई । जनु मधु-मदन-मध्य^५ रति ल
 उपमा बहुरि कहाँ जिअ जोही । जनु बुध विधु बिच रोहिनि सोई
 प्रभु-पद-रेख बीच बिच सीता । धरति चरन मग चलति समीत
 सौय-राम-पद-अंक बराएँ । लपन चलहि मगु दाहिन लाएँ
 राम-लपन-सिय प्रीति सुहाई । बचनअगोचर, किमि कहि जाई
 खग मृग मगन देखि छवि होहीं । लिए चोरि चित राम-बटोही

दो०—जिन्ह जिन्ह देखे पथिक प्रिय, सियसमेत दोउ भाइ ।

भव-मगु-अगमु अनंदु तेइ, विनु श्रम रहे सिराइ^६ ॥१२४॥
 अजहुँ जालु उर सपनेहु काऊ । चलहि लपन-सिय-राम बटाऊ^७
 राम-धाम-पथ^८ पाइहि सोई । जो पथ पाव कवहुँ मुनि कोई

१ सूर्यकुलरूपी कुमोदिनी की चंद्रमा के समान प्रसन्न करने वाले । २ (शे
 पर्वत ३ राहगीर चटोही ४ दोनों ५ वसंत और कामदेव के बीच में ६ रास्ता
 ७ पार होगये चटोही ८ स्वर्ग का रास्ता ।

ब रघुवीर श्रमित सिय जानी । देखि निकट बंदु सीतल पानी ॥
 हँवसि कंद मूल फल खाई । प्रात नहाइ चले रघुराई ॥
 खित वन सर सैल सुहाए । बालमीकि आश्रम प्रभु आप ॥
 मु दीख मुनिवास सुहावन । सुंदर गिरि काननु जलु पावन ॥
 तरनि सरोज विटप बन फूले । गुंजत मंजु मधुप रस-भूले ॥
 मृग मृग विपुल कोलाहल करहीं । विरहित वैर मुदित मन चरहीं ॥

दो०—सुचि सुंदर आश्रमु निरखि^३, हरषे राजिवनै^४ । ५५०
 सुनि रघु-वर आगमनु मुनि, आगे आयेउ लैन ॥१२५॥

मुनि कहँ राम दंडवत^२ कीन्हा । आसिरवाटु विप्रवर दीन्हा ॥
 देखि राम छवि नयन जुड़ाने^६ । करि सनमानु आश्रमहिँ आने ॥
 मुनिबर अतिथि प्रानप्रिय पाए । कंद मूल फल मधुर मँगाए ॥
 सिय सौमित्रि राम फल खाए । तव मुनि आसन दिए सुहाए ॥
 बालमीकि मन आनँदु भारी । मंगलमूरति नयन निहारी ॥
 तव करकमल जोरि रघुगई । बोले वचन श्रवन-सुख-दाई^९ ॥
 तुम्ह त्रि-काल-दरसी मुनिनाथा । विस्व वदर^८ जिमि तुम्हरे हाथा ॥
 अस कहि प्रभु सव कथा बखानी । जेहि जेहि भांति दीन्ह वनु रानी ॥

दो०—तात वचन पुनि मातुहित, भाइ भरत अस राउ ।

मो कहँ दरस तुम्हार प्रभु, लयु मम पुन्यप्रभाउ ॥१२६॥

देखि पाँय मुनिराय तुम्हारे । भए सुकृत सब सुफल हमारे ॥
 अब जहँ राउर आयलु होई । मुनि उदवेगु^६ न पावै कोई ॥
 मुनि तापस^{१०} जिन्ह ते दुखु लहहीं । ते नरेस विनु पावक दहहीं ॥
 मंगलमूल विप्रपरितोषु । दहै कोटि कुल भू-सुर-रोषु ॥
 अस जिय जानि कहिअ सोइ ठाऊँ । सिय-सौमित्रि-सहित जहँ जाऊँ ॥

१ भौरा २ विना ३ देख कर ४ कमल के सदृश नेत्र वाले (बहु) ५ प्रणाम
 ६ शीतल हुए ७ कानों को सुख देने वाले, ८ वैर ९ कष्ट १० तपस्वी ।

तहँ रत्नि रुचिर परन-तुन-साला । वास करौं कछु काल कृपाल ।
सहज सरल सुनि रघुवरवानी । साधु साधु बोले मुनि ग्याना ।
कस न कहहु अस रघु-कुल-केतू । तुम्ह पालक संतत श्रुतिसेतू ।

छंद—श्रुति-सेतु-पालक राम तुम्ह - जगदीसमाया जानकी ।
जो मृजति जगु पालति हरति रुख पाइ कृपानिधान की ।
जो सहससीसु अहीसु^१ महि-धरु लपनु स-चराचर भनी
सुरकाज धरि नरराज-तनु चले दलन^२ खल निसिचर-अनी
सो०—राम सरूप तुम्हार बचनअगोचर बुद्धिपर ।

अधिगत^३ अकथ^४ अपार नेति नेति नित निगम कह ॥१३॥
जगु पेखन तुम्ह देखनिहारे । विधि-हरि-संभु - नचावनिहारे ।
तेउ न जानहि मरमु तुम्हारा । अउरु तुम्हहि को जाननिहारे ।
सोइ जानइ जहि देहु जनार्इ । जानत तुम्हहि तुम्हहि होइ जारे ।
तुम्हरिहि कृपा तुम्हहि रघुनंदन । जानहि भगत भगत उर-चंदन
चिदानंदमय^५ देह तुम्हारा । विगतबिकार जान अधिकारी
नरतनु धरहु संत-सुर-काजा । कहहु करहु जस प्राकृत राजा ।
राम देखि सुनि चरित तुम्होर । जइ मोछहि बुध होहि सुखारे
तुम्ह जो कहहु करहु सवु साँचा । जस काछिअ तस चाहिअ नाँचा
दो०—पूछेहु मोहि कि रहाँ कहँ, मैं पूछव सकुचाउँ ।

जहँ न होइ तहँ देहु कहि, तुम्हहि देखावौं ठाउँ ॥१२॥
सुनि मुनि बचन प्रेमरस-साने । सकुचि राम मनमहुँ मुसुकाने
बालमीकि हँस कहहि बहोरी । चानी मधुर अमिअरस-बोरी
सुनहु राम अथ कहाँ निकेता । जहाँ बसहु सिख-लपन-समेता
जिन्ह के श्रवण समुद्रसमाना । कथा तुम्हारि सुभग सरि नागा ।

१ पत्ने और तिनकों का घर २ हमेशा वेद की मर्यादा पालनेवाले ही ३ सहज
सिर जिसके ऐसा सर्पों का राजा बनना करने को ४ दुष्ट और निशाचरों की सेना
५ जो जाना न जाय ७ जो कहा न जाय ८ सर्वदा आनन्द में रहने वाला ।

भरहिं निरंतर होहिं न पूरे । तिन्ह के हिय तुम्ह कहँ गृह रूरे^१ ॥
 जोचन चातक जिन्ह करि राषे । रहहिं दरसजलधर अभिलाषे^२ ॥
 नेदरहिं सरित सिंधु सर भारी । रूपबिंदु-जल होहिं^३ सुखारी ॥
 तिन्ह के हृदयसदन सुखदायक । बसहु बंधु-सिय-सह रघुनायक ॥
 दो०—जस तुम्हार मानस विमल हंसिनि जीहा^४ जासु ।

सुकुताहल गुनगन चुनै राम बसहु हिय तासु ॥१२६॥

प्रभुप्रसाद^५ सुचि सुभग सुवासा । सादर जासु लहै नित नासा^६ ॥
 तुम्हहिं निबेदित भोजन करहीं । प्रभुप्रसाद पट भूषन धरहीं ॥
 सीसनवहिं सुर-गुरु-द्विज देखी । प्रीतिसहित करि विनय विसेखी ॥
 कर नित कराहिं रामपद-पूजा । रामभरोस हृदय नहिं दूजा ॥
 चरन रामतीरथ चलि जाहीं । राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ॥
 मंत्रराजु^७ नित जपहिं तुम्हारा । पूजहिं तुम्हहिं सहित परिवारा ॥
 तरपन होम कराहिं विधि नाना । बिप्र जेवाँइ देहिं बहु दाना ॥
 तुम्ह तें अधिक गुराहिं जिअ जानी । सकल भाय सेवहिं सनमानी ॥
 दो०—सबु करि माँगहिं एकु फलु राम-चरन-रति होउ ।

तिन्ह के मनमंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ ॥१३०॥

काम कोह मद मान न मोहा । लोभ न लोभ न राग न द्रोहा ॥
 जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया । तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया ।
 सब के प्रिय सबके हितकारी । दुख-सुख-सरिस प्रसंसा गारी ॥
 कहाहिं सत्य प्रिय वचन विचारी । जागत सोषत सरन तुम्हारी ॥
 तुम्हहिं छुँडि गति दूसरि नाहीं । राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ॥
 जननीसम जानहिं परनारी । धनु पराव बिष तें बिष भारी ॥
 जे हरषहिं परसंपति देखी । दुखित होहिं परविपति विसेखी ॥

१ उत्तम २ बादलों के दरसन की आशा धरे हुये ३ सुन्दरता रूपी जल की
 बूद ४ जीभ (जिह्वा) ५ आपकी कृपा ६ नाक ७ सब से बड़ा मन्त्र अर्थात्
 राम रामेति इत्यादि ।

जिन्हहिं राम तुम्ह प्रान पिधारे । तिन्ह के मन सुभसदन तुम्हारे ॥

दो० स्वामि सखा पितु मातु गुर, जिन्ह के सब तुम्ह तान ।

मनमंदिरं तिन्ह के बसहु, सीयसहित दोउ भ्रात ॥१३१॥

अवगुन तजि सबके गुन गहहीं । विप्र-धेनु-हित संकट^१-सहहीं ॥

नीतिनिपुन जिन्ह कह जग लीका^२ । घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका

गुन तुम्हार समुझै निज दोसा । जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा ॥

रामभगत प्रिय लागहिं जेही । तेहि उर बलहु सहित वैदेही ॥

जाति पाँति धनु धरमु बड़ाई । प्रिय परिवार सदन-सुखदाई^३ ॥

सब तजि तुम्हहि रहै लउ लाई । तेहि के हृदय रहहु रघुराई ॥

सरशु नरकु अपवरशु^४ समागा । जहँ तहँ देख धरे धनुवाना ॥

करम-वचन मन राउर जेरा । राम करहु तेहि के उर डेरा ॥

दो०—जाहि न चाहिअ कबहुँ कलु, तुम्ह सन लहज सनेहु ।

बसहु निरंतर तासु मन, सो राउर निज गेहु ॥१३२॥

एहि विधि सुनिवर भवन देखाए । वचन सप्रेम राममत भाए ॥

कहँ-सुनि सुनहु भानु-कुल-नायक । आशनु कहीं समय-सुखदायक ॥

चित्रकूट गिरि करहु निधासु । तहँ तुम्हार सब भाँति लुपासु^५ ॥

सैनु-सुहावन^६ कानन चारु । करि-केहरि-सुग विहँग विहारु^७ ॥

नदी पुनीत^८ पुरान बखानी । अधिप्रिया निज-तप-वत जानी ॥

सुर-रिधार नाउँ तंशाशिरि । तैं सब-पातक-पोतक-डाकिनि ॥

अधि आदि सुनि-वर बनु, बसहीं । करहिं जोग जप तप तन कसहीं ॥

१ कष्ट २ गयना ३ सुख देने वाला घर ४ मोज ५ आराम, मुर्भाता ६ सुन्दर पर्वत ७ विहार करने हैं, विवरते हैं । ८ पवित्र ।

९ अनुसूया दत्त की पुत्री थी । वह १०००० वर्ष तप कर मन्दाकिनी की इसलिये जाई कि पति दूत थे और स्नान के दिवसे चतने में कष्ट होता था ।

चलहु सफल श्रम^१ सब कर करहू । राम देहु गौरव^२ गिरिवरहू ॥

१०—चित्रकूट-महिमा श्रमित कहीं महामुनि गाइ ।

आइ नहाए सरित वर लिय समेत दौड भाइ ॥१३३॥

गुबर कहेउ लपन भल घाटू । करहु कतहु अब ठाहर टाटू^३ ॥

पनु दीख पय^४ उतर करारा । चहुँ दिसि फिरेउ धनुष जिमि नारा ॥

नदी पनच^५ सर सम दम दाना । सकल कलुष कलिसाउज^६ नाना ॥

चित्रकूट-जनु अचल^७ अहेरी^८ । चुकै न घात मार सुठभेरी^९ ॥

प्रस कहि लपन ठाँव देखरावा । थल बिलोकि रघुबर सुख पावा ॥

मेउ^{१०} राममनु देवन्ह जाना । चले सहित सुरथपति प्रधाना ॥

कोल-फिरात-वेषे सब आप । रचे परन-तृन-सदन सुहाए ॥

बरनि न जाहिं मंजु दुइ साला । एक ललित लघु एक विसाला ॥

दो०—लपन-जानकी-सहित प्रभु, राजत रजिर निकेत^{११} ।

सोह मदन^{१२} मुनिवेष जनु, रति-रितुराज-समेत^{१३} ॥१३४॥

श्रमर नाग किन्नर दिसि-पाला । चित्रकूट आए तेहि काला ॥

राम प्रनामु कीन्ह सब काऊ । सुदित देव लहि लोचन लाहू ॥

वरपि सुमन कह देव-समाजू । नाथ सनाथ भए हम आजू ॥

फरि बिनती दुख दुसह सुनाए । हरषित निज निज सदन सिधाए ॥

चित्रकूट रघुनंदनु आए । रामाचार मुनि मुनि मुनि आए ॥

आवध देखि सुदित मुनिबृंदा । कीन्ह दंडवत रघु-कुल-चंदा ॥

मुनि रघुवरहिं लाइ उर लेहीं । सुफल होन हित आशिष देहीं ॥

(१) मिहनत (२) वड़ाई (३) ठहरने का प्रबन्ध (४) पयस्विनी (५) प्रत्यंचा
(६) कलियुग के पाप निशाना है (७) अटल (८) शिकारी (९) नजदीक से
(१०) मन लगजाना (११) सुन्दर घर (१२) कामदेव (१३) रति और वसंत ऋतु सहित ।
नदी, उर धनुषकी गाजे की प्रत्यंचा है, सग, दम दान बाण है,
भौति २ के सम्पूर्ण कलियुग के पाप लक्ष्य है ।

सिय-सौमित्रि-राम-छवि देखहिं । साधन^१ सकल सफल करि लेखाहिं
दो०—जथाजोग सनमानि प्रभु, विदा किए मुनिबृन्द^२ ।

करहिं जोग जग जाग^३ तप, निज आश्रमनि सुछंद^४ ॥१३५॥

यह सुधि कोल किरातिन्ह पाई । हरषे जनु नवनिधि घर आई ॥
कंद मूल फल भरि भरि दोना । चले रंक जनु लूटन सोना ॥
तिन्ह महुँ जिन्ह देखे दोउ आता । अपर^५ तिन्हहिं पूछहिं मगु जाता ॥
कहत सुनत रघुवीर-निकाई^६ । आइ सवन्हि देखे रघुराई ॥
करहिं जोहारु भेंट धरि आगे । प्रभुहि विलोकाहिं अति अनुरागे ॥
चित्र लिखे जनु जहुँ तहुँ ठाढ़े । पुलक सरीर, नयन जल बाढ़े ॥
राम सनेह-मगन सब जाने । कहि प्रिय बचन सकल सनमाने ॥
प्रभुहि जोहारि बहोरि बहोरी । बचन बिनीत कहहिं कर जोरी ॥

दो०—अब हम नाथ सनाथ सब, अप देखि प्रभु पाय ।

भाग हमारे आगमनु, राउर कोसलराय ॥ १३६ ॥

धन्य भूमि बन पंथ पहारा । जहुँ जहुँ नाथ पाउ तुम धारा ॥
धन्य विहंग^७ शृंग काननचारी । सफल जनम अप तुम्हाहिं निहारी ॥
हम सब धन्य सहित परिवारा । दीख दरलु भरि नयन तुम्हारा ॥
कीन्ह वासु भल ठाउँ विचारी । इहाँ सकल रित रहब सुखारी ॥
हम सब भाँति करव सेवकाई । करि केहरि आहि वाघ वराई^८ ॥
घन वेहड़ गिरि कंदर खोहा । सब हमार प्रभु पग पग जोहा^९ ॥
जहुँ तहुँ तुमहि अहेर^{१०} खेलाउव । सर निरभर^{११} भल ठाउँ देखाउव ॥
हम सेवक परिवार समेता । नाथ न लज्जुचव आयसु देता ॥

दो०—वेदबचन-मुनिमन-अगम, ते प्रभु करुनाअयन ।

बचन किरातन्ह के सुनत, जिमि पितु वालक-बचन ॥१३७॥

(१) उपाय (२) मुनियों का समूह (३) जज्ञ (यज्ञ) (४) निरंकुश (५) दूसरे
६ सुन्दरता ७ पत्नी ८ बचा कर ९ देखा हुआ १० शिकार ११ करना ।

रामहिँ केवल प्रेक्षु पियारा । जानि लेउ जो जाननिहारा ॥
 राम सकल-वन-चर^१ तब तोषे^२ । कहिँ मृदु बचन प्रेम परिपोषे ॥
 विदा किए सिरु नाइ सिधाए । प्रभुगुन कहत सुनत घर आए ॥
 एहि विधि सिय समेत दोउ भाई । बसाहिँ विपिन सुर-मुनि-सुखदाई ॥
 जब तैं आइ रहे रघुनायकु । तब तैं भयेउ षणु मंगल-दायकु^३ ॥
 फूलहिँ फलहिँ विटप^४ विधि नाना । मंजु-बलित-बर-बेलि-बिताना^५ ॥
 सुर-तरु-सरिस सुभाय सुहाए । मनहुँ विबुधवन^६ परिहरि आए ॥
 गुंज मंजुतर मधुकर^७ स्नेनी^८ । त्रिविध बयारि बहै सुखदेनी ॥
 दो०—नीलकंठ कलकंठ^९ सुक, चातक चक्क चकोर ।

भाँति भाँति बोलहिँ विहँग, श्रवनसुखद चितचोर ॥१३८॥

करि केहरि कपि कोल कुरंगा । विगत-बैर^{१०} बिचरहिँ सब संग ॥
 फिरत अहेर रामछबि देखी । होहिँ मुदित मृगवृंद विसेखी ॥
 विबुधविपिन जहँ लागि जग माहीं । देखि रामबनु सकल सिहाहीं ॥
 सुरसरि सरसई दिनकर-कन्या । मेकलसुता^{११} गोदावरि धन्या ॥
 सब सर सिंधु नदी नद नाना । मंदाकिनि कर करहिँ बखाना ॥
 उदय-अश्रु-गिरि अरु कैलासू । मंदर मेरु सकल-सुर-वासू ॥
 सैल हिमाचल आदिक जेते । चित्रकूटजसु गावहिँ तेते ॥
 विधि^{१२} मुदित मन सुख न समाई । श्रम बिनु विपुल^{१३} बड़ाई पाई ॥

दो०—चित्रकूट के विहँग मृग, बेलि विटप तन जाति ।

पुन्यपुंज सब धन्य अस, कहाहिँ देव दिन राति ॥ १३९ ॥
 नयनवंत रघुवरहिँ विलोकी । पाइ जनम-फल होहिँ विसोकी^{१४} ।
 परसि चरनरज अचर^{१५} सुखारी । भए परमपद के अधिकारी ।
 सो वनु सैल सुभाय सुहावन । मंगलमय अति-पावन-पावन^{१६} ।

१ वनवासी २ सतुष्ट किया ३ मंगल देने वाले ४ वृक्ष ५ बेलों के चँदों
 ६ देवताओं के बन ७ भौरा ८ पाँति ९ कोयल १० प्रेम से ११ नर्वदा १२ विंध्याचल
 पर्वत १३ बहुत १४ शोक रहित १५ स्थावर १६ अत्यंत पवित्र से भी पवित्र ।

महिमा कहिअ कवनिविधि तासु । सुखसागर^१ जहँ कीन्ह निवासु ॥
 पयपयोधि तजि अवध विहाई । जहँ सिय-लपनु-राम रहे आई ॥
 कहि न सकहिं सुषमा^२ जसि कानन । जौं सत सहस होहिं सहसानन ॥
 सो मैं वरनि कहाँ विधि केही । डावरकमठ^३ कि मंदर लेही ॥
 सेवाहिं लपनु करम-मन-वानी । जाइ न सीखु सनेहु बखानी ॥

दो०—छिनु छिनु लखि सिय-राम-पद, जानि आपु पर नेहु ।

करत न सपनेहुँ लपनु चितु, बंधु-मातु-पितु-गेहु ॥१४०॥

रामसंग सिय रहति सुखारी । पुर-परिजन-गृह-सुरति^४ विसारी^५ ॥
 छिनु छिनु पिय-विधु^६ बदनु निहारी । प्रमुदित मनहुँ चकोर-कुमारी ॥
 नाह-नेहु^७ नित बढ़त विलोकी । हरपित रहति दिवस जिमि कोकी ॥
 सियमनु रामचरन अनुरागा । अवध-सहस-समवन प्रिय लागा ॥
 परनकुटी प्रिय प्रियतम संगी । प्रिय परिवारु कुरंग विहंगा ॥
 सासु-ससुर सम मुनितिय मुनिवर । असन अभिय सम कंद मूल फर ॥
 नाथ - लाथ साँथरी सुहाई । मयन-सयन-लय-सम^८ सुखदाई ॥
 लोक^९ होहिं विलोकत जासु । तेहि कि मोहि सक विषय-विलासु ॥

दो०—सुमिरत रामहिं तजहिं जन, तृनसम विषय-विलासु ।

रामप्रिया जग-जननि सिय, कछु न आचरजु तासु ॥१४१॥

सीय लपनु जेहि विधि सुखु लहही । सोइ रघुनाथ करहिं सोइ कहहीं ॥
 कहाँ पुरातन कथा कहानी । सुनाहिं लपनु सिय अति सुखुमानी ॥
 जब जब राम अवध-सुधि करहीं । तब तब वारि विलोचन भरहीं ॥

१ सुख के समुद्र २ सुन्दरता ३ हजार हैं मुख जिसके (शेषनाग) ४ पोवर का कछुआ ५ स्थिति ६ छोड़दी ७ पति-प्रेम ८ सैकड़ों कामदेव के सदृश ९ दिगपाल ।

सुमिरि मातु पितु परिजन भाई । भरत-सनेहु-सीलु-सेवकाई ॥
 कृपासिंधु प्रभु होहिं दुखारी । धीरजु धरहिं कुसमउ विचारी ॥
 लखि सिय लपनु विकल होइ जाहीं ॥ जिमि पुरुषहिं अनुसर^१ परिछाहीं ॥
 प्रिया-बंधु-गति लखि रघुनंदनु । धीर कृपाल भगत-उर-चंदनु^२ ॥
 लगे कहन कछु कथा पुनीता^३ । सुनि सुखु लहहिं लपनु अरु सीता ॥

दो०—रामु-लषन-सीता-सहित, लोहत परननिकेत ।

जिमि बाखव^४ बस अक्षरपुर, लची-जयंत-समेत ॥१४२॥

जोगवाहिं प्रभु सियलप^५हिं कैसैं । पलक बिलोचनगोलक जैसे ॥
 सेवाहिं लपनु सीय रघुबीरहिं । जिमि अविबेकी^६ पुरुष सरीरहिं ॥
 पहि विधिप्रभु बन बसहिं सुखारी । खग-मृग-सुर-तापस-हितकारी ॥
 कहेउं राम-वन-गवनु लुहावा । सुनहु सुभंज अवध जिमि आवा ॥
 फिरेउ निषादु प्रभुहि पहुँचाई । सचिवसहित रथ देखेसि आई ॥
 मंत्री विकल विलोकि निषादू । कहि न जाइ जस भयेउ विषादू ॥
 'राम राम सिय लपन' पुकारी । परेउ धरानितल व्याकुल भारी ॥
 देखि दखिन दिसि^७ हय हिहिनाहीं । जनु विनु पंख विहँग अकुलार्हीं ॥

दो०—नाहिं तून चराहिं न पिआहिं जलु, मोचहिं लोचनवारि ।

व्याकुल भयेउ निषादु सब, रघु-बर-वाजि निहारि ॥१४३॥

धरि धीरजु तप कहै निषादू । अब सुमंत्र परिहरहु विषादू ॥
 तुम्ह पंडित परमारथज्ञाता^८ । धरहु धीर लखि बिमुख विधाता^९ ॥
 त्रिविध कथा कहि कहि मृदु बानी । रथ बैठारेउं बरवस आनी ॥
 सोकसिथिल रथु सकै न हाँकी । रघु-बर-विरह-पीर उर दाँकी^{१०} ॥
 चरफराहिं मग चलहिं न घोरे । वनमृग^{१०} मनहुँ आनि रथ जोरे ॥

१ अनुसार करती है, २ भक्तों के हृदय को चन्दन रूप ३ पवित्र ४ इन्द्र
 ५ आतनी ६ दक्षिण दिशा ७ ज्ञानतत्त्व का जानने वाला ८ उलटा दैव ९ बड़ी
 भारी १० जङ्गली हिरन

अति आरत सब पूछँहि रानी । उतरु न आव विकल भइ वानी
 सुनै न श्रवत नयन नहिँ सूझा । कहहु कहाँ नृप तेहि तेहि वृष्णा
 दासिन्ह दीख सचिव-विकलाई । कौसल्यागृह गई लेवाई
 जाइ सुमंत्र दीख कस राजा । अमियरहित जनु चंडु विराजा
 आसन - लयन - विभूपन - हीना । परेउ भूमि तल निपट मलीना
 लेइ उलास सोच यहि भाँती । सुरपुर तें जनु खँलेउ^१ जजाती
 लेत सोचभरि छिनु छिनु छाती । जनु जरि पंख परेउ संपाती
 राम राम कह रामसनेही । पुनि कह राम लपन वैदेही
 दो०—देखि सचिव जयजीव कहि, कीन्हेउ दंड प्रनामु ।

सुनत उठेउ व्याकुल नृपति कहु सुमंत्र कहँ रामु ॥१४६॥
 भूप सुमंत्रु लीन्ह उर लाई । वूडत कछु अश्वर जनु पाई
 सहित सनेह निकट वैठारी । पूछत राउ नयन भरि वारी
 रामकुसल कहु सखा सनेही । कहँ रघुनाथ लखनु वैदेही
 आने फेरु कि वनहिँ सिधाए । सुनत सचिवलोचन जल छाए
 सोक-विकल पुनि पूँछु नरेसू । कहु सिय - राम - लपन - संदेसू
 राम - रूप - गुन-सील-सुभाऊ । सुमिरि सुमिरि उर सोचत राऊ
 राज सुनाइ दीन्ह वनवासू । सुनि मन भयेउ न हरप हराँसू
 सो सुत विछुरत गए न प्राना । को पापी वड़ मोहि समाना

१ राजा नहुष का पुत्र राजा ययाति धर्म बल से स्वर्ग प्राप्त कर चुका था इन्द्र ने इसको गद्दी पर बैठा कर सारे सत्कार्य इसी के मुँह से कहलाए लिये । कद से पुन्य क्रम होगया, तब तो इन्द्र ने इनको स्वर्ग से गिरा दिया ।

२ कश्यप के पुत्र अरुण के सम्पाती और जटायु दो पुत्र थे इन्होंने बलामिमा से सूर्य के निकट जाने की प्रतिज्ञा की; जब सूर्य की किरणों से पर जलने लगे तब जटायु तो लौट आया परन्तु सम्पाती न लौटा । उसके पर जल गये और व्याकुल होकर महेन्द्र पर्वत पर गिर गया ।

१ गिरगया २ शोक, दुःख

—सखा रामु-सिय-लषनु जहँ, तहाँ मोहि पहुँचाउ ।

नाहिँ त चाहत चलन अब, प्रान कहाँ सति भाउ ॥१५०॥

पुनि पूँछत मंत्रिहि राऊ । प्रियतम-सुअन-सँदेस सुनाऊ ॥

हे सखा सोइ वेगि उपाऊ । रासु-लषन-सिय नयन देखाऊ ॥

उ धीर धरि कह सृदुवानी । महाराज तुम्ह पंडित ग्यानी ॥

सुधीर धुरंधर देवा । साधुसमाज सदा तुम्ह सेवा ॥

म मरन सब दुख-सुख-भोगा । हानि लाभ, प्रियमिलन वियोगा ॥

त करम बस होहिँ गोसाई । बरबस राति दिवस की नाई ॥

हरषहिँ जड़, दुख बिलखाहीँ । दोउ सम धीर धरहिँ मन माही ॥

ज धरहु विवेक विचारी । छुँडिय सोचु सकल हितकारी ॥

१०—प्रथम बास तमसा भयेउ, दूसर सुरसरि-तीर ।

न्हाइ रहे जलपान करि, सिय समेत दोउ वीर ॥ १५१ ॥

१८ कीन्हि बहुत सेवकाई । सो जामिनि सिँगरौर ३ गवाँई ॥

त प्रात बटछीरु मँगावा । जटासुकुट निज सीस बनावा ॥

सखा तव नाव मँगाई । प्रिया चढ़ाइ चढ़े रघुराई ॥

न वानधनु धरे बनाई । आपु चढ़े प्रभु आयसु पाई ॥

कल बिलोकि मोहि रघुवीरा । बोले मधुर वचन धरि धीरा ॥

त प्रनामु तात सन कहेहु । बार बार पदपंकज गहेहु ॥

रवि पायँ परि विनय बहोरी । तात करिअ जनि चिंता मोरी ॥

मंग मंगल कुसल हमारै । कृपा अनुग्रह पुण्य तुम्हारै ॥

२०—तुम्हरे अनुग्रह तात कानन जात सब सुख पाइहौं ॥

प्रतिपालि आयसु कुसल देखन पायँ पुनि फिरि आइहौं ॥

जननी सकल परितोष परि परि पायँ करि चिन्ता घनी ।

तुलसी करहु सोइ जतन जेहिँ कुसली ३ रहहिँ कोसलधनी ॥

हा जानकी लपन, हा रघुवर । हा पितु-हित-चित चातक जलधर
दो०—राम राम कहि राम कहि, राम राम कहि राम ।

तनु परिहरि रघुवरविरह, राउ गए सुरधाम ॥१५६॥

जिअन-मरन-फलु दसरथ पावा । अंड^१ अनेक अमल जसु बाब
जिअत राम-विधु-बदनु निहारा । रामविरह करि मरनु सर्वाए
सोकदिकल सब रोवाहि रानी । लघु लील बलु तेज बखानी
कराहि विलाप अनेक प्रकारा । पराहि भूमि तल वाराहि बाग
विलापहि विकल दास, अरु दासी । घर घर रुदन कराहि पुरवार्ता
अथएउ^२ आजु भानु-कुल भानू । धरमअवधि गुन-रूप-निधान
गारी सकल कैकेशहि देही । नयनविहीन^३ कीन्ह जग जेही
एहि विधि विलपत रैन^४ विहानी । आप सकल महानुनि ग्यानी
दो०—तव वसिष्ठ मुनि समयसम, कहि अनेक इतिहास ।

सोक निवारेउ सबहि कर, निज विग्यान-प्रकास ॥१५७॥

तेल नाव भरि नृपतन राखा । दूत पोलाइ बहुरि अस भाखा
थावहु वेगि भरत पहि जाहू । नृप-सुधि कतहुँ कहहुँ जानि काहू
पतनेइ कहँउ भरत सन जाहू । गुर पोलाइ पठयेउ दोउ भाई
सुनि सुनि-आयसु थावन^५ थाप । चले वेगि सरवाज लजाए
अनरथु अवध अरंभे ६५८ तें । कुलसुख टाँहि पुग्ते कहुँ तद
देखहि नानि गवालक लपना । जागि कराहि कहुँ^६ कोटि कलपना
पिप्र जेवाँइ देहि दिन दाना । शिव-अभिषेक^७ कराहि विधि नाना
गाँगाहि हृदय रहेस मनाई । कुसल मालु पितु परिजन भाई
दो०—एहि विधि सोचत भरत मग, थावन पहुँचे आइ ।

गुर-अनुलासन^८ थवन सुनि, चले गनेसु मनाइ ॥ १५८ ॥

^१ अजाएउ २ नेत्री से चहित, अंवा ३ रात्रि ४ दूत ५ अशुभ ६ वहम ७ महा
की पूजा ८ सुद की आज्ञा ।

‡ पिना के चित्तरूप परीहा के लिये बादल ।

। समीर-वेग^१ हय हाँके । नाँधत सरित सैल वन बाँके ॥
 य सोचु बड़ कछु न सोहाई । अस जानहिं जिय जाउँ उड़ाई ॥
 । निमेष वरपसम जाई । एहि विधि भरत नगर नियराई ॥
 ७—होहिं नगर पैठारा । रटाहिं कुभाँति कुखेत^२ करारा^३ ॥
 । सियार बोलाहिं प्रतिकूला । सुनि सुनि होइ भरतमन सूला ॥
 हत सर सरिता वन वागा । नगर बिसेपि भयावनु लागी ॥
 । मृग हय गय जाहिं न जोए । राम-वियोग-कुरोगं विगोए^४ ॥
 । र-नारि-नर निपट दुखारी । मनहुँ सबन्हि सब संपति हारी ॥

दो०—पुरजन मिलाहिं न कहहिं कछु गवाहिं^५ जोहारहिं जाहिं ।

भरत कुसल पूँछि न सकहिं भय विप्रद मन माहिं ॥१५६॥

द-वाट^६ नाहिं जाहिं निहारी । जनु पुर दहँ^७ दिसि लागि दवारी^८ ॥
 । वत सुत सुनि कैरुयनंदिनि । हरषी रधि-कुल-जलरुह-बंदिनि ॥
 । जि श्रारती भुदित उठि धाई । द्वाराहिं भेंटि भवन लेइ आई ॥
 । रत दुखित परिवार निहारा । मानहुँ तुहिन^९ वनजबनु^{१०} मारा ॥
 । कहै हरषित एहि भाँती । मनहुँ भुदित दव लाइ फिराती ॥
 । तहि ससोच देखि मनु भारे । पूँछति नैहर कुसल हमारे ॥
 । कल कुसल कहि भरत सुनाई । पूँछी निज-कुल-कुसल भलाई ॥
 । हु कहँ तात कहाँ सब माता । कहँ सिय रामु लपन प्रिय आता ॥

दो०—सुनि सुतदत्त लनेहमय कपटनर भरि नयन ।

भरत श्रवन मन-सूल-सम पापिनि बोली वयन ॥१६०॥

। त पात मैं सकल सबारी । भइ मंथरा सहाय विचारी ॥
 । छुक काज विधि पाँच विगारेड । भूपति सुर-पति-पुर पशु धारेड ॥

१ हवा के सदृश शीघ्र २ घुरे क्षेत्र में ३ काला कौआ ४ पीड़ित ५ चुपचाप चले जाते हैं ६ रास्ता ७ दशों दिशा ८ प्रणि ९ पाता १० कगलों-का वन ।

सुनत भरत भयविवल विपादा । जनु सहमेउ^१ करि केहरिनादा
तात तात हा तात पुकारी । परे भूमितल व्याकुल भारी
चलत न देखन पावेउं तोही । तात न रामहि सौंपेहु मोही
वहुरि धीर धरि उठे सँभारी । कहु पितुमरन-हेतु महतारी
सुनि सुतवचन कहित कैकेई । मरमु पाँछि जनु माहुर^२ देई
आदिहु तँ सब आपनि करनी । कुटिल कठोर मुदितमन बरनी

दो०—भरतहि विसरेउ^३ पितुमरन, सुनत राम-वन-गौनु ।

हेतु अपनपउ^४ जानि जिअ, थकित रहे धरि मौनु^५ ॥१५॥

विकल विलोकि सुतहि समुभावत । मनहुँ जरे पर लोनु लगावति
तात राउ नहिँ सोचइ जोगू । विढ़ई सुकृत जसु कीन्हेउ भोगू
जीवत सकल जनम-फल पाए । अंत अमर-पति सदन^६ सिधाए
अस अनुमानि सोचु परिहरहू । सहित समाज राज पुर करहू ।
सुनि सुठि सहमेउ राजकुमारू । पाकें छुतु^७ जनु लाग अंगारू ।
धीरजु धरि भरि लेहि उसासा । पापिनि सबहिँ भाँति कुल नासा ।
जाँ पै कुरचि रही अति तोही । जनमत काहे न मारेसि मोही ।
पेड़ काटि तँ पालउ सीँचा । मीनजिअन निति वारि उलीचा ।

दो०—हंसवंसु^८ दशरथु जनकु राम लखन से भाइ ।

जननी तू जननी भई विधि सन कछु न बसाई ॥१६॥

जब तँ कुमति कुमत जिअ ठयेऊ । खंड खंड होइ हृदय न गयेऊ ।
वर माँगत मन भइ नहिँ पौरा । गरि न जीह, मुँह परेउ न कारा ॥
भूप प्रतीति^९ तोरि किमि कीन्ही । मरनकाल विधि मति हरि लीन्ही ॥
विधिहु न नारि हृदयगति जानी । सकल-कपट-अव-अवगुन-खानी ॥

१ डर गया २ विष ३ भूल गये ४ अपने आपको ५ शान्त ६ स्वर्ग ७ घाव
८ सूर्य वंश ९ विश्वास ।

रत्न सुलील धरमरत राऊ । सो किमि जानै तीयसुभाऊ ॥
 ।स को जीव जंतु जग माहीं । जेहि रघुनाथ प्रान-प्रिय नाहीं ॥
 अति ग्रहित^१ राम तेउ तोही । को तू अहसि^२ सत्य कहु सोही ॥
 । हासि सो हासि मुँह मसि लाई । आँखि ओट उठि बैठाहि जाई ॥
 दो०—राम-बिरोधी-हृदय^३ तैं प्रगट कीन्ह बिधि मोहि ।

मो समान को पातकी^४ बादि कहौ कछु तोहि ॥१६३॥
 मुनि सनुघुन^५ मातुकुटिलाई । जराहिं गात रिस, कछु न बसाई ॥
 तहि अवसर कुवरी तहँ आई । बसन बिभूषन विविध बनाई ॥
 तखि रिस अरेउ लषन-लघु-भाई । बरत अनल^६ घृतआहुति पाई ॥
 ।मगि^७ लात ताकि कूबर मारा । परि मुँह भरि महि करत पुकारा ॥
 कूबर दूटेउ, फूट कपारु । दलित दसन^८ मुख रुधिरप्रचारु ॥
 प्राह दइअ मैं काह नसावा । करत नीक फलु अनइस^९ पावा ॥
 मुनि रिपुहन लखि नख सिख खोटी । लगे घसीटन धरि धरि भौंटी ॥
 भरत दयानिधि दीन्ह छुड़ाई । कौसल्या पाहिं गे दोउ जाई ॥
 दो०—मलिन बसन विवरन विकल, कस सरीर दुखभारु ।

कनक-कल्प-वर-वेलि-वन^{१०}, मानहुँ हनी तुषारु^{११} ॥१६४॥
 भरतहि देखि मातु उठि धाई । मुरुछित अवनि परी भई आई^{१२} ॥
 देखत भरतु विकल भए भारी । परे चरन तनदसा विसारी ॥
 मातु तात कहँ देहि देखाई । कहँ सिय रामुलषनु दोउ भाई ॥
 करकइ कत जनमी जग माँझा । जौं जनमित भइ काहे न वाँझा ॥
 कुलकलंकु जेहि जनमेउ सोही । अपजसभाजन प्रिय-जन-द्रोही ॥
 को त्रिभुवन मोहि सरिस अभागी । गति असि तोरि मातु जेहि लागी ॥

१ अनहित २ है ३ राम का है जो विरोधी हृदय (बहु०) ४ पापी ५ शत्रुघ्न
 ६ अग्नि ७ जोश में आकर या उछल कर मटूटे हुये दांतों से ८ मुँह से
 सूत बहने लगा १० बुरा ११ सुवर्ण की सुन्दर कल्पलताओं को १२ पाखा
 १३ मूर्छा ।

पितु सुरपुर, वन रघु-वर-केतू । मैं केवल सब अनरथहेतू
धिग मोहि मयेउँ वेनु-वन-आगी । दुसह-दाह-दुख-दूपन-भागी
दो०—मातु भरत के बचन मृदु, सुनि पुनि उठी सँभारि ।

लिये उठाइ लगाइ उर, लोचन मोचति वारि ॥१६५॥

सरल सुभाय भाय हिय लाए । अतिहित मनहुँ राम फिरि आए
भैटेउ बहुरि लपन-लघु-भाई । सोकु सनेहु न हृदय समाई
देखि सुभाउ कहव सब कोई । राममातु अस काहे न होई
माता भरतु गोद वैठारे । आँसु पौछि मृदुबचन उचारे
अजहुँ थच्छु, बलि, धीरज धरहू । कुसमउ समुंभि सोक परिहरहू
जनि मानहु हिय हानि गलानी । काल-करम-गति अघटित जानी
काहुहि दोस देहु जनि ताता । भा मोहि सब विधि बाम विधाता
जो पतेहु दुख मोहि जिआवा । अजहुँ को जाने का तेहि भाषा
दो०—पितु आयसु भूपन बसन, तात तजे रघुवीर ।

विसमउ हरष न हृदय कछु, पहिरे बलकल नीर ॥१६६॥

मुखप्रसन्न मन रंग न रोषू । सब कर सब विधि करि परितोषू ।
चले विपिन सुनि सिय सँग लागी । रहै न राम-चरन-अनुरागी ॥
सुनतहि लपनु चले उठि साथी । रहहि न जतन किए रघुनाथी ॥
तब रघुपति सबही सिरु नाई । चले संग सिय अरु लघु भाई ॥
रामु लपनु सिय वनहिँ सिधाए । गइउँ न संग न प्रान पठाए ॥
पहु सवु भा इन्ह आँखिन्ह आगे । तउ न तजा तनु जीव अभागे ॥
मोहि न लाज निज नेहु निहारी । रामसरिस सुत मैं महतारी ॥
जिअइ मरइ भल भूपति जाना । मोर हृदय सत-कुलिस-समाना ॥
दो०—कौसल्या के बचन सुनि, भरतसहित रनवासु ।

व्याकुल विलपत राजगृह^१, मानहुँ सोकनिवासु ॥१६७॥

१ अटल, जो मिट न सके २ वन ३ विलाप करता है ४ राज महल में रहने वाले प्राणी मात्र ।

बिलेपाहि विकल भरत दोउ भाई । कौसल्या लिये हृदय लगाई ॥
 भाँति अनक भरत समुझाय । कहि बिबेकमय बचन सुनाए ॥
 भरतहु मातु सकल समुझाई । कहि पुरान श्रुति कथा सुहाई ॥
 छलबिहीन सुचि सरल सुबानी । बोले भरत जोरि जुग पानी ॥
 जे अथ मातु-पिता-सुत मारें । षाड्गोठ^१ महि-सुर-पुर जारें ॥
 जे अध तिय-बालक-बध^२ कीन्हे । मीत महीपति माहुर^३ दीन्हे ॥
 जे पातक उपपातक अहहीं । करम-बचन-मन-भव^४ कवि कहहीं ॥
 ते पातक मोहि हेहु बिधाता । जौ एहु होइ मोर मत माता ॥

दो०—जे परिहरि हरि-हर-चरन, भजहि भूतगन घोर ।

तेहि कै गति मोहि देउ, विधिं जौ जननी मत मोर ॥ १६८ ॥

बेचहि बेहु धरम दुहि लेहीं* । पिखुन^५ पराय पाप कहि देहीं ॥
 कपटी कुटिल कलहप्रिय क्रोधी । वेदविदूषक विस्वविरोधी ॥
 लोभी लंपट^६ लोलुपचारा^७ । जे ताकहि परधनु परदारा ॥
 पावौं मैं तिन्ह के गति धोरा । जौ जननी एहु संमत मोरा ।
 जे नहि साधुसंग अजुरागे । परमारथपथ विमुख अभागे ॥
 जे न भजहि हरिनरतनु पाई । जिन्हहि न हरि-हर-सुजसु सुहाई ।
 तजि श्रुतिपंथ वामपथ चलहीं । बंचक बिरंचि बेषु^८ जगु छलहीं ।
 तिन्ह कै गति मोहि संकर देऊ । जननी जौ एहु जानौं भेऊ ।

दो०—मातु भरत के बचन सुनि, साँचे सरल सुभाय ।

कहत रामप्रिय तात तुम्ह, सदा बचन मनकाय^९ ॥ १६९ ॥

राम प्राण तैं ज्ञान तुम्हारे । तुम्ह रघुपतिहि प्राण तैं प्यारे

१ गो-शाला २ स्त्री और बालकों का बध ३ विष ४ मनसे पैदा हुये ५ छति
 कपटी ७ कर्म, मन, वाणी से भूटे आचरण वाले ८ कपट का भेष बनाकर ९ राम
 के धनार्थ कुपात्र को वेद पढ़ावे यह वेचना और 'गाय अथवा पुत्री को बच
 बह धर्म का दुहना है ।

छंद—सानी सरल रस मातुवानी सुनि भरतु व्याकुल भय ।
 लोचनसरीरुह श्रवत सींचत विरह उर अंकुर नय ॥
 सो दसा देखत समय तेहि विसरी सबहि सुधि देह की ।
 तुलसी सराहत सकल सादर सीव सहज सनेह की ॥

सो०—भरत कमलकर जोरि, धीर-धुरंधर-धीर धरि ॥

वचनु अमिअ जनु वोरि देत उचित उत्तर सबहि ॥१७७॥

मोहि उपदेशु दीन्ह गुर नीका । प्रजा सचिव संमत सबही का
 मातु उचित धरि आयसु दीन्हा । अवसि सीस धरि चाहौं कीन्हा
 गुर-पितु-मातु-स्वामि-हित-वानी । सुनि मन मुदित करिअ भलि जा
 उचित कि अनुचित किए विचारू । धरमु जाइ सिर पातक भा
 तुम्ह तौ देउ सरल सिख सोई । जो आचरत मोर भल होई
 जद्यपि एह समुझत हौं नीके । तदपि होत परितोषु न जी के
 अब तुम्ह विनय मोरि सुनि लेहू । मोहि अनुहरत सिखावनु देह
 उत्तर देउ छुमव अपराधू । दुखित-दोष-गुन गनहि न साध

दो०—पितु सुरपुर, सिय राम वन, करन कहहु मोहि राजु ।

एहि ते जानहु मोर हित, कै आपन बड़ काजु ॥१७८॥

हित हमार सिय-पति-सेवकाई । सो हरि लीन्हि मातु कुटिलाई
 मैं अनुमानि दीख मन माहीं । आन उपाय मोर हित नाहीं
 सोकसमाजु राजु कैहि लेखे । लपन-राम-सिय-पद विनु देखे
 वादि वसन विनु भूपन-भारू । वादि विरति विनु ब्रह्मविचार
 सरज सररीर वादि बहु भोगा । विनु हरिभगति जाय जप जोग
 जाय जीव विनु देह सुहाई । वादि मोर सनु विनु स्पुराई
 जाउँ राम पहि आयसु देहू । एअहि आँक मोर हित एहू

मोहि नृपकरि भल आपन चहहू । सोउ सनेह जेइता^१ बस कहहू ॥

दो०—कैकेइसुअन कुटिल मति, रामविमुख गतलाज ।

तुम्ह चाहत सुखु मोहबस, मोहि से अधसु के राज ॥१७६॥

हौं साँच सब सुनि पतियाहू । चाहिअ धरमसील नरनाहू ॥

मोहि राजु हठि देखहू जबहीं । रसा^२ रसातल^३ जाइहि तबहीं ॥

मोहि समान को पापनिवासू । जेहि लागि सीयराम बनवासू ॥

पय राम कहूँ कानन दीन्हा । बिलुरत गमनु अमरपुर^४ कीन्हा ॥

मैं सठ सब अनरथ कर हेतू । बैठ वात सब सुनों सचेतू ॥

बिनु रघुवीर विलोकिय बासू । रहें प्रान सहि जग उपहासू^५ ॥

राम पुनीत विषयरस रूखे । लोलप भूमिभोग के भूखे ॥

कहँ लागि कहौं हृदय-कठिनाई । निदरि कुलिसु जेहि लही बड़ाई ॥

दो०—कारन तें कारजु कठिन, होइ दोस नहि मोर ।

कुलिस अस्थि^६ तें उपल तें लोह कराल कठोर ॥१८०॥

कैकेईभव तनु अनुरागे । पाँवर^७ प्रान अघाइ अभागे ॥

जौं प्रियबिरह^८ प्रान प्रिय लागे । देखव सुनव बहुत अब आगे ॥

लपन-राम-सिय कहूँ बनू दीन्हा । पठै अमरपुर पतिहित कीन्हा ॥

लीन्ह विधवपन, अपजसु आपू । दीन्हेउ प्रजहिं सोकु खंतापू^९ ॥

मोहि दीन्ह सुखु सुजसु सुराजू । कीन्ह कैकई सब कर काजू ॥

पहि तें मोर काह अब नीका । तेहि पर देन कहहू तुरइ टीका^{१०} ॥

कैकइजठर^{११} जनमि जग माहीं । एह मोहि कहँ कछु अनुचित नाहीं ॥

मोरि वात सब विधिहि बनाई । प्रजा पाँच कत करहु सहाई ॥

१ मूर्खता से २ पृथ्वी ३ पाताल ४ अमरावती ५ हँसी ।

* राम से है विमुख, राम विमुख । गत है लाज जिसकी (वह०), निर्लज्ज

६ हड्डियां ७ नीच ८ प्यारे की जुदाई ९ दुःख १० राज्य ११ कैकेई का पेट ।

दो०—ग्रहग्रहीत^१ पुनि वातवस^२, तेहि पुनि बीछी मार^३ ।

तेहि पिआइअ बारुनी^४, कहहु कवन उपचार ॥१८१॥

कैकईसुअन-जोग जग जोई । चतुर विरंचि^५ दीन्ह मोहि सोई
दसरथतनय राम-लघु-भाई । दीन्ह मोहि विधि बादि बड़ाई
तुम्ह सबु कहहु कड़ावने टाँका^६ । रायरजायसु सब कहँ नीका
उतरु देउँ केहि विधि केहि केही । कहहु सुखेन^७ जगारुचि जेही
मोहि कुमातु-समेत धिहाई । कहहु कहिहि के कीन्हि भलाई
मो विनु को सचराचर माहीं । जेहि सियरामु प्रानप्रिय नाहीं
परम हानि सबु कहँ बड़ लाह । अदिन^८ मोर नाहिँ दुपन काह
संसय^९ सील प्रेमयस अहह । सबुइ उचित-सबु जो कछु कहह

दो०—राममातु सुठि सरलचित मो पर प्रेमु विसेखि ।

कहै सुभाय सनेहवस, मोरि दीनता देखि ॥१८२॥

गुर विवेकसागर जग जाना । जिन्हहिँ बिस्व कर-बदर-समाना^{१०}
मो कहँ तिलकसाज सज सोऊाभय विधि-विमुख विमुख^{११} । सब को
परिहरि^{१२} रामुसीय जग माहीं । कोउ न कहिहि मोर मत नाहीं
सो मैं सुनव सहव सुख मानी । अंतहु कींच तहाँ जहँ पानी
डर न मोहि जग कहिहि कि पोचू । परलोकहु कर नाहिँन सोचू
एकै उर वस दुसह दबारी^{१३} । मोहि लागि भे सियराम दुखारी
जीवनलाहु लपन भल पावा । सबु तजि रामचरनु मन लावा
मोर जनम रघुवरधन लागी । भूठ काह पछिताउँ अभागी

दो०—आपन दारुन दीनता^{१४}, कहौँ सबहिँ सिर नाइ ।

देखे विनु रघु-नाथ-पद, जिय कै जरनि न जाइ ॥१८३॥

१ ग्रहों से ग्रसित ३ सन्निपात ३ डंक मारदेय ४ शराव ५ ब्रह्मा ६ राव
देना ७ सुख से ८ बुरे दिन ९ सदेह १० हथेली के बेर के समान ११ क
१२ छोड़ कर १३ असहनीय दुःखाग्नि १४ बड़ी गरीबी ।

मुनिहिं वंदि भरतहिं सिरु नाई । चले सकल^१ घर विदा का
धन्य-भरतु जीवनु जग माहीं । सीलु सनेहु सराहत जा
कहाहिं परसपर भा बड़ काजू । सकल चलै कर^२ साजहिं सा
जेहिं राखहिं रहु घर रखवारी । सो जानै जनु गरदन मारी
कोउ कह रहन कहिअ नाहिं काहू । को न चहै जग जीवन-

दो०—जरउ सो संपति-सदन सुखु सुहृद मातु पितु भाइ ।
सनमुख होत जो रामपद करै न सहस सहाइ^३ ॥१८

घर घर साजहिं वाहन नाना । हरषु हृदय परभात^४ पयाव
भरत जाइ कर कीन विचारू । नगरु बाजि गज भवन भंडा
संपति सब रघुपाति कै आही । जाँ विनु जतन चलाँ तजि ता
तो परिनाम न मोरि भलाई । पापसिरोमनि साईं^५ दुहाई
करै स्वामिहित सेवक सोई । दूखन कोटि देइ किन को
अस विचारि सुचि सेवक बोले । जे सपनेहु निज घरमु न डो
कहि सब भरसु धरसु सब भाखा । जो जेहि लायक सो तेहि रा
करि सबु जतनु राखि रखवारे । राममातु पहिं भरत सिधा

दो०—आरति जननी जानि सब, भरत सनेह सुजान ॥

कहेउ बनावच पालकी, सजन^६ सुखासन^७ जान ॥१८०

चक्रचक्रि^{१०} जिमि पुर-नर-नारी । चलत प्रात उर आरत भारी
जागत लथ निसि भयेउ विहाना^{११} । भरत बोलाप सचिव सुज
कहेउ लेहु सब तिलक समाजू । बनाहिं देव मुनि रामहिं रा
वेगि चलहु सुनि सचिव जोहारे । तुरत तुरग रथ नाग सँवा

१ सब लोग २ चलने का ३ जान मारी ४ सहायक ५ प्रातः
६ पापियों में सरदार ७ स्वामी की सौगंध ८ तैयार करने को ९ सुख + का
१० चक्रवाक ११-प्रातःकाल ।

ता' अरु अग्निसमाजः । रथ चढ़ि चले प्रथम मुनिपाजः ॥
 द्व' सब वाहन' नाना । चल सकल तप-तज-निधाना ॥
 मोग सब सजि सजि जाना । चित्रकूट कह कोन्ह पयाना ॥
 हा सुभग' न जाहि वखानी । चढ़ि चढ़ि चलत भई सब रानी ॥

साँपि नगर सुचि सेवकनि, सादर सबहि चलाई ॥
 सुमिरि राम-सिय-चरन तव चले भरतु दोउ भाई ॥१८८॥

दरस-धस सब नरनारी । जनु करि करिनि चले तकि बारी ॥
 सिय रामु समुक्ति मन माहीं । सानुज भरत पयादेहि जाहीं ॥

सनेह लोग अनुरागे । उत्तरी चल हय गाय रथ त्यागे ॥
 समीप राखि निज डाली । राममातु मृदुबानी बोली ॥

चलत चलिहि सब लोग । हाइहि प्रिय परिवार दुखारी ॥
 बड़ह रथ बलि महतारी । सकल सोक क्लम नाहि मग जागू ॥

चलत चलिहि सब लोग । हाइहि प्रिय परिवार दुखारी ॥
 प्रथम दिवस करि वास । दूसर गोमतितीर निवास ॥

करत रामहित नेम ब्रत, परिहरि भुषन भाग ॥१८९॥
 पय अहार फल असन । एक, निसि भोजन एक लोग ।

वीर धसि चले विधाने । शृगवेरपुर सब नियराने ॥
 बार सब सुने निषादा । हृदय विचार करे सबिषादा ॥

कबतु भरतु बन जाहीं । है कछु कपट भाउ मन माहीं ॥
 विअ न होत कुटिलाई । तौ कत लीन्हि संग कटकई ॥
 सानुज रामहि मारी । करौ अकटक । राजु सुखारी ॥

मातु पिठु
 सगा
 परमात
 गज दत्त
 चलो
 साँ
 वेर वि
 निज धनु
 सोर
 पहि भर
 सुजात
 जाव
 उर आत
 सकि
 राम
 य ना

भरत न राजनीति उर आनी । तव कलंकु^१ अब जीवनुहाणी
सकल सुरासुर^२ बुरहिं जुभारा । रामहिं समर न जीतनिहा
का आचरजु भरतु अस करहीं । नहिं विषवेलि अभियफल फरा

दो०—अस बिचारिं गुह ग्याति सन, कहेउ सजग सब होहु ।
हथवाँसहु^३ बोरहु तरनि^४, कीजिअ घाटारोहु^५ ॥१६०

होहु सँजोइल^६ रोकहु घाटा । ठाठहु सकल मरै के ठाटा
सनमुख लोह भरत सन लेऊँ । जिअत न सुरसरि उतरन दे
समर मरन पुनि सुर-सरि-तीरा । रामकाजु छनभंगु^७ सरीर
भरत भाइ नृप मैं जन नीचू । बड़े भाग असि पाइअ मीचू^८
स्वामिकाज करिहहुँ रन रारी^९ । जस धवलिहउ भुवन दस जा
तजौं प्रान रघु-नाथ-निहोरे^{१०} । दुहँ हाथ मुद मोदक^{११} मे
साधुसमाज न जा कर लेखा । राम भगत महँ जासु न रेख
जायँ जिअत जग सो गहि भाऊ । जननी-जौवन-बिटप कुठारु^{१२}

दो०—विगतविषाद निषादपति, सबहि वढ़ाइ उछाहु ।

सुमिरि राम मँगेउ तुरत, तरकस धनुष सनाहु ॥१६१

वेगहु भाइहु सजहु सँजोऊ । सुनि रजाइ कदराइ न कोइ
भलेहि नाथ सब कहहिं सहरपा । एकहिं एक बढाँव कर
चले निषाद जोहारि जोहारी । सूर सकल रन रूचै^{१३} रा
सुमिरि राम-घद-पंकज-पनही । भाथी बाँधि चढ़ाइन्हि धन
अंगरी^{१४} पहिरि कूँडि^{१५} सिर धरहीं । फरसा दाँस सेल-सम^{१६}
एक कुसल अति ओड़न खाँड़े । छुदहिं गगन मनहुँ छिति बाँ

१ बुराई २ मृत्यु ३ सुर+असुर ४ पतवार ५ नाव ६ घाट रोह

७ साक्यान ८ सामित्री ९ क्षण में जो नष्ट होजाय (वरुण) १० मृत्यु ११

१२ रामके लिये १३ लट्ठ १४ माता के यौवन रूप रच को कृच्छ्रादी ।

१५ अच्छा लगता था १६ कवच १७ जोहे को टोपी १८ सुधारना ।

निज निज साजु समाजु बनाई । गुहराउताहिँ जोहारे जाई ॥
देखि सुभट सब लायक जाने । लै, लै नाम सकल सनमाने ॥

दो०—भाइहु लावहु धौख जानि, आजु काज बड़ मोहि ।

सुनि सरोष बोले सुभट, वीर अधीरु न होहि ॥१६२॥

मप्रताप नाथ बल तोरै । करहिँ कटकु विनु भटविनु घोरै ॥
गीवत पाउ न पाछे धरहीँ । रुंड-मुंड-मय मेदिनि^१ करहीँ ॥
खि निषादनाथ भल टोलू^२ । कहेउ बजाउ जुझाऊ ढोलू^३ ॥
तना कहत छीक भई बापै । कहेउ सगुनिअन्ह खेत^४ सुहापै ॥
दू एक कह सगुन विचारी । भरतहिँ मिलिअ न होइहि रारी ॥
महिँ भरत मनावन जाहीँ । सगुन कहै अस विग्रहु नाहीँ ॥
सुनि गुह कहै नीक कह बूढ़ा । सहसा^५ करि पछिताहिँ बिमूढ़ा^६ ॥
भरत-सुभाव सील विनु बूझे । बड़ि हितहानि जानि बिन जूझे ॥

दो०—गहहु घाट भट सिमिट सब, लेउँ भरम मिलि जाइ ॥

बूझि मित्र अरि मध्यगति, तब तस करिहौ आय ॥१६३॥

खव सनेहु सुभाय सुहाए । वैर प्रांति नहिँ दुरै दुराए ॥
अस कहिँ भेट संजोवन लागे । कंद मूल फल खग मृग माँगे ॥
मान पीन^७ पाठीन^८ पुराने । भरि भरि भार कहारन्ह आने ॥
मिलन साजु सजि मिलन सिधाए । मंगलमूल सगुन सुभ पाए ॥
देखि दूरि ते कहिँ निज नामू । कान्ह मुनीसहिँ दंडप्रनामू ॥
जानि रामप्रिय दीन्हि असीला । भरतहिँ कहेउ बुझाइ मुनीसा ॥
रामसखा^९ सुनि स्यंदनु त्यागा । चले उतरि उमगत^{१०} अनुरागा ॥
गाउँ जाति गुह नाउँ सुनाई । कान्ह जोहारु माथ महि लाई ॥

१ धरती २ जमाव ३ लड़ाई के बाजे ४ सगुन ५ शीघ्रता ६ मूर्ख ७ मोदी
८ मञ्जरी ९ राम का सखा गुह १० (उमंग) लहर में आकर ।

दो०—करत दंडवत देखि तेहि, भरत लीन्ह उर लाइ ।

मन^३ लखन सन भेंट भइ प्रेम न हृदय समाइ ॥ १६४ ॥

भेंटत भरत ताहि अति प्रीती । लोग सिहाहिं प्रेम कै रीती
धन्य धन्य धुनि मंगलमूला । सुर सराहिं तेहि वरसाहिं फूला
लोक वेद सय भाँतिहि नीचा । जानु छाँह छुर लेइअ सीचा
तेहि भरि अंक राम-लघु भ्राता । मिलत पुलकपरिपूरित गाता
राम राम कहि जे जमुदाहीं । तिन्हहिं न पापपुंज समुदाहीं
एहि तौ राम लाइ उर लीन्हा । कुल समेत जगु पावन कीन्हा
करमनास-जल^१ सुरसरि परई । तेहि को कहहु सीस नहिं धरई
उलटा नाम जपत जग जाना । *यालमीके भए ब्रह्म समाना
दो० स्वपच खवर खस जमन जइ, पाँवर कोल किरात ।

राम कहत पाँवर परम, होत भुवन विख्यात ॥ १६५ ॥

नहिं अचिरिजु जुग जुग चलि आई । केहिन दीन्हि रघुवीर बड़ाई
रामनाम महिमा, सुर कहहीं । सुनि सुनि अवध लोगुसु लहहीं
रामसखाहिं मिलि भरत सप्रेमा । पूंछी कुसल समंगल पेमा
देखि भरत कर सीलु सनेहू । भा विषाद तेहि समय विदेह
सकुच सनेहू मोहु मन यादा । भरतीहिं चितवत एकटक ठाढ़ा
धरि धीरजु पद बंदि वहोरी । विनय सप्रेम करत कर जोरी
कुसलमूल पदपंकज पेखी । मैं तिहुँ काल कुसल निज लेखी
अब प्रभु परम अनुग्रह तोरै । सहित कोटि कुल मंगल मोरै ।

दो०—समुझि मोरि करतूत कुल, प्रभु महिमा जिअ जोइ ॥

जो न भजइ रघुवीर-पद, जग विधि वंचित^२ सोइ ॥ १६६

१ कर्म नाश का जल सब पुण्यों को नष्ट कर देता है २ विषादा ने व्यर्थ पैदा किए

* यालकपन में वाल्मीकि वहेलियों के साथ रहकर वैभेही हो गये थे । एक समय सप्तश्रुषियों को लूटने दीड़े तब उन्होंने इनको समझाकर ज्ञान दिया और उनके सत्संग ही मरि विद्वान और भक्त ईश्वर हो गये ।

पट्टी कायर कुमति कुजाती । लोक वेद बाहेर^१ सब भाँती ॥
 तम कीन्ह आपन जबही तें । भयेउँ भुवन-भूषन^२ तवही तें ॥
 खि प्राति सुनि विनय सुहाई । मिलेउ चहोरि भरत-लघु-भाई ॥
 पहि निषाद निज नाम सुबानी । सादर सकल जोहारी रानी ।
 जानि लपनसम देहि असीसा । जिअहु सुखी सय लाख बरीसा^३ ॥
 निरखि निषादु नगर-नर-नारी । भय सुखी जनु लपनु निहारी ।
 कहहि लहेउ पहि जीवन-लाहू । भेंटउ रामभद्र भरि बाहू ॥
 मुनि निषादु निज-भाग बड़ाई । प्रमुदित मन लै चलेउ लेवाई ॥

दो०—सनकारे^४ सेवक सकल चले स्वामि-रुख पाइ ।

घर तरु तर सर^५ बाग घन बास बनाएन्हि जाइ ॥१६७॥

मृगवेरपुर भरत दीख जब । भे सनेह सच अंग लिथिल तव ॥
 सोहत दिप निषादहि लागू^६ । जनु धनु धरे विनयअनुरागू ॥
 पहि विधि भरत सेन सब संगी । दीख जाइ जगपावनि गंगा ॥
 रामघाट फहँ कीन्ह प्रनामू । भा मनु मगनु मिले जनु रामू ॥
 करहि प्रनाम नगर-नर नारी । मुदित ब्रह्ममय ब्रारि निहारी ॥
 करि मज्जनु माँगहि कर जोरी । रामचंद्र-पद-प्रीति न थोरी ॥
 भरत कहेउ सुरसरि तव रेनू । सकल-सुखद-सेवक-सुर-धेनू ॥
 जोरि पानि हर माँगहु पहू । सीय - राम - पद-सहज-सनेहू ॥

दो०—पहि विधि मज्जनु भरतु करि गुर अनुसासन^७ पाइ ।

मानु नहानी जानि सब डेरा चले लवाइ ॥१६८॥

१ न तो लोक ही में हमारी कुछ गणना है न वेद में ही हमारी कुछ पहुँच है
 २ प्रतिष्ठित ३ वर्ष ४ सैनिकारे ५ सर में बाँत बनाया इसके दो अर्थ ही सकते हैं
 ६ तब तो लक्षणा से सरके किनारे पर बास, अथवा वाच्य में सर में पड़ी हुई नाव
 पर बास बनाया । ६ साथ लिये हुए ७ आज्ञा * तद्गुण अलकार ।

नहिं प्रसन्नमुख मानस^१ खेदा । सखि संदेह होइ एहि भेदा ।
 तासु तरक^२ तियगल मनमानी । कहहिं सकल तोहि-सम न सया ।
 तेहि सराहि चोनी फुरि पूजा^३ । नोली मधुर दचन तिय दूजा^४ ।
 कहिं सप्रेम सब कथा-प्रसंगू । जेहि विधि राम-राज-रस-भंगू ।
 भरतहि बहुरि सराहन लागी । लील सनेह सुभाय सुभागी ।

दो०—चलत पयादे खात फल, पिता दीन्ह तजि राजु ।

जात प्रनावन रघुवरहिं, भरतसारिल को आजु ॥ २२३ ॥

भायप भगति भरत आचरनू । कहत चुनत दुख-दूपन-हरनू ।
 जो किछु कहव थोर सखि सोई । रामबंधु अस काहे न होई ।
 हम सब खानुज भरतहि देखे । भइन्ह थन्य जुवतीजन तेखे ।
 सुनि गुन देखि दला पछितार्ही । कैकई-जननि-जोगु सुतु नार्ही ।
 कोउ कह दूपगु रागिहि नाहिन । विधि सब कीन्ह हमहिं जो दाहिन ।
 कहँ हम लोक-वेद-पिधि हीनी । लघुतिय कुल-करतति मलीनी ।
 बसहिं कुदेरा कुगावँ कुबामा । फहँ येह दरसु पुन्यपरिनामा ।
 अस अनहु अचिरजु प्रति ग्रामा । जनु मरुभूमि^५ कलपतरु जामा ।

दो०—भरत दरसु देखत खुलेउ, सग-लोगन्ह कर भासु ।

जनु सिंहत^६ नासिन्ह भवेउ, विधिवल सुतस प्रयासु ॥ २२४ ॥

निज गुन-सहित राम-गुन-साथा । सुकत जाहिं सुमिरत रघुनाथा ।
 तीरथ सुनि आश्रम सुरधामा । निराखि निगजजहिं करहिं प्रनामा ।
 मिलहिं किरात कोल बनवासी । देवानस^७ वदु^८ जती उदासी ।
 करि प्रनासु पूछहिं जेहि तेही । केहि वन लपनु एग येदही ।
 ते प्रसु समाचार सब कहहीं । भरतहिं देखि जनमफलु लहहीं ।

१ मानसिक २ (तर्क) ३ सत्य हुई ४ विगाइ ५ कृपालु ६, मारवाड़ मरुस्थल
 ७ लका ८ बानप्रस्थ ९ ब्रह्मचारी ।

जन कहहिं "कुसल" हम देखे"। ते प्रिय राम-रापन-सम लेखे ॥
विधि ब्रूकत सबहिं सुबानी । सुनत राम बन-वास-कहानी ॥

१०—तेहि बासर बसि प्रातही, चले सुमिरि रघुनाथ ।

रामदरस की लालसा, भरत सरिस लव साथ ॥२२५॥

ल सगुन होहिं-सब काहू । फरकहिं सुखद बिलोचन बाहू ॥
तहि सहित समाज उछाहू । मिलहहिं रामु मिटिहि दुखदाहू ॥
त मनोरथ जस जिय जाके । जाहिं सनेहसुरा^१ सब छाके ॥
थिल अंग पग मग डगि डोलहिं । बिहवल वचन^२ पेमबस बोलहिं ॥
मसखा तेहि समय देखावा । सैलसिरोमनि सहज सुहावा ॥
सु समीप सरित-पय-तीरा । सीयसमेत बसहिं दोउ बीरा ॥
खि करहिं सब दंड प्रनामा । कहि जय जानकि जीवन रामा ॥
ममगन अस राजसमाजू । जनु फिरि अवध चले रघुराजू ॥

दो०—भरत प्रेसु तेहि समय जस, तस कहि सकै न सेषु ।

*कविहि अगम जिमि ब्रह्मसुखु, अह-मम-मलिन-जनेषु ॥२२६॥

कल सनेह लिथिल रघुबर के । गण कोस दुह दिनकर ढरके^४ ॥
त थल देखि बसे, निखि वीते । कीन्ह गवजु रघु-नाथ पिरिते ॥
हाँ रामु रजनी अयसेखा^५ । जामे शीय सपन अस देखा ॥
हित समाज भरत जनुं आय । नाथबियोग-ताप तन-ताप^६ ॥
कल मलिनमन दीन दुखारी । देखीं सांखु थान-अनुहारी^७ ॥
गुनि सियलपन भरे लल लोचन । भय सोचबस सोचनि सोचन ॥
पन सपन यह नीक न होई । काठिन कुचाह सुनाइहि कोई ॥
स कहि बंधु समेत नहानि । पूजि पुरारि^८ साधु सनमाने ॥

१ प्रच्छी तरह २ स्नेह ३ लपी मद ४ लड़खड़ाती चारों ५ दिन दले ६ थोड़ी
पत रहे ६ तापे हुये ७ और ही भांति ८ पुर + अरि = महादेव

* कवि-को ऐसा दुस्तर है जैसा कि अहकार से मलिन मनुष्यों को ब्रह्म सुख

छंद—सतमानि सुर मुनि थंदि बैठे उतर दिसि देखत रहे ।
 नख धूरि खग मृग भूरि भागे सकल प्रभु आश्रम गए ॥
 तुलसी उठे अवलोकि कारनु काह चित सचकित भए ।
 सब समाचार किरात कोलान्हि आई तेहि अवसर फहे ॥

श्लो०—सुनत सुमंगल वैन मन प्रमोद तन पुलक भर ।

सरदसरोरुह नैन तुलसी भरे सनेह-जल ॥२२७॥

बहुरि सोच बस भे सियरबन्नु । कारन कवन भरतआगध
 एक आई अस कहा बहोरी । सेन संग चतुरंग न थोरी
 सो मुनि रामहिं भा अति खोच्यु । इत पितुवच उत धंधुसँकोच्यु
 भरतनुभाउ समुभि मन मार्यो । प्रभुचितहिततिश्रि पावन नाही
 समाधान तव भा यह जाने । भरतु कहे महुँ साधु सयाने
 लपनु लखेउ प्रभु-हृदय खँभारु । कहत समयसम नीतिविचार
 विनु पूँछे कछु कहाँ गोसाई । सेवकुसमय न ढीठ ढिठाई
 तुम्ह सर्वज्ञ सिरोमनि स्वामी । आपनि समुभि कहाँ अनुगामी
 दो०—नाथ सुहृद सुठि सरलचित सील-सनेह-निधान ।

सथ पर प्रीति प्रतीति जिय जानिअ आपु समान ॥२२८॥
 विषयी जीव पाइ प्रभुताई । मृद सोहवस होहि जनाई
 भरतु नीतिरत साधु सुजाना । प्रभु-पद-प्रेम सकल जगु जाना
 तेऊ आजु राजपदु पाई । चले धरममरजादु मेटाई
 कुटिल कुबंध कुअवलरु ताकी । जानि राम बनवास एककी
 करि कुमंत्रु मन साजि लमाजू । आप करै अकंटक राज
 कोटि प्रकार कल्पि कुटिलाई । आपु दलु बटोरि दोउ भाई
 जो जिय होति न रूपट कुचाली । कोहि सोहाति रथ-वाजि-गजाली
 भरतहि दोष देह को जाप । जग वौराइ राजपद पाप

१ (स्थिति) २.....नें खलवली ३ अपने को दिखते हैं अर्थात् धर्म
 करते हैं ४ शकला, असहाय ५ पदयंत्र ६ निर्विघ्न ७ सोचकर ८ हाथी ९ व्यर्थ ।

दो०—*सखि गुर-तिय-गामी, नहुषु चढेउ भूमि-सुर-जान ।

लोकबेद तें विमुख भा अधम न † वेन समान ॥२२६॥

।हसबाहु xसुरनाथ ॥त्रिसंकू । केहि न राजमद दिन्ह कलंकू ॥

* चन्द्रमा ने त्रिलोक को जीत कर राजसूय यज्ञ किया और अपनी गुरुपत्नी हर लिया। देवताओं ने भी चन्द्रमा का ही पक्ष लिया, तब ब्रह्मा ने बीच में तारा वृहस्पति को दिला दी और चन्द्र का पुत्र बुध, जो तारा से पैदा था पर ही रहा।

† वेनु जन्म से ही दुष्ट-प्रकृति और उपद्रवी था। पिता दुखी हो वन चला। तब तो वह राज्य पा, मदान्ध हो, ऋषि मुनि आदि से हठाव ईश्वरोपासना, उनकी अपनी पूजा कराने को बाधित करने लगा। मुनियों ने बहुत रक्षाया पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, अन्त में उन्होंने भस्म कर दिया।

‡ एक समय जमदग्नि ने राजा सहस्राबाहु का— जो शिकार को आया हुआ सत्सैन्य स्वागत किया। राजा आश्चर्य में आगया कि मुनि पर इतनी सम्पत्ति से आई। और यह जानकर कि सारा वैभव कामधेनु का है, उसे मांगने लगा। ऋषि के न देने पर, उन्हें मार कर गाय ले गया। कामधेनु तो उससे छूट कर पृथ्वी की चली गई और इधर ऋषि के पुत्र परशुराम ने युद्ध में सहस्राबाहु को मार कर पृथ्वी को २१ बार क्षत्रीहीन कर दिया।

x एक बार इन्द्र ने राजमद में आ गुरुवृहस्पति का उचित आदर नहीं किया कर ही गये। अब तो दैत्यों ने चढ़ाई कर देवताओं को मार स्वर्ग से निकाला। तब इन्द्र ने ब्रह्मा की सम्मति से विश्वरूप को अपना पुरोहित बना अपनी रक्षा की।

॥ त्रिशंकु सदेह स्वर्ग जाना चाहता था। उसने, वसिष्ठ व उनके पुत्रों से पौरय सिद्धि न होते देख विश्वामित्र द्वारा स्वर्ग गया। वहां से देवताओं ने रा दिया और अधपर लटकता रह गया।

भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ । रिपु रिन रंच^१ न राखब काऊ ॥
 एक कीन्हि नहि भरत भलाई । निदरे^२ राम जानि असहाई ॥
 समुक्ति परिहि सोउ श्राजु विसेखी । समर^३ सरोष राममुख पेखी ॥
 एतना कहत नीतिरस भूला । रन रस-विटप^४ पुलक मिस फूला ॥
 प्रभुपद वंदि सीसरज राखी । बोले सत्य सहज वक्षु भाखी ॥
 अनुचित नाथ न मानब मोरा । भरत हमहि उपचरा^५ न थोरा ॥
 कहँ लागि सहिअ रहिअ मन मारै । नाथसाथ धनु हाथ हमारै ॥

दो०—छत्रिजाति रघु-कुल-जनसु रामअनुग जगु जान ।

लातहुँ मारै चढ़ति सिर नाच कौ धूरिसमान ॥२२०॥

उठि कर जोरि रजायसुमाँगा । मनहु वीररस सोवत जागा ॥
 बाँधि जटा सिर कसि कटि भाथा^६ । साजि सरासनु सायकु^७ हाथा ॥
 श्राजु रामसेवक जसु लेऊँ । भरतहि समर सिखावन देऊँ ॥
 रामनिरादर कर फलु पाई । सोवहु समरसेज दोउ भाई ॥
 आइ बना भल सकल समाजू । प्रगट करौ रिस पाछिलि श्राजू ॥
 जिमि करिनिकर^८ दलै, ^९मृगराजू । लेइ लपेटि लवा^{१०} जिमि षाजू ॥
 तैसेहि भरतहि सेनसमेता । सानुज निदिरि निपातौ^{११} खेता ॥
 जाँ सहाय कर संकरु श्राई । तउ मारौ रन रामदोहाई ॥

दो०—अतिसरोष मापे लपनु, लाखि सुनि सपथ^{१२} प्रवाम ।

सभय लोक सब लोकपति, चाहत भभरि भगान^{१३} ॥२२१॥

१ थोड़ाभी २ अपमान किया ३ लड़ाई ४ वीर रस रूपी वृक्ष ५ छेड़ ६ तरकस
 ७ तीर ८ हाथियों के झुंड ९ नष्ट करता है १० एक छोटी चिड़िया होती है
 ११ नष्ट कर डालूँ १२ सौगंद १३ भड़भड़ा कर डर कर ।

जगु भयमगन^१ गगन भइ बानी । लषन-धाहु-बलु विपुल^२ वखानी ॥
 तात प्रतापप्रभाउ तुम्हारा । को कहि सकै, को जाननिहारा ॥
 अनुचित उचित काज किछु होऊ । समुझि करिअ भल कह सब कोऊ ॥
 सहसा करि पाछें पछिताहीं । कहहिं वेद बुध 'ते बुध नाहीं' ॥
 सुनि सुरवचन लषन सकुचाने । राम सीय सादर सनमाने
 फही तात तुम्ह नीति सुहाई । सब तैं कठिन राजमदु भाई ॥
 जो अचवत^३ माँतहि^४ नृप तेई । नाहिंन साधु-सभा जेहि सेई ॥
 सुनहु लषन भल भरतलरीला । बिधिप्रपंच महँ सुना न दीसा ॥

दो०—भरतहि होइ न राजमदु, विधि-हरि-हर-पद पाइ ।
 कवहुँ कि काँजीसीकरनि^५, छीरसिंधु विनसाइ^६ ॥२३२॥

तिमिर^७ तरुन तरनिहि^८ मकु गिलई^९ गगन^{१०} ममुन मकु मेधहि^{११} मिलई
 *गोपद जह बूढ़हि घटजोनी^{१२} । सहज छमा बरु छाड़इ छोनी^{१३} ॥
 मसकफूँक मकु मेरु उड़ाई । होइ न नृपमद भरतहि भाई ॥
 लषन तुम्हार सपथ पितुआना । सुचि सुबंधु नहिं भरतसमाना ॥
 सगुनु पीरु अरुगुनजल ताता । भिलइ रचै परपंच^{१४} विधाता ॥
 भरत हंस रवि-वंस-तड़ागा^{१५} । जनमि कीन्ह गुन-दोष-विभागा ॥
 गहि गुन पय तजि अरुगुन वारी । निज जस जगत कीन्ह उँजियारी ॥
 कहत भरत-गुन-लीलु-सुभाऊ । पेमपयोधि^{१६} मगन रघुराऊ ॥

दो०—सुनि रघुवरवानी विबुध, देखि भरत पर हेतु ।
 सकल लराहत राम सो, प्रभु को कृपानिकेतु^{१७} ॥२३३॥-

१ भयभीत २ अथाह ३ पीता है ४ पागल ५ काँजी की बूढ़ ६ नष्ट करती है
 ७ अँधेरा ८ दो पहर के सूर्य को ९ निगल जाय १० आकाश में ११ वादल
 १२ प्रास्तमुनि १३ पृथ्वी १४ संसार १५.....तालाव १६ प्रेम का
 समुद्र १७ कृपा का घर ।

जौं न होत जग जनम भरत को । सकल-धरम-धुर-धरानि-धरत को ॥
 कवि-कुल-अगम भरत-गुन-गाथा । को जानै तुम्ह बिनु रघुनाथा ॥
 लपन राम सिय सुनि सुरबानी । अति सुखु लडेउ न जाइ बखानो ॥
 इहाँ भरतु सब सहित सहाप^१ । मंदाकिनी पुनीत नहाप ॥
 सरितसमीप राखि सब लोगा । माँगि मातु-गुर-सचिव नियोगा^२ ॥
 चले भरत जहँ सियरघुराई । साथ निपादनाथ लघुभाई ॥
 समुक्ति मातुकरतव सकुचार्ही । करत कुतरक कांठि मन माहीं ॥
 राम-लपनु-सिय सुनि मम नाऊँ । उठि जनि अनत जाहिँ तजि टाऊँ ॥

दो०—मातु मते महुँ मानि मोहि, जो कछु कहहिँ सो थोर ।

अथ अवगुन छमि आदरहिँ, समुक्ति आपनी ओर ॥२३५॥

जौं परिहरहिँ मलिन-मनु जानी । जौं सनमानहिँ सेवक मानी ॥
 मोरे सरन रामहि की पनहीं^३ । राम सुस्वामि दोष सब जनहीं^४ ॥
 जग जसभाजन चातक मीना । नेम पैम निज^५ निपुन नबीना^६ ॥
 अस मन गुनत चले मग जाता । सकुच सनेह सिथिल सब गाता ॥
 फेरति मनहिँ मातुकृत खोरी । चलत भगतिबल धीरजधोरी ॥
 जब समुक्त रघुनाथसुभाऊ । तब पथ परत उताइल^७ पाऊ ॥
 भरतदसा तेहि अवसर कैसी । जलप्रवाह जल-अति-गति^८ जैसी ॥
 देखि भरत कर सोचु सनेह । भा निपाद तेहि समय बिदेह ॥

दो०—लगे होन मंगल सगुन सुनि गुनि कहत निपादु ।

मिटिहिँ लोच होइहिँ हरषु पुनि परिनाम त्रिपादु^९ ॥२३५॥

सेवक बचन सत्य सब जनि । आश्रम निकट जाइ नियराने^{१०} ॥
 परत दीख वन-सैल-समाजू । मुदित छुधित^{११} जनु पाइ सुनाजू ॥

१ साथी २ आज्ञा ३ जूता (उपानह) ४ सेवक का अर्थात् मेरा ५ अपना
 नये ७ जखदी जखदी कपानी के मोरे की दशा ८ दुःख ९ पास आये ११ भूषा

इति भीतिं जनु प्रजा दुखारी । त्रिविधं तापं पीडितं ग्रहं भारी ॥
जाइ सुराज सुदेस सुखारी । होहि भरतगति तेहि अनुहारी ॥
रामबास बनसंपति भ्राजो २ । सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा ॥
सचिव विरांगु विवेकु नरेसू । विपिन सुहावन पावन देसू ॥
भट ३ जम-नियम सैल रजधानी । सांति सुमति सुचि सुंदरि रानी ॥
सकल अंग संपन्न सुराऊ । रामचरन-आश्रित ४ चित चाऊ ५ ॥

दो०—जीति मोह - महिपालु दल ६ सहित विवेक भुआलु ॥

करत अकंटक ७ राजु पुर सुख संपदा सुकालु ॥२३६॥

बनप्रदेस मुनिबास घनेरे । जनु पुर नगर गाऊंगन खेरे ८ ॥
बिपुल ९ बिचित्र बिहंग मृग नाना । प्रजासमाजु न जाइ बखाना ॥
लंगहा १० करि हरि ११ बाघ बराहा १२ । देखिमहिष १३ वृष १४ साजुसराहा ॥
बयरु बिहाय चरहि एक संग । जहै तहै मनहुँ सेन चतुरंगा ॥
भरना भरहि मत्तगज गाजहि । मनहुँ निसान विविधि विधि बाजहि ॥
चक्र चकोर चातक सुक पिक गन । कूजत मंजु मराल सुदितमन ॥
अलिगन गावत नाचत मोरा । जनु सुराज मंगल चहुँ ओरा ॥
बेल बिटप तृन सफल सफूला । सबु समाजु सुद-मंगल-मूला ॥

दो०—रामसैल सोभा निरखि, भरतुदय अतिप्रेमु ।

तापस तपफल पाइ जिमि, सुखी सिराने नेमु ॥२३७॥

तब केवट ऊंचे चढ़ि धाई । कहेउ भरत सन भुजा उठाई ॥
नाथ देखिअ बिटपबिसाला । पाकरि १५ जंजु १६ रसाल १७ तमाला १८ ॥

१ इत का डर, इत ६ हैं—अतिवृष्टि, अनवृष्टि, मूसक टीठी, शुक और समीपवर्ती राजाओं की चढ़ाई, ताप ३ हैं—दैहिक, दैविक, भौतिक ।

२ शोभित है ३ जङ्गल ४ वीर ५ सहारे से ६ उत्साह है ७ मोहरूप . राजा के दल
८ बेलके - ९ पुराणे बसे हुए गाँव १० बहुत ही ११ गेंडा १२ सिंह १३ सूअर
१४ भैंस १५ बेल १६ पापरी १७ जामुन १८ आम १९ एक पेड़ * हाथी ।

तिन्ह तरुवरन्ह मध्य बटु^१ सोहा । मंजु विसाल देखि मन मोहा ॥
नील सघन^२ पल्लव फल लाला । अवरिल^३ छौह सुखद सत्र काला ॥
मानहुँ तिमिर-अरुन-मय रासी । विरची विधि सकोलि सुखमा^४ सी ॥
ए तइ सरितसमीपे गोसाईं , रघुवर परनकुटी जहँ छौई ॥
तुलसी तरुवर विविधि सुहाए । कहँ कहँ सिय कहँ लपन लगाए ॥
वटझाया वेदिका यनाई । सिय निज-पनि-सरोज सुहाई ॥
दो०—जहाँ बैठि मुनि-गन-सहित, नित सिय राम सुजान ।

सुनहिँ कथा इतिहास सथ, आगम^५ निगम^६ पुरान ॥२३॥
सखावचन सुनि विटप निहारी । उमगे भरत बिलोचन बारी ॥
करत प्रनामु चले दोउ भाई । कहत प्रीति सारद सकुचाई ॥
हरपहिँ निरखि राम-पद श्रंका^७ । मानहुँ पारसु पायेउ रंका ॥
रजसिर धरि हियनयनन्हि लावहिँ । रघुवर-मिलन-सरिस सुख-पावहिँ ॥
देखि भरतगति अकथ अतीवा^८ । प्रेमभगन मृग खग जइ जीवा ॥
सखहिँ संनहविवस मग भूला । कहि सुपंथ सुर वरपहिँ फूला ॥
निरखि सिद्ध साधक-अनुरागे । सहज सनेहु सराहन लागे ॥
होत न भूनल भाउ भरत को । अचर^९ सचर^{१०}, चर अचर करत को ॥
दो०—पेम अभिअ मंदरु^{११} विरहु, भरतु पयोधि गँभीर* ।

मथि प्रमटेउ सुर-साधु-हित, कृपासिंधु रघुबीर ॥
सखा समेत मनोहर जोटा । लखेउ न लपन सघन वन ओटा ॥
भरत दीख प्रभु-आश्रम पावन । सकल-सु-मंगल सदन सुहावन ॥
करत प्रवेश मिटै दुखदावा । जनु जोगी परमारथु पावा ॥
देखे भरत लपन प्रभु आगे । पूछे वचन कहत अनुरागे ॥
सीस जटा कटि मुनिपट बाँधे । तून कसे, कर सर, धनु काँधे ॥

१ वरगद २ घना ३ सर्वदा रहने वाली ४ सुन्दरता ५ शास्त्र ६ वेद
७ निशान ८ अत्यंत अकथनीय ९ स्थिर १० चलने वाले ११ मन्दराचल पर्वत
* गहरी समुद्र ।

दी पर मुनि-साधु-समाजू । सीयसहित राजत रघुराजू ॥
लकल बसन^१ जटिल^२ तनु स्यामा । जनु मुनिवेष कान्ह रतिकामा ॥
रकमलनि धनुसायकु फेरत । जिय का जरनि हरत हंसि हेरत ॥

दो०—लसतं मंजु मुनि-मंडली मध्य सीय रघुचंद्रु ।

ज्ञानसभा जनु तनु धरे, भगति सच्चिदानंदु ॥ २४० ॥

शानुज^३ सखा समेत मगन मन ; बिसरे^४ हरष-सोकु-सुख-दुख-गन ॥
गहि^५ नाथ कहि पाहि गोसाई । भूतल परे लकुट^६ की नाई ॥
बचन सप्रेम लषन पहिचाने । करत प्रनामु भरत जिय जाने ॥
बंधुसनेह संरस^७ यहि श्रोरा । इत साहिवसेवा बस जोरा ॥
मिलि न जाइ नहि गुदरत^८ बनई । सुकवि लषनमन की गति भनई^९ ॥
रहे राखि सेवा पर भारू । चढी चंम^{१०} जनु खैच खेलारू ॥
कहत सप्रेम नाइ महि माथा । भरत प्रनाम करत रघुनाथा ॥
उठे राम मुनि प्रेम अधीरा । कहूँ पट कहूँ निषंग धनु तीरा ॥

दो०—बरवस लिये उठाइ उर, लाये कृपानिधान ।

भरत राम की मिलनि लखि, बिसरे सबहि अपान^{११} ॥ २४१ ॥

मिलनि प्रीति किमि जाइ वखानी । कविकुल-अगम करम मन बानी ॥
परम-प्रेम-पूरन दोउ भाई । मन बुधि चित अहमिति^{१२} बिसरई ॥
कहहु सप्रेम प्रगट को करई । केहि छाया कवि-मति अनुसरई ॥
कविहि अरथ आखर^{१३} बलु-साँचा । अनुहरि ताल गतिहि नटु नाचा ॥
अगमसनेह भरत-रघुवर को । जहँ न जाइ मनु विधि-हरि-हर को ॥
सो मैं कुमति कहाँ केहि भाँती । बाजु सुराग कि गाँडरताँती^{१४} ॥
मिलनि विलोकि भरत-रघुवर की । सुरगन सभय धकधकी धरकी ॥

१ छाल के वस्त्र (२) जटा रखाये हुये ३ स+अनुज, भाई के साथ ४ दूर
होगये ५ रक्षा करो ६ लकड़ी ७ स+रस, रस युक्त, प्रेम ८ छोड़ते ९ कहता है
१० पतंग ११ अपनपे को १२ (अहम्+इति) अहंकार १३ अक्षर १४ भेड़
(ऊन) की तांत ।

समुभाए सुरगुरु जड़ जागे^१ । बरषि प्रसून प्रसंसन लागे ।

दो०—मिलि सप्रेम रिपुसूदनहिं, केवट भेंटेउ राम ।

भूरि भाय भेंटे भरत, लछिमन करत प्रनाम ॥२४२॥

भेंटेउ लषन ललकि^२ लघु भाई । बहुरि निषादु लीन्ह उर लाई ।

पुनि मुनिगन दुहुँ भाइन्ह बंदे । अभिमत आसिष पाइ अनंदे ।

सानुज भरत उमगि अनुरागा । धरि सिर सियपद-पदुम-परागा ।

पुनि पुनि करत प्रनाम उठाए । सिर करकमल परसि बैठाए ।

सीय असीस दीन्ह मन माहीं । मगन-सनेह देहसुधि नाहीं ।

सब विधि सानुकूल लखि सीता । भे निसोच उर अपडर^३ बीता ।

कोउ किछु कहै न कोउ किछु पूछा । प्रेम भरा मन निज-गति-छूछा ।

तेहि अवसर केवटु धीरजु धरि । जोरि पानि बिनवत प्रनामु करि ।

दो०—नाथ साथ मुनिनाथ के, मातु सकल पुरलोग ।

सेवक सेनप^४ सचिव^५ सब, आप बिकल-बिबीग ॥२४३॥

सीलसिंधु सुनि गुरु आगवनू । सियसमीप राखे रिपुदवनू ।

चले संवग राम तेहि काला । धीर-धरम-धुर दानदयाला ।

गुरहि देखि सानुज अनुरागे । दंडप्रनाम करन प्रभु लागे ।

मुनिवर धाइ लिप उर लाई । प्रेम उमगि भेंटे दोउ भाई ।

प्रेम पुलकि केवट कहि नामू । कीन्ह दूरि तें दंडप्रनामू ।

रामसखा रिपि बरबस भेंटा । जनु महि लुठत^६ सनेह समेटा ।

रघुपति—भगति सुमंगल मूला । नभ सराहि सुर बरषाहि फूला ।

पाहि सम निपट नीच कोउ नाहीं । बड़ बरिष्ठसम को जग माहीं ।

दो०—जेहि लखि लषनहुँ तें अधिक, मिले मुदित मुनिराउ ।

सो सीता-पति-भजन को, प्रगट प्रतापप्रभाउ ॥२४४॥

आरत लोग राम सबु जाना । करुनाकर सुजान भगवाना ।

१ ज्ञान हुआ २ प्रेम के साथ जल्दी करके ३ अपने डर ४ सेन + प = सेनापति
५ मंत्री ६ गिरे हुए ।

जेहि भाय रहा-अभिलाखी । तेहि तेहि कै तसि तसि रुख^१ राखी ॥
 वुज मिलि पल महुँ सब काहू । कान्ह दूरि दुखु-दारुन-दाहू ॥
 इ बड़ि बात राम कै नाहीं । जिमि घट कोटि^२ एक रवि छाहीं ॥
 ले केवटहि उमगि अनुरागा । पुरजन सकल सराहहि भागा ॥
 जौ राम दुखित महतारीं । जनु सुबेलिअवली^३ हिम^४ मारीं ॥
 पम राम भैंटी कैकेई । सरल सुभाय भगति-मति भेई ॥
 ग परि कान्ह प्रबोधु बहोरी । काल करम बिधि सिर धरि खोरी ॥
 दो०—भैंटी रघुवर मातु सब, करि प्रबोध परितोषु ।

अब ईसआधीन जगु, काहु न देखअ दोषु ॥२४५॥
 १-तिय-पद वंदे दुहुँ भाई । सहित विप्रतिय जे संग आई ॥
 ग-गौरि-सम सब सनमानी^६ । देहि असीस मुदित मृदुबानी ॥
 गहि पद लगे सुमित्राश्रंका । जनु भैंटी संपति अति रंका ॥
 पुमि जननीचरननि दोउ भ्राता । परे पेम - व्याकुल सब गाता ॥
 अति अनुराग अब उर लाए । नयन संनेह-सलिल^७ अन्हवाए ॥
 तेहि अवसर कर हरष विषादू । किमि कवि कहै मूक जिमि स्वादू ॥
 मिलि जननिहिँ सानुज रघुराऊ । गुरुसन कहेउ कि धरिअ पाऊ ॥
 पुरजन पाइ मुनीसनियोगू^८ । जल थल ताकि ताकि उतरेउ लोगू ॥

दो०—महिसुर मंत्री मातु गुरु गनै लोग लिये साथ ।

पावन आश्रम गवनु किए भरत लषन रघुनाथ ॥२४६॥

सीय आइ मुनि-वर पग लागी । उचित असीस लही मनमौगी ॥
 गुरपतिनिहिँ मुनि तियन्ह समेता । मिली प्रेम कहि जाइ न जेता ॥
 बंदि बंदि पग सिय सबही के । आसिरवचन^९ लहे प्रिय जी के ॥
 सासु सकल जब सीय निहारीं । मूँदे नयन सहमि सुकुमारीं ॥

१ इच्छा २ करोड़ों घड़े में ३ अच्छी बेलों की पाँति ४ बर्फ ५ दोष
 ६ आदर किया ७ स्नेहरूपी पानी ८ मुनि की आज्ञा ९ आशीर्वाद ।

परी अधिकवस^१ मनहुँ मराली^२ । काह कीन्ह करतार कुचाली^३ ।
तिन्ह सिय निरखि निपट^४ दुख पावा । सो सब सहिअ जो देउ सहावा
जनकसुता तव उर धरि धीरा । नील-नलिन-लोयन^५ भरि नारी^६ ।
मिली सकल सासुन्ह सिय जाई । तेहि अवसर करुना^७ महि छाई ।

दो०—लागि लागि पग सवनि सिय, भेंटति अति अनुराग ।

हृदय असीसहिँ पेमवस, रहिअहु भरी सोहाग ॥२४७॥

विकल सनेह सीय सब रानी । बैठन सवाहिँ कहेउ गुर ब्रानी ॥
कहि जगगति मायिक^८ मुनिनाथा । कहे कछुक परमारथ^९ गाथा ॥
नृप कर सुर-पुर-गवनु सुनावा । सुनि रघुनाथ दुसह दुखु पावा ॥
मरनहेतु निजनेहु विचारी । भे अति विकल धीर-धुर-धारी ॥
कुलिसकठोर^{१०} सुनत कहु वानी । विलपत लपन सीय सब रानी ॥
सोक विकल अति सकल समाजू । मानहुँ राजु अकाजेउ^{११} आजू ॥
मुनिवर बहुरि राम समुभाए । सहित समाज सुसरित नहाए ॥
प्रतु निरंवु^{१२} तेहि दिन प्रभु कीन्हा । मुनिहु कहे जलु काहु न लीन्हा ।

दो०—भोरु भए रघुनंदनहिँ जो मुनि आयेसु दीन्ह ।

श्रद्धा^{१३} भगति-समेत प्रभु सो सब सादर कीन्ह ॥२४८॥

करि पितृक्रिया वेद जसि बरनी । भे पुनीत पातक-तम-तरनी^{१४} ॥
जासु नाम पावक अघतूला^{१५} । सुमिरत सकल-सु-मंगल-मूला ॥
सुद्ध सो भयेउ साधु संमत अस । तीरथआवाहन^{१६} सुरसरि जस ॥
सुद्ध भएँ दुइ वासर धीते । बोले गुर सन राम पिराते^{१७} ॥

१ वहेलिया के वश में २ हंसिनी ३ विलकुल ४ नीले कमल के समान ५ नीर ६ पानी ७ माया सबधी ८ मोक्ष की कथा ९ वजू से भी कठोर १० मृत्यु ११ निर्जल वृत्त १२ (श्रद्धा) आदरणीय प्रेम १३ पाप रूपी श्रवणार के लिये जो सूर्यरूप है १४ पाप रुई के तुल्य है १५ बुताना १६ प्यारे

योग सब निपट दुखारी । कंद - मूल - फल - अंबु - अहारी ॥
भरतु सचिव सब माता । देखि मोहि पल जिमि जुग जाता ॥
अमेत पुर धारिअ पाऊ । आपु इहाँ अमरावति राऊ ॥
कहेउँ सब कियेउँ ढिठाई । उचित होइ तस करिअ गोसाई ॥

—धर्मसेतु करुनायतन कस न कहहु अस राम ।

लोग दुखित दिन दुइ दरस देखि लहहुँ विश्राम ॥२४६॥
बचन सुनि सभय समाजू । जनु अलनिधि मंहुँ विकल जहाजू ॥
गुरगिरा सु-मंगल - मूला । भयेउ मनहुँ मारुत अनुकूला ॥
प्रय तिहुँ काल नहाहीं । जो विलोकि अघश्रोघ ? नसाहीं ॥
मूरति लोचन भरि भरि । निरंखाहीं हरषि दंडवत करि करि ॥
सैल - बन देखन जाहीं । जहँ सुख सकल सकल दुख नाहीं ॥
ना भरहि सुधासम बारी ? । त्रि-विध-ताप-हर त्रिविध बयारी ॥
अबलि तृण ? अगनित जाती । फल प्रसून ? पल्लव बहु भाँती ॥
सिला सुखद तरु छाहीं । जाइ बरन बन छयि केहि पाहीं ॥

०—सरनि सरोरुह जल-विहंग * कूजत गुंजत भृंग ।

वैरविगत विहरत विपिन मृग विहंग वहुरंग ॥२५०॥

किरात भिल्ल बनवासी । मधुसुचि सुंदर स्वादु सुधा सी ॥
भरि परनपुटी ? राचि रूरी । कंद मूल फल अंकुर जूरी ? ॥
देहि देहि करि बिनय प्रनामा । कहि कहि स्वादुभेदु गुन नामा ॥
लोग बहु मोल न लेहीं । फेरत राम दोहाई देही ॥
हि सनेहमगन मृदुबानी । मानत साधु पेम पहिचानी ॥
सुकृती हम नीच निषादा । पावा दरसनु रामप्रसादा ॥
अग्रम अति दरसुतुम्हारा । जस मरुधरनि देव-धुनि-धारा ॥
मरुपाल निषाद नेवाजा । परिजन प्रजउ चाहिय जस राजा ॥

पापों का समूह २ पानी ३ घास ४ फूल ५ पत्ती ६ दोना ७ इकट्ठा ।

दो०—यह जिय जानि सँकोचु तजि, करिअ छोडु लखि के
 हमहि कृतारथ करन लागि, फल तून अँकुर^१ लेहु ॥ १०
 तुम्ह प्रिय पाहुन^२ बन पग धारे। सेवाजोगु न भाग हमहि
 देष काह हम तुम्हहि गोसाईं। ईधनु पात केरात मित्त
 यह हमारि अति बढि सेवकाई। लेहि न वासन^३ वसन सोर
 हम जड़ जीव जीव-गन-घाती^४। कुटिल कुचाली कुमति कुप
 पाप करत निसि वासर जाहीं। नहि पट कटि^५, नहि पेट
 सपनेहुँ धरम बुद्धि कस काऊ। यह रघु-नंदन दरस प्रभा
 जब ते प्रभु-पद-पदुम निहारे। मिटे दुसह-दुख-शेष हम
 वचन सुनत पुरजन अनुरागे। तिन्ह के भाग सराहन ला

छंद—लागे सराहन भाग सब अनुराग वचन सुनावहीं।

बोलनि मिलनि सिय-राम-चरन सनेहु लखि सुखु पावहीं
 नरनारि निदरहि नेहु निज सुनि कौल मिललनि की गि
 तुलसी कृपा रघु-वंस-मनि की लोह लै नौका^६ तिरा ॥

सो०—बिहरहि बन चहुँ ओर, प्रतिदिन प्रमुंदित लाग सब।

जल ज्यों दादुर^७ मोर, भए पीन^८ पावस^९ प्रथम ॥२५६

पुरजन नारि भगन अति प्रीती। वासर जाहि पलक सम-बती
 सीय सासु प्रति वेप^{१०} बनाई। सादर करै सरिस संवका
 लखान मरसु राम विनु काहू। माया सब सियमाया माहू
 सीय सासु सेवा-वस कीन्ही। तिन्ह लहि सुख सिख आसिप व
 लखि सियकदित सरल दोउ भाई। कुटिल रानि पद्धितानि अ
 अवनि जमाहि जाँचति^{११} केकेई। मदिन बीचु विधि मीचु^{१२} न

१ कृपा २ अँकुरा ३ अतिथि ४ पात्र ५ जीवों का नाश करने वाला
 कर्म में फँस ७ नाग ८ मेंढक ९ छट पुट १० बरसात ११ बीच
 मांगती १२ मृत्यु + लोकोक्ति का कर्तृ रूप।

। वेद विदित कृवि कहहीं । राम-विमुख थलु नरक न लहहीं ॥
। सउ सब के मन माहीं । राम गवँन^१ विधि अवध कि नाहीं ॥

—निसि न नौद नहिँ भूख दिन, भरतु विकल सुचि सोच ।

नोच कीच दिच मगन^२ जस, मीनहिँ सलिल संकोच ॥२५३॥

ह मातुमिस काल कुचाली । ईति भीति जस पाकत साली^३ ॥
विधि होइ राम अभिषेकू । मोहि अवकलत^४ उपाउ न एकू ॥
से फिरहिँ गुरु आयेसु मानी । मुनि पुनि कहब रामरुचि जानी^५ ॥
कहेहुँ बहुरहिँ रघुराऊ । रामजननि हठ करवि कि काऊ ॥
। अनुचर कर केतिक वाता । तेहि महुँ कुसमउ बाम विधाता ॥
। ठ करौ त निपट कुकरमू । हरगिरि^६ तें गुरु सेवकधरमू ॥
। जुगुति न मन ठहरानी । सोचत भरतहिँ, रैन-विहानी^७ ॥
। नहाइ प्रभुहिँ सिर नाई । बैठत पठए रिषय बोलाई ॥

०—गुर-पद-कमल प्रनामु करि, बैठे आयसु पाइ ।

विप्र महाजन सचिव सब, जुरे सभासद आइ ॥२५४॥

मुनिवर समय समाना । सुनहु सभासद भरत सुजाना ।
। धुरीन भानुकुल भानू । राजा रामु स्ववस^८ भगवानू ॥
। सिंध पालक श्रुति सेतू । रामजनमु जग-मंगलहेतू ॥
। पितु-मातु-वचन-अनुसारी । खल-दलु-दलन देव-हित-कारी ॥
। प्रीति परमारथ स्वारथु । कोउ न रामसम जान जधारथु^९ ॥
। बेहरि हरु सासि रवि दिसिपाला^{१०} । माया जीव करम कुलि-काला^{११} ॥
। ए^{१२} महिप^{१३} जहँ लागि प्रभुताई । जोग सिद्धि निगमागप्र गाई ॥
। बिचार जिय देखहु नीकें । रामरजाइ सीस सबही कें ॥

१ जाना २ दूबी हुई ३ पकी हुई ४ धान की खेती ५ दिखाई देता ६ कैलाश
७ रात्रि बीत गई ८ स्वाधीन ९ वास्तव १० दिगपाल ११ सम्पूर्ण समय
शेषनाग १२ राजा ।

दो०—राखें राम रजाइ रख, हम सब कर हित होइ ।

समुझि सयाने करहु अरु, सब मिलि संमत सोइ ॥

सब कहँ सुखद राम अभिपेकू । मंगल-मोद-मूल मगु प
केहि विधि अवध चलहि रघुराऊ । कहहु समुझि सोइ करिअ उ
सब सादर सुनि मुनि-धर-बानी । नय^१ परमारथ स्वारथ सा
उतरु न आघ लोग भए भंरे । तव सिरु नाइ भरत का
भानुवंस भए भूप घनेरे । अधिक एक तें एक न
जनम हेतु सब कहँ पितु माता । करम सुभासुभ देख विधा
दलि^२ दुख सज^३ सकल कल्याना । अस असीस राउरि जगु ज
सोइ गोलाई विधि गति जेहि छेकी^४ । सकै को दारि टेक जा ट

दो०—बूझिअ मोहि उपाउ अरु, सो सब मोर अभाग ।

सुनि सनेह-मय-वचन गुर, उर उमगा अनुगग ॥२५६

तात वात फुरि राम कृपाहीं । रामविमुख सिधि सपनेहु ना
सकुचौं तात कहत एक वाता । अरुध तजहि बुध सग्वस जात
तुगह कानन गर्वनहु दोउ भाई । फेरिअहि लपन सीध रघुग
सुनि सुवचन हरपे दोउ भ्राता । भे^५ प्रमोद-परि-पूरन गात
मन प्रसन्न तन तेजु विराजा । जनु जिय राउ^६ राम भए राउ
वहुतु लाभ लोगन्ह जघु हानी । सम दुखसुख सब रोवहि राम
कहहि भरतु, मुनि कहा सो कीन्हे । फलु जग जीवन्ह अभिमत^७ द
कानन करौ जनम भरि वासू । एहि तें अधिक न मोर सुपा

दो०—अंतरजामी रामुसिय, तुम्ह सरवग्य सुजान ।

जौं फुर कहहु त नाथ निज, कीजिअ वचनु प्रमान ॥२५७

१ नीति २ नाश करना ३ करती है ४ उद्ध्वन किया ५ राजा एक
जीवित होगये ६ इच्छित ।

तबचन सुनि देखि सनेह^१ सभासहित मुनि भयेउ विदेह ॥
 त-महां-महिमा जलरार्सा । मुनिमति ठाढ़ि तीरअबला^२ सी ॥
 चह पार जतनु हिय हेरा^३ । पावति नाव न वोहित बेरा^३ ॥
 उर कराहि को भरत बड़ाई । सरसी सीपि^४ कि सिंधु समाई ॥
 त मुनिहि मनभीतर भाए । सहित समाज राम पहि आए ॥
 भुप्रनामु करि दान्ह सुआसनु । बैठे सब सुनि मुनि-अनुसासनु ॥
 मुनिवरु वचन विचारी । देस-काल-अवसर-अनुहारी ॥
 मुनि राम सरवग्य सुजाना । धरम-नीति-गुन-ज्ञान-निधाना^५ ॥

श्लो०—सब के उर अंतर बसहु, जानहु भाउ कुभाउ ।

पुरजन-जननी-भरत-हित, होइ सो कहिअ उपाउ ॥२५८॥

भारत कहाहि विचारि न काऊ । सूझ जुआरिहि आपुन दाऊ^६ ॥
 मुनि मुनिवचन कहत रघुराऊ । नाथ तुम्हारेहि हाथ उपाऊ ॥
 कर हित रख राउरि राखे । आयसु किए मुदित फुर भाखे ॥
 म जो आयसु मो कहूँ होई । माथे मानि करौं सिख सोई ॥
 ते जेहि कहँ जस कहब गोसाई । सो सब भाँति घटिहि सेवकाई ॥
 मुनि राम सत्य तुम्ह भाखा । भरत-सनेह-विचारु न राखा ॥
 हे तैं कहाँ बहोरि बहोरी । भरत-भगति-बस भइ मति मोरी ॥
 रे जान भरत रुचि राखी । जो कीजिअ सो सुभ सिव साखी ॥

श्लो०—भरतविनय सादर सुनिअ, करिअ विचारु बहोरि ।

करब साधुमत लोकमत, नृपनय निगम निचोरि ॥२५९॥

अनुरागु भरत पर देखी । रामहृदय आनंदु विसेखी ॥
 रताहि धरम-धुरं धर जानी । निज सेवक तन मानस-वानी ॥
 गुर-आयसु-अनुकूला । वचन मंजु मृदु मंगलमूला ॥

१ सी २ विचार-किया ३ जहाज और वेड़ा ४ तालाव की सीप ५ घर
 शिव.७ साक्षी (गवाही)

नाथ-सपथ पितु-चरन-दोहाई । भयेउ न भुवन भरतसम
जे गुर - पद - अंबुज - अनुरागी । ते लोकहुँ वेदहुँ बड़भागी
राउर जा पर अस अनुरागू । को कहि सकै भरत कर भागू
लखि लघुबंधु बुद्धि सकुचाई । करत बदन पर भरतबढ़ाई
भरतु कहहि सोइ किएँ भलाई । अस कहि राम रहे अरगाई ।

दो०—तव मुनि बोले भरत सन, सब सँकोषु तजि तात ।

कृपासिंधु प्रियबंधु सन, कहहु हृदय कह वात ॥२६०॥

सुनि मुनिवचन रामरुख पाई । गुरु साहिव अनुकूल अघाई ।
लखि अपने सिर सबु छरु भारू । कहि न सकाहि कछु कराहि बिवा
पुलकि सरीर सभा भए ठाढ़े । नीरजनयन नेहजल बाढ़े
कहब मोर मुनिनाथ निवाहा । एहि तँ अधिक कहाँ मैं काहा
मैं जानौं निज नाथ सुभाऊ । अपराधिहु पर कोह न काऊ
मो पर कृपा सनेहु धिँखी । खेलत खुनिस न कबहुँ देखी
सिसुपन तँ परिहरेउ न संगू । कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू
मैं प्रभु कृपारीति जिय जोही । हारेहु खेत जितावाहि मोही

दो०—महँ सनेह-सकोच-वस, सनमुख कहे न वयन ।

दरसन तृपित न आजु लागि, पेम-पियासे नयन ॥२६१॥

विधि न सकेउ सहि मोर दुलारा । नीच वीचु जननी मिस पारा
यहउ कहत मोहि आजु न सोभा । अपनी समुझि साधु सुचि को भा
मातु मंद मैं साधु सुचाली । उर अस आनत कोटि कुचाली
फैरि कि कोदव^१ बालि सुसाली । मुकता प्रसव^२ कि संवुक^३ ताली^४
सपनेहु दोस कलेसु न काहू । मोर अभाग उदाधिअवगाहू

१ चुपहो २ अत्यंत ३ बौद्ध ४ निर्वाह किया ५ क्रोध ६ प्रतिहिंसा ७ जा
रु नहाना ८ हुआ ९ कोदो १० पदा हो ११ तालाब की सीप १२ गहरा समुद्र

बिनु समुभै जिन-अघ-परिपाकू^१ । जारिउँ जाय^२ जंननि कहि काकू^३ ॥
हृदय हेरि हारेउ सब ओरा । एकहि भाँति भलेहि भल मोरा ॥
गुर गोसाई साहिव सियरामू । लागत मोहि नाक परिनामू ॥

दो०—साधु-सभा गुर-प्रभु-निकट कहाँ सुथल सातिभाउ ।

प्रेम-प्रपंच कि भूठ फुर जानहि मुनि रघुराउ ॥२६२॥

भूपतिमरन-पेम पनु राखी । जननी कुमति जगत सब साखी ॥
देखि न जाहि विकल महतारी । जरहि दुसह जर पुर-नर-नारी ॥
महीं सकल-अनरथ कर सूला । सोसुनि समुभि सहिउँ सब सूला ॥
सुनि बनगवनु कीन्ह रघुनाथा । करि मुनिवेष लषन-सिय-साथा ॥
विन पानहिन्ह पयोदेहि पाएँ । संकरु साषि रहेउँ एहि घाएँ ।
बहुरि निहारि निषादसनेहू । कुलिस कठिन उर भयेउ न बेहू ॥
अब सवु आँखिन्ह देखेउँ आई । जिअत जीव जइ सबइ सहई^४ ॥
जिन्हहि निरखि मग साँपिनि बीछीं । तजहि विषमविष तामस तीछीं^५ ॥

दो०—तेइ रघुमंदनु लषनु सिय अनहित^६ लागे जाहि ।

तासु तनय तजि दुसह दुख दैव सहावै काहि ॥२६३॥

सुनि आति विकल भरत-बर-बानी । आरति^७ प्रीति-विनय-नय-सानी ॥
सोकमगन सब सभा खभारू^८ । मनहुँ कमलवन परेउ तुषारू ।
कहि अनेक विधि कथा पुरानी । भरतप्रबोधु कीन्ह मुनि ग्यानी ॥
बोले उचित बचन रघुमंदू । दिन-कर-कुल-कैरव-बन-चंदू ।
तात जायँ जिअ करहु गलानी । ईसअधीन जीवगति जानी ॥
तौनि काल तिभुवन मत मोरें । पुन्यसिलोक^९ तात तर^{१०} तोरें ॥
उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई । जाइ लोक-परलोक नसाई ॥

१ अपने पापों का फल २ व्यर्थ जलाया ३ बुराभला (व्यङ्ग) कह कर ४ छेद
५ जड़ जीव के कारण सभी सहना पड़ा ६ तेज, भयंकर ७ बुरे ८ दुख पूर्ण
९ व्याकुल १० पुण्यश्लोक ११ नीचे ।

दोषु देहि जननिहि जड़ तेई । जिन्ह गुर-साधु सभा नाहि से

दो०—मिटिहहि पाप प्रपंच^१ सब आखिल^२ अमंगल^३ भार ।

लोक-सुजसु परलोक-सुख सुमिरत नामु तुम्हार ॥२६४॥

कहाँ सुभाउ सत्य सिव साखी । भरत भूमि रह राउरि राखी
तात कुतरक करहु जनि जाँएँ । बैर पैम नाहिँ दुरैँ दुराँएँ
मुनिगन निकट विहँग मृग जाहीं । बाधक बधिक^४ बिलोकि पराहीं
हित अनहित पसु पंछिड जाना । मानुषतनु गुन-ग्यान-निधाना
तात तुम्हहिँ मैं जानौँ नाँके । करौँ काह असमंजस जी के
राखेउ राय सत्य मोहि त्यागी । तनु परिहरेउ प्रेमपन लागी
तासु बचन मेटत मन सोचू । तेहिँ तैँ अधिक तुम्हार सँकोचू
ता पर गुरमोहिँ आयसु दीन्हा । अवासि जो कहहुँ चहाँ सोइ कानि

दो०—मनु प्रसन्न करि सकुच ताजि कहहु करौँ सोइ आजु ।

सत्य-संध-रघुवर-बचन सुनि भा सुखी समाजु ॥

सुर-गन-सहित सभय^५ सुरराजू । सोचहिँ चाहत होन अकाजू
बनत उपाउ करत कहूँ नाहीं । रामसरन सब मे मन माहीं
बहुरि विचारि परसपर कहूँ । रघुपति भगत-भगति-बस अहहीं
सुधि करि अंबरीष, दुरवासाः । भे सुर, सुरपति निपट निरासा
सहे सुरन्ह बहु काल विपादा । नरहरि किए प्रगट प्रह्लादा
लगि लगि कान^६ कहाहिँ धुनि माथा । अब सुर-काज भरत के हाथा

१ माया २ सम्पूर्व ३ विघ्न ४ बड़किया इत्यादि ५ सभ-भय = डरा हुआ
* यह कथा पहिले था चुक्री है ६ काना फूँसी करना ।

न उपाउ न देखिय देवा । मानत राघु सु-सेवक-सेवा ॥
 य सपेम चुमिरहु सब भरतहि । निज-गुन-सील रामबस करतहि ॥
 १०—सुनि सुरमत सुरगुरु^१ कहेउ भल तुम्हार बड़भागु ।

सकल सु-अंगल-मूल जग भरत-चरन-अनुरागु ॥२६६॥
 तापति-नेवक-सेवकाई । कामधेनु-सय-सरिस लुहाई ॥
 रतभगति तुम्हरे मन आई । तजहु सोचु विधि बात वनाई ॥
 सु देवपति भरतप्रभाऊ । सहज-सुभाय-बिबस रघुराऊ ॥
 न थिर^२ करहु देव डरु नाहीं । भरतहि जानि रामपरिछा^३ ॥
 नि सुरगुर-सुर-संमत सोचू । अंतरजामी प्रभुहि संकोचू ॥
 तज सिर भार भरतु जिय जाना । करत कोटि विधि उर अनुमाना ॥
 करि विचार मन दीन्ही ठीका^४ । रामरजायसु आपन नीका^५ ॥
 नेजपन^६ तजि राखेउ पनु मोरा । छोहु सनेह कीन्ह नहि थोरा ॥
 दो०—कीन्ह अनुग्रह^७ अमित अति सब विधि सीतानाथ ।

करि प्रनामु बोले भरतु जोरि जलज-जुग-हाथ^८ ॥२६७॥
 कहौ कहावौ का अब स्वाभी । कृपा-अंबु-निधि अंतरजामी ॥
 गुर प्रसन्न साहिब अलुझला । मिठी मलिन मनकलापित सूला ॥
 अपडर डरेउँ न सोच समूले । रविहि न दोषु देव दिलि भूले ॥
 भार अभागु मातुकुटिलाई । विधि गति विषम कालकठिनाई ॥
 पाउँ रोपि सब मिलि मोहि घाला^९ । प्रनतपाल^{१०} पन आपन पाला ॥
 यह नइ रीति न राउरि होई । लोकरहु वेदविदित नहि गोई^{११} ॥
 जगु अनभल भल एरु गोसाई । कहिअ होइ भल कामु थलाई ॥
 उ देव-तरु-सरिस^{१२} लुभाऊ । सनमुख विमुख न काहुहि काऊ^{१३} ॥

१ देवताओं का गुरु (वृहरपति) २ (स्थिर) धीरज धरो ३ निश्चय किया
 ४ भलाई है ५ प्रण, पैज ६ कृपा ७ दोनों कमलरूपी हाथ में नष्ट किया ८ शर-
 यागत पालक ९ छिपी हुई १० कल्प वृक्ष के सदृश ११ कभी किसी के
 प्रतिकूल नहीं होता ।

दो०—जाइ निकट पहिचानि तरु छाँह समनि^१ सब सोच ।

माँगत अभिमत पाव जग राउ रंक भल पोच ॥२६८॥

लखि सब विधि-गुर-स्वामि-सनेह । मिटेउ छोभ^२ नहिं मन संदेह ॥
 अत्र करुनाकर कीजिअ सोई । जन हित प्रभुचित^३ छोम न होई ॥
 जो सेवकु साहिवाहिं सँकोची । निज हित चहे तासु मति पोची^४ ।
 सेवकहित साहिबसेवकाई । करै सकल सुख तोम विहाई^५ ।
 स्वारथु नाथ फिरै सबही का । किएँ रजाइ कोटि विधि नीका ॥
 यह स्वारथ-परमार्थ-सारू । सकल-सुकृत^६ फल सुगति-संगारू ॥
 देव एक दिनती सुनि योरी । उचित होइ तस करव बहोरी ॥
 तिलक समाजु साजि सधु आना । करिअ सुपाल प्रभु जाँ मन माना ॥

दो०—सानुज पठइअ मोहिं वन कीजिअ सर्वाहिं सनाथ ।

नतरु पेरिअहि पंधु दोउ नाथ चलौं मैं साथ ॥२६९॥

नतरु जाहिं वन तीनिउँ भाई । बहुरिअ सीयसहित ग्युगई ॥
 जेहि विधि प्रभु प्रसन्न मन होई । करुनासागर कीजिअ सोई ॥
 देव दीन्ह सब मोहि अमारू । मोरै नीति न धरम विचारू ॥
 कहाँ वचन सब स्वारथहेतू । रहत न आरत के दित चेतू ॥
 उतरु देइ सुनि स्वामिरजाई । सो सेवकु लखि लाज लजाई ॥
 अस मैं अवगुन-उदाधि-अगाधू^७ । स्वामि-सनेह सराहत^८ साथू ॥
 अत्र कृपाल मोहि सौ मत भावा । सकुच स्वामि मन जाइ न पावा ॥
 प्रभु-पद-सपथ कहाँ सतिभाऊ । जग-मंगल-हित एक उपाऊ ॥

दो०—प्रभु प्रसन्न मन सकुच ताजि, जो जेहि आयसु देव ।

सौ सिर धरि धरि करिहि सधु मिटिहि अनट अचरव^९ ॥२७०॥

१ नष्ट करने वाली है २ दुःख ३ आपके हृदय में ४ नीच ५ छोड़ कर ६ पुण्य
 ७ सुराहियों का अघाह समुद्र हैं न स्मरना करते हैं ८ अटल चलभन

भरतवचन सुचि सुनि सुर हरषे । साधु सराहि सुमन सुर वरषे ॥
 असमंजसवस अवधनिवासी । प्रमुदित^१ मन तापस-वनवासी ॥
 चुपहि रहे रघुनाथ सँकोची । प्रभुमति देखि सभा सब सोची ॥
 जनक-दूत तेहि अवसर आए । मुनि वसिष्ठ सुनि बेगि बोलाए ॥
 करि प्रनाम तिन्ह रामु निहारे । बेपु देखि भए निपट दुखारे^२ ॥
 दूतन्ह मुनिवर वृक्षी वाता । कहहु बिदेह भूप कुसलाता ॥
 सुनि सकुचाइ नाइ महि माथा । बोले चर वर^३ जोरे हाथा ॥
 वृक्षव राउर सादर साई । कुसलहेतु सो भयेउ गोसाई ॥

दो०—नाहि त कोसलनाथ के, साथ कुसल गइ नाथ ।

मिथिला^४ अवध बिलेपते, ऊगु सब भयेउ अनाथ ॥२७१॥

कोसलपति-गति^५ सुनि जनकौरा^६ । भे सब लोक सोकबस दौरा ॥
 तेहि देखे तेहि समय बिदेह । नामु सत्य अस लाग न केहू ॥
 एनि कुचालि सुनत नरपालहि । सूझ न कछु जस मनि विनु व्यालहि ॥
 भरतराज रघुवर-वन-बासू । भा मिथिलेसहि हृदय हराँसू^७ ॥
 नृप वृक्षे बुध-सचिव-समाजू । कहहु विचारि उचित का आजू ॥
 समुझि अवध असमंजस दोऊ । चलिअ किरहिअन कह कछु कोऊ ॥
 नृपहि धीर धरि हृदय बिचारी । पठए अवध चतुर चर^८ चारी ॥
 वृक्षि भरत सातिभाऊ कुभाऊ । आयेहु बेगि न होइ लखाऊ^९ ॥

दो०—गए अवध चर भरतगति, वृक्षि देख करतूति ।

चले चित्रकूटहि भरत, चार चले तिरहूति^{१०} ॥२७२॥

दूतन्ह आई भरत कै करनी । जनकसमाज जथामति वरनी ॥
 सुनि गुर परेजन सचिव महीपति । भे सब सौच सनेह त्रिकल अनि ॥

१ प्रसन्नचित्त २ अत्यन्त दुखी हुये ३ सुन्दर-दूत ४ जनकपुरी ५ राजा
 शरथ की गति ६ जनकपुरी के लोग ७ (हास) दुख न दूत ८ किसी के
 घात न हो ९ जनकपुरी ।

धरि थीरजु करि भरत बड़ाई । लिए सुभट साहनी बोलार् ।
 धर पुर देस राखि रखवारे । हय गय रथ बहु जान सँवारे ।
 दुधरी साधि चले ततकाला । किअ विश्रामु न मग महिपाला ।
 भोरहिं आजु नहाइ प्रयागा । चले जमुन उतरन सबु लागा ।
 खबरि लेन हम पठए नाथा । तिन्ह कहिअस महि नायेउमाथा ।
 साथ किरात छसातक दीन्है । मुनिबर तुरत बिदा चर कीन्है

दो०—सुनत जनक-आगवनु सबु, हरषेउ अवधसमाजु ।

रघुनंदनहिं सकाचु बड़, सोचबिषस सुरराजु ॥२७३॥

गरे गतानि कुटिल कैकेई । काहि कहै केहि दूपनु देई ।
 अस मन आनि मुदित नरनारी । भयेउ बहोरि रहब दिन चारी ।
 एहि प्रकार गते वासर सोऊ । प्रात नहान लाग सब कोऊ ।
 करि मज्जन पूजहिं नरनारी । गनपति गौरि तिपुरारि तमारी ।
 रमा-रमन-पद बंदि बहोरी । विनघाहिं अंजुलि अंचल जोरी ।
 राजा राम जानकी रानी । आनंदअवधि अवध रजधानी ।
 सुवस वसउ फिरि सहित समाजा । भरतहिं रामु करहु जुवराजा ।
 एहि सुखसुधा सींचि सब काहु । देव देहु जग-जीवन-लाहु ।

दो०—गुरसमाज भाइन्ह सहित, रामराजु पुर होउ ।

अछुत राम राजा अवध, मरिअ माँग सब कोउ ॥२७४॥

सुनि सनेहमथ पुर-जन-बानी । निंदहिं जोग बिरति मुनि ग्यानी ।
 एहि विधि नित्य करम करि पुरजन । रामहिं करहिं प्रनामु पुलकितन ।
 ऊँच नीच मध्यम नर नारी । लहहिं दरसु निज निज अनुहारी ।
 सावधान सवही सनमानहिं । सकल सराहत कृपानिधानहिं ।

१ सेनापति २ सवारियां ३ द्विघटिका मुहूर्त ४ संकोच में गलती है ५ दि-
 नीत गया ६ तिपुर+अरि = महादेव ७ तम+अरि = सूर्य ८ लक्ष्मी के स्वामी ।
 पद ९ वैराग्य १० अनुकूल ११ सुचितता से ।

करिकाइहि तैं रघुवरबानी । पालत नीति प्रीति पहिचानी ॥
 सील-सँकोच-सिंधु रघुराऊ । सुमुख सुलोचन सरल सुभाऊ ॥
 कहत राम-गुन-गन अनुरागे । सब निज भांग सराहन लागे ॥
 हम सम पुन्यपुंज जग थोरैं । जिन्हहिँ राम जानत करि मोरैं ॥

दो०—प्रेममगन तेहि समय सब, सुनि आवत मिथिलेसु ।

सहित सभा संभ्रम^१ उठेउ, रबि-कुल-कमल-दिनेसु^२ ॥२७५॥

इ-सचिव-गुर-पुरजन साथी । आगे गवनु कीन्ह रघुनाथा ॥
 रिबरु देखि जनकपति जबहीं । करि प्रनामु रथ त्यागेउ तबहीं ॥
 म - दरस-लालसा - उछाहू । पथश्रम^३ लेस^४ कलेसु न काहू ॥
 न तहँ जहँ रघुवरवैदेही । बिनु मन बन दुख सुख सुधि केही ॥
 आवत जनकु चले एहि भाँती । सहित समाज प्रेम मति माँती^५ ॥
 एप निकट देखि अनुरागे । सादर मिलन परसपर लागे ॥
 गे जनक मुनि जन पद-बंदन । रिषिन्ह^६ प्रनामु कीन्ह रघुनंदन ॥
 इन्ह सहित राम मिलि राजहिँ । चले लवाइ समेत समाजहिँ ॥

दो०—आश्रम-सागर साँतरस, पूरन पावन पाथ ।

सेन मनहुँ करुना-सरित, लिए जाहिँ रघुनाथ ॥२७६॥

धोरति^७ ग्यान विराग करारे । बचन ससोक मिलत नद नारे ॥
 सोच उसास-समीर तरंगी^८ । धीरज-तट-तरु-बर^९ कर भंगा ॥
 बिषम विषाद तोरावति^{१०} धारा । भय भ्रम भँवर-अवर्त^{११} अपारा ॥
 केवट बुध विद्या बडि नावा । सकहिँ न खेइ एक नहिँ आवा ॥
 बनचर कोल किरात बिचारे । थके बिलोकि पथिक^{१२} हिय हारे^{१३} ॥

१ ससन्देह, घबड़ा कर २ सूर्यवंशरूपी कमल के लिये सूर्य के समान

३ रास्ते से उत्पन्न हुआ श्रम ४ धोड़ा ५ प्रेम प्रे मतवाली बुद्धि । ६ ऋषियों को

७ दुबोती जाती ८ पवन से उठी हुई लहरें ९ किनारे पर के सुन्दर वृक्ष

१० तीव्रण ११ भँवर १२ राहगीर १३ हृदय में हार गये ।

*आश्रम-उदधि^१ मिली जब जाई । मनहुँ उठेउ अंबुधि अकुलाई ॥
सोक विकल दोउ राज समाजा । रहा न ग्यानु न धीरजु लाजा ॥
भूप-रूप-गुन-सील सराही । रावहिँ सोकसिंधु अवगाही^२ ॥

छंद०—अवगाहि सोक समुद्र सोचहिँ नारि नर व्याकुल महा ।
दौ दोष सकल सरोप बोलीहिँ वाम विधि कीन्हो कहा ॥
सुर सिद्ध तापस जोगि-जन मुनि देखि दसा विदेह की ।
तुलसी न समरथु कोउ जो तरि सकै सरित सनेह की ॥

सो०—किण अमित^३ उपदेस जहँ तहँ लोगन्ह मुनिबरन्ह ।
धीरजु धरिअ नरेस कहेउ वसिष्ठ विदेहसन ॥२७७॥

जासु ग्यानु रवि भवनिसि^४ नासा । वचन किरन-मुनि-कमल-विकीस
तेहि कि मोह ममता निअरार्इ^५ । यह सिय-राम - सनेह बड़ाई ॥
विपयी साधक सिद्ध सयाने । त्रिविध जीव जग वेद वखाने ॥
राम-सनेह-सरस^६ मन जासू । साधुसभा यह आदर तासू ॥
सोह न राम पेम विनु ग्यानू । किरनधार^७ विनु जिमि जल-जानू^८ ॥
मुनि बहु विधि विदेह समुभाए । रामघाट सब लोग नहाए ॥
सकल-सोक-संकुल नरनारी । सो वासुह वीतेउ विनु वारी ॥
पसु खग मृगन्ह न कीन्ह अहारू । प्रिय परिजन कर कवन विचारू ॥

दो०—दोउ समाज निमिराज, रघुराज नहाने प्रात ।

बैठे सब वट विटप तर, मन मलीन कसगात^९ ॥२७८॥

१ जलवि समुद्र २ डूब रहे है, ३ बहुत ४ ससार रूपी रात्रि ५ आश्रमरूप समुद्र जो शंतरस रूपी जल से भरा हुआ था, सेनारूप नदी के मिलने से अशात होगया अर्थात् शीर हो गया ६ पास जा सकती है ६ राम के स्नेह-जल से भरा ७ हुआ मल्लाह, ८ नाव, जहाज ९ दुबले ।

महिसुर दसरथ-पुर-वासी । जे मिथिला-पति-नगर-निवासी ॥
 सबस-गुर जनक पुरोधाय । जिन्ह जगु मगु परमारथु सोधा ॥
 गे कहन उपदेस अनेका । सहित धरम नय विरति विवेका ॥
 तौसिक कहि कहि कथा पुरानी । समुझाई सब सभा सुवानी ॥
 तब रघुनाथ कौसकहिं कहेऊ । नाथ कालि जल-विनु सथ रहेऊ ॥
 मुनि कह उचित कहत रघुराई । गयेउ वीति दिन पहर अढ़ाई ॥
 रिषि-रुख लाखि कह तिरहुतिराजू । इहाँ उचित नहिं असन अनाजू ॥
 कहा भूप भलि सबहि सुहाना । पाइ रजायसु चले नहाना ॥

दो०—तेहि अवसर फल फूल दल, मूल अनेक प्रकार ।

लै आए वनचर विपुल, भरि भरि काँवरि भार ॥२७६॥

कामद^१ भे गिरि रामप्रसादा । अवलोकत अपहरत^२ विषादा ॥
 सर सरिता वन भूमि विभागा । जनु उमगत आनंद अनुरागा ॥
 बलि बिटप सब सफल सफूला । बोलत खग मृम अलि^३ अनुकूला^४ ॥
 तेहि अवसर वन अधिक उछाहू । त्रिविध समीर^५ सुखद सब काहू ॥
 जाइ न वरनि मनोहरताई । जनु महि करति जनक पहुनाई ॥
 तब सब लोग नडाइ नहाई । राम जनक मुनि-आयसु पाई ॥
 देखि देखि तरुवर अनुरागे । जहँ तहँ पुरजन उतरन लागे ॥
 दल फल मूल कंद विधि नाना । पावन^६ सुंदर सुधासमाना ॥

दो०—साहर सब कहँ रामगुरु पठए भरि भरि भार ।

पूजि पितर सुर अतिथि गुर लगे करन फलहार^७ ॥२८०॥

एहि विधि वासर वीते चारी । रामु निरखि नरनारि सुखारी ॥
 दुहुँ समाज असि रुचि मन माहीं । विनु सियराम फिरब भल नाहीं ॥
 सीताराम संग वनवासू । कोटि अमर-पुर-सरिस सुपासू ॥

१ जनक के पुरोहित २ अन्न का भोजन ३ इच्छा पूर्ण करने वाला ४ दूर कर देता है ५ भौरा ६ सुहावने ७ हवा ८ पवित्र ९ फल खाने लगे ।

परिहरि लपन-राम-वैदेही । जेहि घरु भाव बाम विधि तेही ॥
दाहिन दइउ होइ जव सबहीं । रामसमीप वासिअ बन तवहीं ॥
मंदाकिनिमज्जनु तिहुँ काला । रामदरसु मुद-मंगल-माला ॥
अटनु^१ राम गिरिबन तापस थल^२ । असनु अमियसम कंदमूल फल ॥
सुखसमेत संवत^३ दुइ-साता^४ । पलसम होहिं न जनिअहिं जाता ॥

दो०—एहि सुख जोग न लोग सब कहहिं कहाँ अस भागु ।

सहज सुभाय समाज दुहुँ, राम-चरन अनुरागु ॥ २८ ॥

एहि विधि सकल मनोरथ करहीं । वचन सप्रेम सुनत मन हरहीं ॥
सीयमातु तेहि समय पठाई । दासी देखि सुअवसर आरि ॥
सावकास सुनि सब सिय सासू । आयेउ जनक-राज-रनिवासू ॥
कौसल्या सादर सननाली । आसन दिए समय सम आनी ॥
सीलु सनेह सकल दुहुँ ओरा । द्रवहिं देखि सुनि कुलिस कठोरा ॥
पुलक सिथिल तनु थारि विलोचनामहिनख लिखन लगीं सब सोचब ॥
सब सिय-राम-प्रांति फिस मूरति । जनु करुना बहु वेप बिसूरति ॥
सीयमातु कह विधि बुधि याँकी^५ । जो पयफेनु^६ फार पवि-टाँकी^७ ॥

दो०—सुनिअ सुधा देखिअहि गरल, सब करतूति कराल ।

जहँ तहँ काक उलूक^८ बक, मानस सकृत^९ मराल ॥ २९ ॥

सुनि ससोच कह देवि सुमित्रा । विधिगति षडि विपरीत विचित्रा ।
जो सृजि पालै हरै बहोरी । बाल-केलि-सम^{१०} विधिमति भोरी ।
कौसल्या कह दोसु न काहू । करमबिवस दुख सुख छति लाहू^{११} ।
कठिन करमगति जान विधाता । जो सुभ असुभ सकल फलदाता ।
ईस-रजाइ सीस सबहीं के । उतपति थिति^{१२} लय^{१३} विपहु अर्मा^{१४} ॥

१ घूमना २ तपस्वियों के स्थानों पर ३ वर्ष ४ चौदह ५ कठोर बच
६ रंजीदा ७ अजीव ८ दूध के भाग ९ बज् की टाँकी से १० उदलू ११ अकेले
एक १२ बालकों के खेल के सदृश १३ लाम हानि १४ (स्थिति) १५ नाम ।

देवि मोहवस सोचिअ वादी । विधिप्रपंच अस अचल-अनादी ॥
भूपति जियव मरव उर आनी । सोचिअ सखि लखि निज-हित-हानी ॥
सीयमातु कह सत्य सुबानी । सुकृतीअवधि अवधि पति-रानी ॥

दो०—लषणु रामु सिय जाहु बन, भल परिनाम न पोचु ।
गहवरि^२ हिय कह कौसिला, मोहि भरत कर सोचु ॥२८३॥

रसप्रसाद असीस तुम्हारी । सुत-सुतवधू देव-सरि-बारी ॥
रामसपथ मै कीन्हि न काऊ । सो करि कहाँ सखी सतिभाऊ ॥
भरत सील गुन विनय बडाई । भायप^३ भगति भरोस भलाई ॥
कहत सारदहु कर मति हीचे^४ । सागर सीप कि जाहि उलीचे ॥
जानौ सदा भरत कुलदीपा । बार बार मोहि कहेउ महीपा ॥
कसे कनक मनि पारिषि पाए । पुरुष परिषअहि समय सुभाए ॥
अनुचित आजु कहष अस मोरा । सोक सनेह सयानप^५ थोरा ॥
मुनि सुरसरि-सम पावनि बानी । भई सनेह-विकल सब रानी ॥

दो०—कौसल्या कह धीर धरि, सुनहु देवि मिथिलेसि ।
को विवेक-निधि-वल्लभहि^६, तुम्हहिं सकै उपदेसि ॥२८४॥

रानि राय सन अवसरु पाई । अपनी भाँति कहव समुभाई ॥
रखिअहि लपन भरत गवनहि बन । जौ यह मत मानै महीपमन ॥
तौ भल जतन करव सुबिचारी । मोरे सोच भरत कर भारी ॥
गूढ़-सनेह भरत मन माहीं । रहै नीक मोहि लागत नाहीं ॥
लखि सुभाउ मुनि सरल सुबानी । सब भई मगन करुनरस रानी ॥
मम प्रसून अरि धन्य धन्य धुनि । सिधिल सनेह-सिद्ध जोगी मुनि ॥
सबु रनिवासु विधाकि^७ लखि रहेऊ । तव धरि धीर सुमित्रा कहेऊ ॥

१ अ+चल (स्थिर) अन्+आदि = जिसका आरम्भ न हो २ गद्गद हृदय से
३ भावस्नेह ४ हिच किचाती है ५ चतुराई ६ विवेक की निधि; जनक; उनकी
प्रियतमा ७ शिक्षित, चेतनारहित ।

देवि दंडजुग जामिनि वीती । राममातु सुनि उठी संप्रीती ।

दो०—वेगि पाउ धारिअ थलहिं, कह सनेह सतिभाय ।

हमरे तौ श्रव ईसगति, कै मिथिलेस सहाय ॥२२५॥

लखि सनेह सुनि वचन बिनीता । जनकप्रिया गहि पाय पुनीता ।

देवि उचित असि विनय तुम्हारी । दशरथ-घरनि^१ राम-महतारी ।

प्रभु अपने नीचहु आदरहीं । अग्नि धूमगिरि सिरतिनु धरहीं ।

सेवक राउ करम-मन-बानी । सदा सहाय महेस भवानी ।

रउरे^२ अंग जोगु जग को है । दीप सहाय कि दिनकर^३ सोहै ।

रामु जाइ वन करि सुरकाजू । अचल श्रवधपुर करिइहिं राजू ।

अमर नाग नर राम-वाहु-बल । सुख वसिहहिं अपने अपने थले ।

यह सब जागवलिक कहि राखा । देवि न होइ मुधा^४ सुनि भाखा ।

दो०—अस कहि पग परि पेम श्रति, सियहित विनय सुनाइ ।

सियसमेत सियमातु तव, चली सुआयसु पाइ ॥२२६॥

प्रिय परिजनहिं मिली वैदेही । जो जेहि जोगु भाँति तेहि तेही ।

तापसवेष जानकी देखी । भा सद्यु विकल विषाद विसेखी ।

जनक राम-गुरु-आयसु पाई । चले थलहिं सिय देखी आई ।

लीन्हि लाइ उर जनक जानकी । पाहुनि पावन पेम प्रान की ।

उर उमगेउ अंबुधि अनुरागू । भयेउ भूपमनु मनहुँ पयागू ।

सियसनेह वटु^५ वाढ़त जोहा । तापर राम-पेम-सिसु सांहा^६ ।

१ दशरथ की रानी २ आपके ३ दिन+कर सूर्य ४ असत्य ५ वृक्ष

* जब महाप्रलय होती है तो समुद्र उमड़ कर सब जगह जल ही जल का देते है—पृथ्वी उसमें डूब जाती है—प्रयाग का अखैवट बढकर नहीं डूबता । उस बट के पत्ते पर ईश्वर बालरूप धर के रहता है—जनक के हृदय पर यही उपम घटाई है । अर्थात् अनुराग समुद्र उमड़ा, राजा का मन प्रयाग, उसमें सीता का स्नेह वट और राम-प्रेम बालमुकन्द हुआ ।

रजीवी-मुनि^१ ग्यान विकल जनु । वृद्ध लहेउ बालअवलंबनु^२ ॥
ह मगन मति नहिं विदेह की । महिमा^३ सिय रघुबर-सनेह की ॥
०—सिय पितु-मातु-सनेह-बस, विकल न सकी संभारि ।

धरनिमुता धीरजु धरेउ, समउ सुधरमु विचारि ॥२८७॥
पसवेष जनक सिय देखी । भयेउ पेमु परितोषु विसेषी ॥
त्रि पवित्र किए कुल दोऊ । सुजस धवल^४ जगु कह सब कौऊ ॥
मति सुरसरि कीरतिसरि तोरी । गवनु कीन्ह बिधि अंडकरोरी ॥
ग अवनिथल तीन बड़ेरे* । एहि किए साधु समाज घनेरे ॥
पेतु कह सत्य सनेह सुबानी । सीय सकुच महँ मनहुँ समानी ॥
मुनि पितु मातु लीन्हि उर लाई । सिख आलिष हित दीन्हि सुहाई ॥
कहति न सीय सकुचि मन मारीं । इहाँ पसव रजनी भल नारीं ॥
लिखि रख रानि जनायेउ राऊ । हृदय सराहत सीलु सुभाऊ ॥

दी०—बार बार मिलि भेंटि सिय, विदा कीन्हि सनमानि ।
कही समय सिर भरतगति, रानि सुबानि सयानि ॥२८८॥
मुनि भूपाल भरत व्यवहारू । सोन सुगंध सुधा ससिसारू ॥
मुद सजल नयन पुलके तन । सुजसु सराहन लगे मुदित मन ॥
सावधान सुनु सुमुखि सुलोचनि । भरतकथा-भव-बंध^५-विमोचनि ॥
धरम राजनय ब्रह्मविचारू । इहाँ अधामति मोर प्रचारू ॥
सो मति मोर भरत महिमारीं । कहै काह छलि छुअत न छारीं ॥

* एक समय मार्कण्डेय ऋषि ने भगवान् से बर्दान माँगा कि मुझे अपनी माया दिखा दो । तप करते समय ऋषि देखते हैं कि ससार पानी में डूबता जाता और थोड़ी देर में जल के सिवाय कुछ दिखाई ही नहीं देता था । उसी में बहते हुए ऋषि ने अक्षय वट पर बालमुकुन्द का आश्रय पाया थोड़ी देर में माया दूर हुई ।
१ मार्कण्डेय २ बालमुकुन्द का सहारा ३ प्रभुता ४ स्वत उज्वल ५ संसार के कथन (आवागवन इत्यादि) * गंगापर हरद्वार, प्रयाग और समुद्रसंगम तीन बड़े स्थान हैं ।

सोक* कनकलोचन^१ मतिछोनी^२ । हरी विमल गुन-गन जग जोनी^३ ।
 भरतविवेक बराह विसाला । अनायास उधरी तेहि काला ।
 करि प्रनामु सब कहँ कर जोरे । राम राउ गुरु साधु निहोरे ।
 छमव आजु अति अनुचित मोरा । कहौ बदन मृदु बचन कठोरा ॥
 हिय सुमिरी सारदा सुहाई । मानल तँ मुखपंकज आई ॥
 विमल-विवेक-धरम-नय - सारती । भरत भारती^३ मंजु मराली ।

दो०—निरखि विवेक विलोचनन्हि, सिधिल-सनेह समाजु ।

करि प्रनामु बोले भरतु, सुमिरि सीय रघुराजु ॥२६८॥

प्रभु पितु मातु सुहृद गुर स्वामी । पूज्य परमहित अंतरजामी ।
 सरल सुसाहिवु सील-निधानू । प्रनतपाल सर्वग्य सुजानू ॥
 समरथ सरनागत हितकारी । गुनगाहकु अवगुन अघ-हारी ॥
 स्वामि गोसाइंहि सरिस गोसाईं । मोहि समान मैं साँई दोहाई ।
 प्रभु-पितु-वचन मोहबस पेली^४ । आयेउँ इहाँ समाज सकेली ।
 जग भल ढोच ऊँच अरु नीचू । अमिअ अमरपद, माहुर मीचू ।
 रामरजाइ मेद मन माहीं । देखा सुना कतहुँ कोउ नाहीं ।
 सो मैं सब विधि कीन्हि ढिठाई । प्रभु मानी सनेह सेवकाई ।

दो०—रूपा भलाई आपनी, नाथ कीन्ह भल मोर ।

दूपन भे भूपनसरिस, सुजसु चारु चहुँ ओर ॥२६९॥

राउरि रीति सुवानि बढ़ाई । जगत विदित निगनागम गाई ।
 क्रूर कुट्टिता खल कुमति कलंकी । नीच निलील^५ निरीस^६ निसंकी^७ ।

१ (कनक-लोचन) हिरण्याक्ष २ धरती ३ वाणी ४ दलघन ५ अना ६ निहरी ७ शील रहित ।

* मृष्टि के आदि में हिरण्याक्ष दैत्य ने इल के घमंड में अपने साथ लड़ने वाला स्रोतने २ पृथ्वी को पाताल में रख दिया । इधर ब्रह्मा ने निराधार सृष्टि देख कर विष्णु भगवान् से प्रार्थना की । विष्णु बाराह रूप धर कर गये और उसे मार कर पृथ्वी को सौदा लाये ।

भरत-प्रीति-नति विनय-वृद्धाई । सुनत सुखद परनत, कौटिल्याई ॥
 ज्ञासु विलोकि भगति लवलेखू^१ । प्रेममगन मुनिगन मिथिलेखू ॥
 महिमा तासु कहै किमि तुलसी । भगति सुभाय सुमति हिय हुलसी ॥
 प्रापु छोटि महिमा पड़ि जानी । कविकुल कानि^२ मानि सकुचानी ॥
 कहिन सकति गुन खचि अधिकारी । मतिगति बाल-वचन की नारी ॥

दो०—भरत-विमल-जसु विमल विधु, सुमति चकोर-कुमारि ।

उदित विमल जनहृदय नभ, एकटक रही निहारि ॥ ३०४ ॥

भरत-सुभाउ न सुगम निगमहूँ । लघुमति चापलता^३ कवि छुमहूँ ॥
 कहत सुनत सतिभाउ भरत को । सीय-राम पद होइ न रत को ॥
 सुमिरत भरतीहि प्रेमु राम को । जेहि नसुलभु तेहि सरिल बाम को ॥
 देखि दयालु दसा सबही की । राम सुजान जानि जन जी की ॥
 धरमधुरीन धीर जयनागर । सत्य-सनेह-लील-सुख-सागर ॥
 देसु कालु लखि समउ समाजू । नीति-प्रीति-पालक रघुराजू ॥
 बोले वचन वानि सरवसु ले^४ । हित परिनाम सुनत ससिरसु^५ ले ॥
 तात भरत तुम्ह धरम धुरीना । लोक-बेद - विद^६ परमप्रवीना ॥

दो०—करम वचन मानल^७ विमल, तुम समान तुम्ह तात ।

गुरसमाज लघु-बंधु-गुन, कुसमय किमि कहि जात ॥ ३०५ ॥

जानहु तात तरनि-कुल-रीती । सत्यसंध पितु - कीरति प्रीती ॥

उदासीन हित अनहित^१ मन की ॥

१ सोर परम-हित धरजू ॥

२ कहाँ अवसर अनुसारा ॥

३ कृपा सँभारी ॥

४ शास्त्र और

समान अर्थात्

प्रभु-पद-कमल गहे अकुलार्द्र । समष्ट सनेहु न सो कहि जाई ॥
 कृपासिंधु सनमानि सुवानी । बैठाए सर्वाप गहि पानी ॥
 भरतविनय सुनि देखि सुभाऊ । सिथिल सनेह सभा रघुराऊ ॥

छंद—रघुराउ सिथिल सनेहु सांधु समाज मुनि मिथिलाधनी ।
 मन महुँ सरसहत भरत भायप भगति की महिमा घनी ॥
 भरतहिँ प्रसंसत विबुध वरपत सुमन मानस-मलिन^१ से ।
 तुलसी विकल सब लोग सुनि सकुचे निसागम-नलिन^२ से ॥

—देखि दुखारी दीन दुहुँ समाज नरनारि सब ।

मघवाँ महामलीन मुए मारि मंगल चहत ॥३०२॥

कपट-कुचालि-सीवै सुरराजू । पर-शकाज-प्रिय आपन काजू ॥
 काकसमान पाक-रिपु-रीतीते । छली मलीन कतहुँ न प्रतीती ॥
 प्रथम कुमत करि कपटु लँकेला । सो उचाहुँ सबके सिर मेला ॥
 सुरमाया सब लोग विमोहे^३ । रामशेम अतिसय न विछोहे^४ ॥
 भए उचाटवस मन थिर नाहीं । छुन बन रुचि, छुन लदन सुहाहीं ॥
 दुविध^५ मनोगति प्रजा दुखारी । सरित-सिंधु-संगम जनु थारी ॥
 दुहित कतहुँ परितोषु न लहहीं । एक एक सन मरनु न कहहीं ॥
 लखि हिय हँसि कह कृपालिधानू । सरिस स्वान मघवान जुवानू ॥

दो०—भरतु जनकु मुनिजन सखिब, सांधु सचेत विहाइ ।

लागि देउमाया सबहिँ, जथाजोगु जनु पाइ ॥३०३॥

कृपासिंधु लखि लोग दुखारे । निजसनेह सुर-पति-छल भारे ॥
 सभा राउ गुर भहिसुर मंशी । भरतभगति सब कै मति जंजी ॥
 रामहिँ चितवत चित्र लिखे से । सकुचता बोलत वचन सिखे से ॥

१ कपटी मन से २ रात्रि-आने पर कमल से ३ पाक राक्षस का बैरी
 इन्द्र ४ मोहित किया ५ दूर हुए दुहित, ६ दुविधा ।

नतरु प्रजा पुरजन परिवारु । हमहिं सहित सबु होत खुआरु ॥
जौ विनु श्रवसर अथव दिनेसू १ । जग केहि कहहु न होइ कलेसू ॥
तस उतपातु तात विधि कीन्हा । मुनि मिथिलेसु राखि सबु लीन्हा ॥

दो०—राजकाज सब लाज पति, धरम धरनि धन धाम ।

गुरप्रभाउ पालिहि सर्वाहि, भल होइहि परिनाम ॥३०६॥

सहित समाज तुम्हार हमारा । घर बन गुरप्रसाद रखवारा ॥
मातु-पिता-गुरु-स्वामि निदेसू । सकलधरम धरनोधरु सेसू ॥
सो तुम्ह करहु करावहु मोहू । तात तरनि-कुल-पालक होहू ॥
साधक एक सकल सिधि देनी । कीरति सुगति भूतिमय-वेनी २ ॥
सो विचारि सहि संकट भारी । करहु प्रजा परिवार सुखारी ॥
घाँटी विपति खवहि मोहि भाई । तुमहिं अदधि भरि वडि कठिनाई ॥
जानि तुम्हहिं सृष्टु कइहुँ फठोरा । कुसमय तात न अनुचित मोरा ॥
होहि कुठाँय ४ सुबंधु सहाये । ओढ़ियहि ५ हाथ अस्निहु ६ के घाये ॥

दा०—सेवक कर पद नयन से, मुख सो साहिबु होइ ।

तुलसी प्रीति की रीति सुनि, सुकवि सराहीह सोइ ॥३०७॥

सभा सकल सुनि रघुशर वानी । प्रेम-पयोधि आमिश्र ७ जनु सानी ॥
सिथिल समाजु सनेह समार्थी । देखि दसा छुप सारद सार्थी ॥
भरतहिं भयेउ परम संतोषू । सनमुख स्वामि त्रिमुख दुखु दोषू ॥
मुखु प्रसन्न मन मिटा विषादू । भा' जनु गूंगेहि गिरय-प्रसादू ८ ॥
कीन्ह सज्जम प्रनाम बहोरी । बोले पानिपंकरुह ९ जोरी ॥
नाथ भयेउ सुख साथ गण को । लहेउँ ताहु जग जनमु भये को ॥
अथ कृपाल जस आयसु होई । करौँ सीस धरि सादर सोई ॥

१ नष्टी पलीत २ सूर्य छिप गया ३ ऐश्वर्यरपी त्रिवेणी ४ कुसमय पर ५ आगे बढ़ते हैं (वचने की कोशिश करने हैं) ६ बज् ७ प्रेमरूपी अमृत के समुद्र में ८ सरस्वती की कृपा होगई, बोलने लगा ९ कमलरपी हाथ १० बज् के पाव ।

सो अबल्य देउ मोहिं देई । अबधि-पारु-पावौं जेहि सेई ॥
दो०—देव देवअभिषेक हित, गुर अनुसासन पाइ ।

आनेउँ सब तीरथसलिलु तेहि कहँ काह रजाइ ॥
एकु मनोरथ बड़ मन माहीं । सभय संकोच जात कहि नाहीं ॥
तहहु तात प्रभुआयसु पाई । दोले वानि सनेइ सुहाई ॥
चित्रकूट सुचि थल तीरथ वन । खग मृग सरि सर निर्भर^२ गिरिगन ॥
प्रभु पद-अंकित^३ अवनि विसेखा । आयसु होइ त आयौं देखी ॥
अवलि अत्रि आयसु सिर धरहू । तात विगत भय कानन चरहू ॥
मुनिप्रसादु वन मंगलदाता । पावन परम सुहावन भ्राता ॥
रिपिनायकू जहँ आयसु देही । राखेहु तीरथुजलु थल तेही ॥
मुनि प्रभु-वचन भरत सुख पावा । मुनि-पद-कमल मुदित सिरुनावा ॥
दो०—भरत राम-संवाद सुनि, सकल-सुमंगल-मूल ।

सुर स्वारथी सराहि कुल, वरषत सुर-तरु-फूल ॥ ३०६ ॥
धन्य भरत जय राम गोसाई । कहत देव हरषत वरिआई ॥
मुनि मिथिलेस लभा सब काहू । भरत-वचन सुनि भयेउ उछाहू ॥
भरत-राम-गुन-आम^४ सनेहू । पुलकि प्रसंसत राउ विदेहू ॥
सेवक स्वामिं सुभाउ सुहावन । नेमु पेमु अति पावन पावन ॥
मतिअनुसार सराहन लागे । सचिव सभासद सब अनुरागे ॥
सुनि सुनि राम-भरत-संवादू । दुहँ समाज हिय हरषु बिषादू ॥
राममातु दुखु-सुखु-सम जानी । कहि गुन राम प्रबोधी रानी ॥
एक कहहिं रघुवीर बड़ाई । एक सराहत भरतभलाई ॥

दो०—अत्रि कहेउ तब भरत सन, सैलसमीप सुकूप ।
राखिअ तीरथतोय तहँ, पावन अमिअ अनूप ॥ ३१० ॥
भरत अत्रिअनुसारान पाई । जलभाजन सब दिए चलार्ह ॥

१ सेवा करके २ भ्ररना ३ आपके चरण-चिह जिस पर हैं ४ वि
५ गुण-समूह ६ भेज दिया ।

सानुज आपु अत्रि मुनि साधू । सहित गण जहँ कूप अगाधू ॥
 पावन पाथ पुन्य - थल रीखा । प्रमुदित प्रेम अत्रि अस भाखा ॥
 तात अनादि-सिद्ध^१ थल पदू । लोपेउ काल विदित नहिँ केहू^२ ॥
 तव सेवकन्ह सरस थलु देखा । कीन्ह सुजल हित कूप विसेखा ॥
 विधिवल भयेउ विस्व उपकारू । सुनम अगम अति धरम-विचारू ॥
 भरतकूप अय कहिहहिँ लोगा । अति पावन तीरथ जलजोगा ॥
 प्रेम सनेम निमज्जते प्राणी । होइहिँ विमल करम मन बानी ॥

दो०—कहत कूप-महिँमा सकल, गण जहाँ रघुराउ ।

अत्रि सुनायेउ रघुवरहिँ, तीरथ-पुन्य-प्रभाउ ॥३११॥

कहत धरम इतिहास संप्रीती । भयेउ भोर निसि सो सुख वीती ॥
 नित्य निदाहि भरतु दोउ भाई । राम - अत्रि - गुर - आयसु पाई ॥
 सहित समाज साज सब सादे । चले राम वन - अटन^३ पयादे ॥
 कोमल चरन चलत विनुपनहीं । भइ मृदु भूमि सकुचि मन मनहीं ॥
 कुल कंठरू काँकरी कुराई^४ । केटुक^५ कठोर कुवस्तु दुराई ॥
 महि मंजुन मृदु मारग कीन्हे । बहत समीर त्रिविध सुख लीन्हे ॥
 सुमन वरपि सुर घन करि छाँहीं । विटप फूलि फल तन मृदुताहीं^६ ॥
 मृग विलोकि खग बोले सुवानी । सेवहिँ सकल रामप्रिय जानी ॥

दो०—सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहु,^७ राम कहत जमुहात ।

राम-प्राण-प्रिय भरत कहँ, यह न होइ यहि बात ॥३१२॥

एहि विधि भरतु फिरत वन बाँहीं । नेमु प्रेमु लाखि मुनि सकुचाहीं ॥
 पुन्य जलाशय भूमि विभागा । खग मृग तरु तन गिरि वन बागा ॥
 चारु विचित्र पंचित्र विसेखा । वृक्षत भरतु दिव्य सब देखी ॥
 मुनि मन तुदित कहत शिपिराऊ । हेतु नाम गुन पुन्य प्रभाऊ ॥

१ अन्न + धादि (जिसके आदि का पता नहीं) सिद्धि २ किसी को ३ वन में
 घूमना ४ ठंड ५ कढ़वी ६ नर्म होने की ७ साधारण ।

तहुँ निमज्जन^१, कतहुँ प्रनामा । कतहुँ विलोकत मन अभिरामा^२ ॥
 तहुँ बैठि मुनिआयेसु पाई । सुमिरत सीय सहित दोउ भाई ॥
 खि सुभाउ सनेहु सुसेवा । देहिं असीस मुदित वन-देवा ॥
 तरहिं गए दिनु पहर अढ़ाई । प्रभु-पद कमल विलोकहिं आई ॥
 दो०—देखे थल तीरथ सकल, भरत पाँच दिन माँझ ।

कहतें सुनतें हरिहर सुजलु, गयेउ दिवसु भइ साँझ ॥३१३॥

रि न्हाइ सब जुरा समाजू । भरत भूमिसुर तिरहुति-राजू ॥
 ल दिन आजु जान मन माहीं । रासु कृपाल कहत सकुचार्ही ॥
 रे-नृप-भरत सभा अवलोकी^३ । सकुचिराम फिरि अबनि विलोकी ॥
 गिले सराहि सभा सब सोची । कहुँ न राम जम स्वामि लँकोची ॥
 रित सुजान रामरुख देखी । उठि सपेम धरि धीर विसेखी ॥
 रि दंडवत कहत कर जोरी । राखी नाथ सकल रुचि मोरी ॥
 मोहि लागि सबहि लहेउ संतापू^४ । बहुत भाँति दुखु पावा आपू ॥
 ख गोसाँई मोहि देउ रजाई । सेवौ अवध अवधि भरि जाई ॥
 दो०—जैहि उपाय पुनि पायँ जनु, देखै दीनदयाल ।

सो सिख देखै अवधि लागि कोसलपाल कृपाल ॥३१४॥

रजन परिजन प्रजा गोसाँई । सब सुचि सरल सनेह समाई ॥
 उर वादि^५ भल भग दुख-दाह । प्रभु विनु वादि परम-पद-लाह ॥
 वामि सुजातु जानि सब ही की । रुचि लालसा रहनिजन जी की ॥
 नतपालु पालहिं सब काह । देव दुहँ दिसि ओर निवाह ॥
 स मोहि सब विधि भूरि भरोसो । किए विचारन सोच खरो सो^६ ॥
 मारति मोर नाथ कर छोह । दुहँ मिलि कीन्ह-ढाँठ-हाँठ-मोह^७ ॥
 ह बड़ दोष दूरि करि स्वामी । तजि लकोच सिखइअ अनुगामी ॥

१ स्नान करते हैं २ सुन्दर ३ देखी ४ दुःख ५ आपका कहा कर ६ सच्चा,
 दासा ७ मुझको दरबस ढीठ बना दिया (हठि का पाठान्तर अति)

भरतविनय सुनि सवहि प्रसंसी । खीर-नीर-बिबरन-गति' हंसी ॥

दो०—दीनबंधु सुनि बंधु के, यचन दीन छलहान ।

देस-काल-श्रवसरु-सरिस, बोल रामु प्रवीन ॥३१५॥

सात तुम्हारि मोरि परिजन की । चिंता गुरहिं नृपहिं घर बन की ॥

माथे पर गुर सुनि मिथिलेसू । हमहिं तुम्हहिं सपनेहुँ न कलेसू ॥

मोर तुम्हार परमपुरुषारथु । स्वारथु सुजसु धरमु परमारथु ॥

पितुआथसु पालिअ दुहुँ भाई । लोक वेद भल' भूप भलाई ॥

गुर-पितु-मातु-स्यामि-सिख पाले । चलेहु कुमग पग परहिं न खाले ॥

अस विचारि सब लोच दिहाई । पालहु अदध अवाधि भरि जाई ॥

देसु कोसु पुरजन परिवारु । गुरपद-रजहिं लाग छरु भाऊ' ॥

तुम्ह सुनि मातु-सचिव-खिन मानी । पालहु पुहुमि' प्रजा रजधानी ॥

दो०—मुखिआ सुखु सो चाहिय, खान पान कहूँ एक ।

पाले पौपै सकल अंग तुलसी सहित बियेक ॥३१६॥

राज-धरम-लखसु पतनेई । जिमि मन माँह मनोरथ गोई ॥

बंधुप्रबोधु कीन्ह बहु भाँती । बिनु अधार मन तोषु न साँती ॥

भरत-सीलु गुर-सचिव-समाजू । सकुच सनेह-बियस रघुराजू ॥

प्रभु करि कृपा पाँवरी' दीन्ही । सादर भरत सीस धरि लोन्ही ॥

चरमपीठ' करुना निधान के । जनु जुग जामिक' प्रजा प्राण के ॥

संपुट' भरत रानेह—रतन के । आखर जुग जनु जीवजतन' के ॥

कुलकपाट कर कुसल' करम के । विमल-नयन'° सेवा-सु धरम के ॥

भरत मुदित अवलंब लहे तै । अस सुख जस सिय-राम रहे तै ॥

दो०—वांगेउ विद्या प्रनामु करि, राम लिए उर लाइ ।

लोग उचाटे'° अमर पति, कुटिल कुअवसर पाइ ॥३१७॥

१ दृष पानी के शलग करने की गति २ पाठान्तर-दूह ३ बटा बोह

४ धरती ५ सदाई ६ पशुआ ७ टकन ८ रणार्थ ९ वतम १० उज्ज्वल ने

११, उकसावे ।

कुचालि सब कहँ भइ नौकी । अग्रधि आस सम जीवन जी की ॥
 लपन-सिय राम धियोगा । हहरि मरत सहु लोग कुरोगा ॥
 कृपा अत्ररेव^१ सुधारी^२ । बिबुधधारि^३ भइ गुनद* गोहारी^४ ॥
 त भुज भरि भाइ भरत सो । राम-प्रम-रसु कहि न परत सो ॥
 मन बचन उमग अनुरागा । धीर-धुरंधर धीरज त्यागा ॥
 रजलोचन मोचत^५ वारा । देखि दला सुरसभा दुखारी ॥
 गन गुर धुर धीर जनक से । ग्यानअनल मन कसे कनक^६ से ॥
 बिरांचे निरलेप^७ उपाय । पदुमपत्र^८ जिमि जग जलजाये ॥

१०—तेउ बिलोकि रघुवर-भरत-प्रीति अनूप अपार ।
 भए मगन मन तन बचन सहित बिराग बिचार ॥३१८॥

जनक-गुर-गति-मति भोरी । प्राकृत प्रीति कहत बड़ि खोरी ॥
 नत रघुवर-भरत-बियोगू । सुनि कठोर कवि जानिहि लोगू ॥
 सकोच रस अरुथ सुवानी । समउलनेह सुमिरि सकुचानी ॥
 भरतु रघुवर समुक्षाए । पुनि रिपुदवन हरषि हिय लाए ॥
 क साचिव-भरत-रुख पाई । निज निज काज लगे सब जाई ॥
 दारुन दुखु दुहँ समाजा । लगे चलन के साजन साजा ॥
 पद-पदुम वंदि दोड भाई । चले सीस धरि रामरजाई ॥
 तापस बन देव निहारी । सब सनमानि बहोरि बहोरी ॥

—लपनहिं भेंटि प्रनासु करि, सिर धरि सिय-पद-धूरि ।
 चले सप्रम असील सुनि, सकल-सुमंगल-मूरि । ३१९॥
 ज राम नृपहिं सिर नाई । कीन्हि बहुत विधि विदय बड़ाई ॥
 दयावस बड़ दुख पायेउ । सहित समाज काननहिं आयेउ ॥

विगड़ी हुई २ सुधर जाती है ३ देवताओं की धारणा (इच्छा) ४ गुहार, रक्षार्थ से बुलाना ५ छोड़ना ६ सोना ७ माया से रहित ८ कमल के पत्र * गुणद ।

पुर पशु धारिश्च देइ असीसा । कीन्ह धीर धरि गवनु
मुनि महिदेव साधु सनमाने । विदा किए हरि-हर-सम जाने
सासुसर्माप गए दोउ भाई । फिरे बंदि पग आसिप पाई
कौसिक वासुदेव जावाली । परिजन पुरजन सच्चिव सुचार्य
जयाजोगु करि त्रिनय प्रनामा । विदा किए सब साजुज रामा
नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे । सब सनमानि कृपानिधि

दो०—भरत-मातु-पद बंदि प्रभु, सुचि सनेह मिलि भेंटि ।

विदा कीन्ह साजि पालकी, सकुच सोच सब भेंटि ॥३१॥
परिजन मातु पिताहि मिलि सीता । फिरी प्रान-प्रिय-प्रेम-पुनीत
करि प्रनासु भेंटी सब सासू । प्रीति कहत कवि हिय न हुलासू
सुनि लिख अभिमत आसिप पाई । रही सीय दुहुँ प्रीति समीप
रघुपति पट्टु पालकी भँगाई । करि प्रबोधु सब मातु चढ़ाई
बार बार हिलि मिलि दुहुँ भाई । सम सनेह जननी पहुँचाई
साजि बाजि गज वाहन नाना । भूप-भरतदल कीन्ह पयान
हृदय राम सिय लखन समेता । चले जाहि सब लोग अचेता
बसह^१ बाजि गज पनु हिय हारे । चले जाहि परवस मन मा

दो०—गुर-गुरतिय-पद बंदि प्रभु, सीता लपन समेत ।

फिरे हरप-विसराय-सहित, आप परननिकेत ॥ ३२ ॥

विदा कीन्ह सनमानि निपादू । चलेउ हृदय पड़ बिरह विपा
कोल फियात भिरल वनचारी । फेरे फिरे जोहारि जोहारि
प्रभु सिय लपन बैठे बट्टु झाहीं । प्रिय परिजन-वियोग विलखा
भरत-सनेह-झुभाउ सुवानी । प्रिया अजुज सन कहत वखान
प्रीति प्रतीति बचन जन करनी । श्रीमुख^२ राम प्रेमवस वरन
तेहि अवसर खग सृग जल मीना । चित्रकूट चर अचर मलीन

ध विलोकि दसा रघुवर की । करणि सुमन कहि गति घर घर की ॥
प्रनामु करि दीन्ह भरोसो । चले मुदित मन डर न खरो सो ॥

०—सानुज सीयलमेत प्रभु, राजत परनकुटीर ।

भगति ग्यान वैराग्य जसु, सोहत धरे खरीर ॥३२२॥

महिसुर गुर भरत भुआलू । रामधिरइ सबु सानु बिहालू ॥

गुन-ग्राम गुनत मन माहीं । खब चुपचाप चले मग जाहीं ॥

ना उतरि पार सबु भयेऊ । सो वासरु बिनु भोजन गयेऊ ॥

रि देखलरि दूसर जातू । रामसखा सब कीन्ह सुपासू ॥

उतरि गोमती नहाए । चौथे दिवस अयधपुर आए ॥

क रहे पुर बालर खारी । राज काज लब साज सँभारी ॥

पि सचिव गुर भरतहि राजू । तिरहुति चले साजि सब साजू ॥

र-नारि-नर गुर-सिख मानी । बसे सुखेन राम-रजधानी ॥

१०—रामदरस लागि लोग सब, करत नेम उपवास ।

तजि तजि भूपन भोग सुख, जिअत अबधि की आस ॥३२३॥

भव सुसेवक भरत प्रबोधे । निज निज काज पाइ सिख ओधे ॥

सिख दीन्हि बोलि लखु भाई । सौंपी सकल मातुसेवकाई ॥

र बोलि भरत कर जोरि । करि प्रनाम दरबितथ निहारे ॥

नीच कारजु भल पोचू । आयसु देव न करल सँकोचू ॥

जन पुरजन प्रजा बुलाए । समाधानु करि सुबस वसाए ॥

ज गे गुरगेह बहोरी । करि दंडवत कहत कर जोरी ॥

सु होई त रहँई सनेमा ॥ बोले सुनि तन पुलकि ॥ लपेया ॥

भव कहव करव लुरुह जोई । धरमसारु ॥ जग होइहि सोई ॥

१ घवड़ाये हुये २ आराम ३ अच्छी तरह से ४ नियम ५ घोर व्रत के साथ
साधित होकर ६ धर्म का तत्व ।

दो०—सुनि सिख पाइ असील बड़ि गनक^१ वोलि दिनुं साधि
सिंघासन प्रभुपादुका बैठारे निरुपाधि^२ ॥३२॥

राममातु गुरपद खिरु नाई । प्रभु-पद-पीठ-रजायतु पा
नादिगाँव^३ करि परनकुटीरा । कीन्ह निवास धरम-धुर-धीर
जटाजूट खिर मुनिपट धारी । महि खनि कुससाथरी सवार
अरुन बसन वासन व्रत नेमा । करत फठिन रिपिधरम सपे
भूपन बसन भोग सुख भूरी । मन तन वचन तज तितु तू
अवधराजु सुरराजु सिहाई । दसरथ-धन सुनि धनहु^४ लजा
तेहि पुर पलत भरत बिनु रागा^५ । चंचरीक^६ जिमि चंपक^७ बाग
रमाविलासु^८ रामअनुरागी । तजत वमन^९ जिमि जन बड़ माग

दो०—राम-पेम-भाजन भरत बड़े न येहि करतूति ।

चातक हंस सराहिअत टेक विवक विभूति ॥३०॥

देह दिनहुँ दिन दूबरि होई । घटै तेजु बल मुखछवि सा
नित नव राम-पेम पनु पीना^{१०} । बढ़त धरमदनु मन न मला
जिमि जल निघटत लरद प्रकासै । विलासत वेतस^{११} वनज विकासै
सम वम संजय नियम उपासा । नखत भरत द्विय विमल अका
धुव^{१२} दिस्वासु अवधि रागा सी^{१३} । स्वामिसुरति सुरवीथि^{१४} विक
राम-पेम-विधु अचल अदोखा । सहित समाज साह नित चो
भरत-रहनि-समुझनि-करतूती । अति विरति गुन विमल विभू
बरनत सकल सुकवि सकुचार्ही । लेस-गनस-गोरा-गमु ना

१ ज्योतिषी २ निर्विज ३ अयोध्या के निकट कोई स्थान या ४

५ भोग विलास ६ भौरी ७ चम्पा ८ लक्ष्मी सम्बन्धी भोग विलास ९ कै

१० बड़ना ११ वेत बड़ते है १२ कमल प्यतते है १३ एक तारा है १४ पूर्ण

१५ आकाश गंगा ।

श्री०—नित पूजत प्रभुपावँरी, प्रीति न हृदय समाति ।

माँगि माँगि आयसु करत, राजकाज बहु भाँति ॥३२६॥

पुलक गात हिय सिय रघुवीरू । जीह नाम जप लोचन नीरू ॥
 लपन राम सिय कानन बसहीं । भरतु भवन बसि तप तनु कसहीं ॥
 उदिसि समुक्ति कहत लय लोदू । सब विधि भरत सराहन-जोगू ॥
 नि व्रत नेम साधु सकुचार्हीं । देखि दसा मुनिराज लजार्हीं ॥
 (म पुनीत' भरतआचरनू' । मधुर मंजु मुद-अंगल-करनू ॥
 (न कठिन कति-कलुष-कलेसू' । महा-मोह-निसि-दलन दिनेसू' ॥
 प—पुंज—कुंजर—मृग-राजू । समन सकल—संताप—समाजू ॥
 गरंजन' भंजन भवभारू' । रामलनेह ॥ सुधारकसारू ॥

द—सिय-राम-प्रेम-पिपूष-पूरन' होत जनम न भरत को ।

मुनि-मन-अगम जम नियम सम दम बिषम' व्रत आचरत को ॥

दुखदाह दारिद्र दंभ दूषन सुजस मिस अपहरत को ।

कलिकाल तुलसी ले सठन्हि हठि रामसनमुख करत को ॥

श्री०—भरतचरित करि नेसु, तुलसी जो सादर सुनहिं ।

सीय-राम-पद प्रेम, अवसि होइ भव-रस-विरति ॥ ३२७ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने

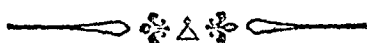
विमलविज्ञानवैराग्य सम्पादनो नाम

द्वितीयः सोपानः समाप्तः ।

१ अत्यन्त पवित्र २ भरत के आचरण ३ कलियुग के पापों और क्लेशों
 ४ सूर्य ५ मत्तों को प्रसन्न करने वाला ६ संसार की कठिनाइयों को नाशक
 ७ राम के प्रेमरूपी अमृत से भरा हुआ ।



गूढार्थ कोश ।



- । अवस्था-१ जाग्रत; २ स्वप्न, ३ सुषुप्ति, ४ तुरीय ।
। अष्टसिद्धि-१ अणिमा, २ महिमा, ३ लघिमा, ४ गरिमा,
प्राप्ति, ५ प्राकाश्य, ६ दृशत्व, ७ वशित्व ।
। आकार-१ जरायुज, २ अंडज, ३ स्वेदज, ४ उद्भिज ।
। आभरण-१ नूपुर, २ चूड़ी, ३ हार, ४ कंकण ५ अंगूठी,
६ बाजूबंद, ७ बेलर, ८ बिरिया, ९ टीका, १० शीशफूल,
११ तागड़ी, १२ कंठश्री ।
। आश्रम-ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, और सन्यास ।
। उपवेद-१ ऋग्वेदका आयुर्वेद, २ यजुर्वेदका धनुर्वेद ३
सामवेद का गान्धर्व, ४ अथर्वण वेद का स्थापत्य ।
। ऋतु-१ शिशिर, २ वसन्त, ३ ग्रीष्म, ४ वर्षा, ५ शरद, ६
हेमन्त
। कल्प-चार युगों की १ चौकड़ी और हजार चौकड़ी का एक कल्प ।
। गुण-रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण ।
। चतुरंगिणी सेना-१ हाथी, २ रथ ३ पैदल, ४ घोड़ा ।
। नीति-१ साम, २ दाम, ३ दंड, ४ भेद ।
। युग-सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग ।
। वर्ग-१ धर्म, २ अर्थ, ३ काम, ४ मोक्ष ।
। रिपु-१ काम, २ क्रोध, ३ लोभ, ४ मोह ।
। वर्ण-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ।
। ताप-ब्राह्म्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक ।
। देव-ब्रह्मा, विष्णु, महेश ।

त्रिविध कर्म-सांचित, प्रारब्ध, क्रियमाण ।

त्रिविध श्रोता-मुक्त, मुमुक्षु, विपयी ।

त्रिविध समीर-शीतल, मन्द, सुगन्ध ।

३ अवस्था-बालक, युवा, वृद्ध ।

३ ईपणां-१ लोकवडाई, २ धनराज्यादि, ३ स्त्रीपुत्र ।

८ दिक्पाल-पूर्व से आदि लेकर इन्द्र, यम, बरुण, कुबेर, अग्नि, राक्षस, वायु, शिव ।

७ द्वीप-जम्बू, शाक, कुश, कौंच, पुष्कर, शालमली, गोमोद ।

ब्राह्मण के नवगुण-१ धृति, २ क्षमा, ३ दम, ४ अस्तेय,

५ शौच, ६ इन्द्रियनिग्रह, ७ ज्ञान, ८ विद्या, ९ सत्य ।

नवखण्ड-इलावृत्ति, रम्यक, हिरण्य, कुरु, हरि, भरत,

केतुमाल, भद्राश्व, किंपुरुष ।

नवनिधि-१ महापद्म, २ पद्म, ३ शंख, ४ मकर, ५ कच्छप,

६ मुकुन्द, कुन्द, ८ नील, ९ खर्व ।

पंचतत्त्व-पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश ।

पंचपवन-प्राण, अपान, उदान, व्यान, समान ।

पंचमहायज्ञ-वेदपाठ, तर्पण, होम, बलिद्वैश्वदेव, अतिथिसत्कार

१८ पुराण-ब्रह्मपुराण, पद्म, विष्णु, शिव, श्रीमद्भागवत,

नारद, मार्कंडेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, लिंग, धाराह,

स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड, ब्रह्मांड ।

भक्त-आर्त्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी, विज्ञान, निवाल ।

भाक्ति ६ प्रकार की है-श्रवण, कीर्त्तन, स्मरण, पादसेवन,

अर्चन, दण्डन, दारय, लस्यभाव, और आत्मनिवेदन ।

मद-जातिमद, कुलमद, युजावस्थामद, रूपमद, विद्यामद

ज्ञानमद, ध्यानमद, धनमद, राज्यमद ।

धौनि-चौरासी लक्ष, इन में से ६ लक्ष जलचर,
२७ लक्ष स्थावर, ११ लक्ष कृमि, १० लक्ष पक्षी, २३ लक्ष
चतुष्पद, ४ लक्ष मनुष्य ।

३ राम-परशुराम, राम, बलराम, ।

१४ लोक-तल, अतल, वितल, सूतल, तलातल, रसातल, पाताल,
भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्गलोक, महर्लोक, जनलोक,
तपःलोक, सत्यलोक ।

४ विद्या १ ब्रह्मज्ञान, २ रसायन, ३ श्रौतकथा, ४ वैद्यक,
५ ज्योतिष, ६ व्याकरण, ७ धनुर्विद्या, ८ जल में तैरना,
९ सांगीत, १० नाटक, ११ अश्वारोहण, १२ कौकशास्त्र,
१३ चोरी, १४ चतुरता, ।

४ वेद-ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम और अथर्वण ।

६ वेदाङ्ग-शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष ।
६ शास्त्र-सांख्य, योग, वेदान्त, मीमांसा, न्याय, वैशेषिक,
१६ शृंगार-१ अंगशुचि, २ मंजन, ३ दिव्यवस्त्र, ४ महाबर,
५ केल संभारना, ६ मांग में सिन्दूर, ७, ठोड़ी पर तिल,
८ मांथे में बिन्दी, ९ मेहदी १० अरगजा लगाना ११
भूषण, १२ सुगन्ध, १३ मुखराग, १४ दन्तराग, १५ अधर-
राग, १६ काजल ।

६ रस-कटु, तीखा, अम्ल, मधुर, कपाय, लवण,
सप्तऋषि-वशिष्ट अग्नि; कश्यप, विश्वामित्र, भरद्वाज,
जमदग्नि, गौतम ।

सप्तावरण १ जल, २ पवन, ३ अग्नि, ४ आकाश, ५ अहं
कार, ६ सहस्रत्व, ७ प्रकृति ।

रचना—प्रबोध ।

शिक्षकों के लिये,

रचना (Composition) अर्थात् वाक्य-रचना तथा
निबन्ध लेखनादि—

पढ़ाने के लिये सिर्फ यही एक पुस्तक युक्त प्रदेशीय टैक्स्ट-बुक
कमिटी ने चिट्ठी नं० जी० $\frac{1354}{1112}$ ता० १६-७-१८ के अनुसार मंजूर
की है।

और हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, पंजाब की

टैक्स्टबुक कमेटियों से भी स्वीकृत है।

इसी से जान सकते हैं पुस्तक कितनी उपादेय है।

प्रबोध के पहिले अध्याय में—शब्दभेद, शब्दार्थ, अर्थ वैपम्य,
अर्थभिन्नता, शब्द प्रयोगों का वर्णन है।

दूसरे में—वाक्य-आक्रांक्षा, योग्यता, आशक्ति-वाक्यांश वाक्य
खंड, वाक्य भेद-सरल, जटिल, योगिक-वाक्य-योजना, पद-योजना, वाक्यों
का फैलाव, पदपरिचय, पदों की भिन्न २ अवस्था, वाक्य-विश्लेषण, भाषा
कहावत, मुहाविरा, रस, गुण, दोष आदि रचना सम्बन्धी बातों का वर्णन है।

तीसरे में—पहले रचना सम्बन्धी प्रारंभिक बातें अर्थात् रचना का
उद्देश्य, प्रारंभिक-अभ्यास, सासुश्री, प्रबंध-भेद-वर्णक, कथात्मक, आलो-
चनात्मक और व्याख्यात्मक, ढांचा, समाप्ति, विराम-चिह्न, हर
प्रकार के प्रबंधों का विषय विभाग करना, क्रम देना, तथा प्रभावशाली
और संचित भाषा में वाक्य रचना करने का नियम दिखाया है।

और क्रम और विभाग सहित देशी कारीगरी, और उसकी उन्नति
के उपाय आदि नमूने के कोई १० विषयों पर प्रबंध दिये हैं। (पृष्ठ
संख्या १६० मूल्य ॥)

इस पुस्तक से यही नहीं कि पुस्तक में दिये हुए विषयों पर ही लेख लिख
सकें बरन हर एक नये विषय पर क्रम के विभाग करके लेख लिखना आता है।

